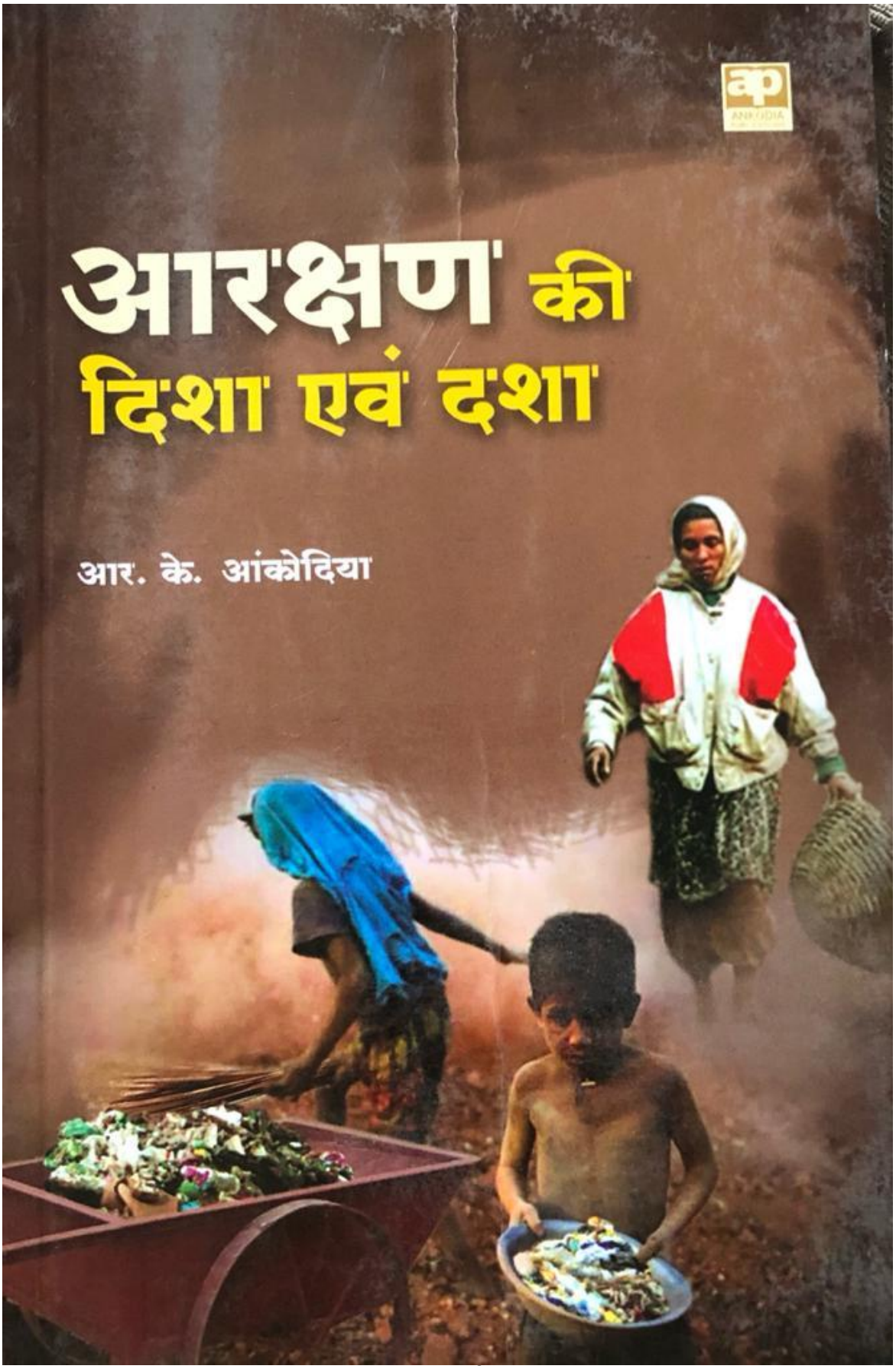
आरक्षण की
दिशा एवं दशा
आर. के. आंकोदिया

आरक्षण की दिशा एवं दशा

आर. के. आंकोदिया

एम. ए., एल. एल. बी
जिला एवं सत्र न्यायाधीश (से. नि.)
पूर्व सदस्य, राज्य मानवाधिकार आयोग, राजस्थान

आंकोदिया पब्लिकेशन्स

जयपुर, राजस्थान

यह पुस्तक भारत में आरक्षण की मूल भावना, संवैधानिक परिप्रेक्ष्य, आरक्षित वर्ग की दशा तथा आरक्षण की दशा व दिशा के गहन चिन्तन पर आधारित है। यह पुस्तक इस विषय की गहनता से पड़ताल करती है कि स्वतंत्रता के छः दशक पश्चात भी आरक्षित वर्ग की आर्थिक, सामाजिक व धार्मिक स्थिति में सुधार क्यों नहीं आया है। क्या आरक्षण की नीति में कोई खोट है या इसके लागू करने में अनारक्षित तबके की नीयत में कहीं खोट है? साथ ही भविष्य में आरक्षण की क्या नियति रहने वाली है, यह भी इस पुस्तक के विषय वस्तु का महत्त्वपूर्ण अंग है। इस पुस्तक के विषय वस्तु से सम्बन्धित यदि किसी को कोई शंका या आपत्ति हो तो लेखक उन्हें चर्चा के लिए प्रोत्साहित करते हैं।

किसी भी प्रकार के विवाद के लिए न्यायक्षेत्र जयपुर होगा।

इस पुस्तक को सम्पूर्ण रूप से या इसके किसी भाग को इलैक्ट्रोनिक, यान्त्रिक, फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग अथवा सूचना माध्यम के किसी भी प्रकार में मुद्रित करना, प्रकाशित करना या पुनर्उत्पादित करना वर्जित है। ऐसा करने से पूर्व लेखक तथा प्रकाशक से लिखित सहमति प्राप्त करना आवश्यक होगा।

प्रथम संपादनः 2014

© लेखक

मूल्य – रुपये 395/–

प्रकाशकः

आंकोदिया पब्लिकेशन्स

7, हनुमान नगर विस्तार,
विष्णु मार्ग, सिरसी रोड़, जयपुर – 302012 (राजस्थान)

आरक्षण की दिशा एवं दशा

प्राक्कथन

भारतीय जन मानस में ''आरक्षण'' शब्द विचार मंथन के महत्वपूर्ण विषयों में सुमार हो गया है। मेरे विचार में यह शब्द शुद्ध रूप से भारत देश की ही उपज है जिसका उद्‌भव सनातन हिन्दू धर्म के सामाजिक ताने–बाने में निहित है। कालान्तर में इस शब्द को हिन्दू धर्मावलम्बियों की जीवन शैली का स्थायी अंग बना दिया गया जो परम्परा के रूप में सदियों से अनवरत रूप से जारी है। सतही तौर पर आमजन इसे भारतीय लोकतंत्र की देन मानते हैं और भारतीय संविधान को इसका जनक व संरक्षक करार देते हैं। संविधान निर्माताओं को लोकतंत्र के स्वाभाविक मूल मंत्र– ''जनता का राज, जनता के लिए एवं जनता द्वारा'' को अमली जामा पहनाने के लिए समाज के कुछ वर्गों को विशेष संरक्षण प्रदान करना पड़ा जिसे कालान्तर में ''आरक्षण'' की संज्ञा दी गई है। इन विशेष वर्गों की भारतीय संविधान द्वारा अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में पहचान की गई है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में इन आरक्षित वर्गों के उद्‌भव व विकास पर चर्चा करना आवश्यक है। साथ ही अनारक्षित वर्गों के आरक्षण के प्रति व्यवहार व नीयत की समीक्षा करना भी आवश्यक है ताकि ''आरक्षण'' की मूल भावना के सापेक्ष यह पता लगाया जा सके कि हम इसको सही रूप में लागू करने में कितने सफल और कितने विफल रहे हैं। यदि आज भी आरक्षित वर्ग की दुर्दशा देश में है तो इसके पीछे क्या सामाजिक व राजनीतिक कारक रहे हैं, इस पुस्तक के माध्यम से कुछ ऐसे ही प्रश्नों को उठाया गया है तथा यथासम्भव समाधान भी सुझाए गए हैं।

–आर. के. आंकोदिया

विषयवस्तु

प्राक्कथन

1. संवैधानिक आरक्षण से तात्पर्य 6—26

1. आरक्षण से तात्पर्य 2. भारत में आरक्षण की आधारशिला 3. वर्ण आधारित आरक्षण का प्रादुर्भाव 4. आरक्षण की निकृष्ट एवं क्रूर व्यवस्था—जन्मानुसार आरक्षण के षड़यन्त्र की बुनियाद 5. वर्ण व जाति आरक्षण को स्थायी बनाने की साजिश में राजशक्ति का दुरुपयोग 6. शूद्रों में विभाजन 7. बुद्धकाल व महावीरकाल में ब्राह्मणों की दुर्गति और उनका पुनरुत्थान 8. हिन्दू समाज—सुधारकों की ब्राह्मणों के हाथों दुर्गति

2. **आरक्षण की जन्म आधारित धार्मिक समाज व्यवस्था के विरुद्ध सशक्त प्रयास** 27—63

1. आरक्षण की जन्म आधारित धार्मिक समाज व्यवस्था के विरुद्ध सशक्त प्रयास 2. आत्मसम्मान व समान नागरिकता के लिए संघर्ष 3. समान नागरिकता 4. समान अधिकारों का अबाध उपयोग 5. भेदभाव के विरुद्ध संरक्षण 6. विधान मण्डलों में समुचित प्रतिनिधित्त्व 7. नौकरियों में यथोचित प्रतिनिधित्त्व 8. पक्षपा0त अथवा हितों की उपेक्षा को दूर करना 9. विशेष विभागीय सुरक्षा 10. दलित वर्ग और मंत्रीमण्डल 11. ब्रिटिश सरकार का 1932 का साम्प्रदायिक निर्णय 12. पूना पैक्ट 13. पूना पैक्ट से अस्प्रश्यों को संभावित लाभ 14. अनुसूचित जातियों की राजनीतिक माँगें 15. सरकारी सेवाएँ 16. शिक्षा के लिए प्रावधान 17. अनुसूचित जातियों के लिए पृथक बस्तियाँ 18. हिन्दू समाज व्यवस्था में शासित व शोषित की स्थिति व भविष्य के परिणाम

3. **संवैधानिक आरक्षण की बुनियाद** 64—84

1. संविधान सभा का गठन 2. संविधान के निर्माण में बाबा साहब अम्बेडकर की भीूमिका 3. भारतीय संविधान की विशेषता 4. नागरिकों के मौलिक अधिकार 5. राज्य की नीति के निदेशक तत्त्व

4. **सरकारी सेवा व पदों में आरक्षण** 85—116

1. संविधान सभा में सरकारी सेवा व पदों में आरक्षण का मुद्दा, 2. लोक नियोजन के विषय में अवसर की समानता, 3. नियुक्ति के अधिकार पर कब्जा, 4. चयन प्रक्रिया में दक्षता व तकनीकि योग्यता का प्रभाव 5. सरकारी शिक्षा को अनुपयोगी व रोजगारहीन बनाने की साजिश, 6. विशाल पिछड़ा वर्ग के शैक्षणिक व सामाजिक पिछड़ेपन को बनाए रखकर इनके एकीकरण व सरकारी सेवा में प्रतिनिधित्त्वविहीन रखने की साजिश, 7. मण्डल कमीशन 8. सरकारी सेवा के संवैधानिक आरक्षण पर न्यायालय का असंवैधानिक दखल, 9. कार्यपालिका की आरक्षित वर्ग के प्रति दुर्भावना की मिशाल, 10. आरक्षित अभिजात्य वर्ग की विमुखता, 11. आरक्षण के क्रियान्वयन में कार्यपालिका की कारगुजारी।

5. **राजनैतिक आरक्षण व आरक्षित वर्ग की त्रासदी** 117—154

1. राजनैतिक आरक्षण, 2. पूना पैक्ट के दुष्परिणाम, 3. कांसीराम एवं पिछड़े वर्ग का राजनैतिक समीकरण, 4. पिछड़ों एवं अतिपिछड़ों की राजनैतिक त्रासदी, 5. दलित उत्पीड़न की कुछ घटनाओं का विवरण, 6. कैसे करें तरक्की, 7. सामाजिक भेदभाव व आर्थिक असमानता नक्सलवाद की जनक, 8. गुलाम बनाने की चाल, 9. कांसीराम जी के अनुसार, 10. अर्थहीन लोकतन्त्र

6. **संदर्भ ग्रन्थ सूची** 155

****

1.

संवैधानिक आरक्षण से तात्पर्य

भारतीय संविधान के परिप्रेक्ष्य में ''आरक्षण'' से तात्पर्य समाज के उन वर्गों व जातियों को विशेष रियायत प्रदान करना है जो कतिपय कारणों से उत्पन्न भेदभाव, गैर बराबरी व धार्मिक निर्योग्यताओं के कारण शोषण, उत्पीड़न व अन्याय का शिकार रहे हैं तथा जिनको अवसर की समानता के अधिकार से न केवल वंचित किया वरन् विकास के मूलभूत साधनों जैसे शिक्षा, सम्पत्ति व आत्मरक्षा के अधिकार से भी धर्म के नाम पर महरूम कर दिया गया तथा यह हजारों सालों से भारत में पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहा।

भारत में आरक्षण की आधारशिला :–

विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों व सभ्यताओं में सुमार भारतीय संस्कृति व सभ्यता में समाज के शोषित–पीड़ित वर्गों के प्रति आई कुछ भेदभावपूर्ण विसंगतियों का एक लम्बा इतिहास रहा है तथा विषय की प्रासंगिकता के लिए इसका संक्षिप्त विवरण समीचीन प्रतीत होता है। आज से लगभग 5 हजार वर्ष पूर्व आर्यों के आगमन के पहले इस देश में एक विकसित समाज व्यवस्था व सभ्यता थी। राजसत्ता का भी अस्तित्व था। ऋगवेद के अवलोकन से इस बात की पुष्टि होती है कि आर्यों का यहां के मूल शासकों से लम्बा संघर्ष चला था। आर्यों के प्रथम राजा इन्द्र द्वारा यहां के मूल निवासियों जिन्हें अनार्य, दैत्य या असुर कहा गया, के शहरों को एवं राज्यों को ध्वस्त किया गया और आर्य संस्कृति की स्थापना की जिसका विस्तृत विवरण **ऋगवेद 1 सूक्त 53 श्लोक 59, मंडल 4, सूक्त 28 श्लोक 3, मंडल 7, सूक्त 99 श्लोक 5 मंडल 10, सूक्त 49 श्लोक 3 मंडल 10, सूक्त 152 श्लोक 1,4,12 सामवेद के अध्याय 3 खण्ड 4 श्लोक 6, यजुर्वेद के अध्याय 18 श्लोक 68 अथर्ववेद के काण्ड 19 सूक्त 29 श्लोक 5** में किया गया है।

वर्ण आधारित आरक्षण का प्रादुर्भाव

आर्यों के ही आदि ईस्ट मनु ने समाज व्यवस्था का एक ढांचा तैयार किया जिसमें पुरूष वर्ग को सामाजिक दायित्त्व के आधार पर विभिन्न वर्णों में विभाजित किया। एक वर्ग जिसका काम केवल विद्या अध्ययन एवं विद्या पढ़ाना था उन्हें ब्राह्मण वर्ण से सम्बोधित किया गया। दूसरा

वर्ग जिसका काम समाज व देश की रक्षा करना था क्षत्रिय वर्ण कहलाया। तीसरा वर्ग जिसका काम समाज की जरूरतों के अनुसार उत्पादित सामान का वितरण करना व व्यापार करना था उन्हें वैश्य वर्ण से सम्बोधित किया। चौथे वर्ग के लोगों का काम उपरोक्त तीनों वर्णों के लोगों की सेवा करना तय किया गया, उन्हें शूद्र वर्ण से सम्बोधित किया गया। आर्यों ने यहां के सभी मूल निवासियों को शूद्र वर्ण में डाला।

आर्य ब्राह्मणों ने चारों वर्णों (1) ब्राह्मण (2) क्षत्रिय (3) वैश्य एवं (4) शूद्र की उत्पत्ति धर्मशास्त्रों के अनुसार ईश्वर द्वारा शरीर के अलग–अलग हिस्सों से होना बतलाया अर्थात् प्रजापति, ब्रह्मा व कृष्ण ने ब्राह्मण को मुख से, क्षत्रिय को भुजा से, वैश्य को जंघा से तथा शूद्र को पैरों से पैदा किया जाना जाहिर किया। मुँह को शरीर का सर्वश्रेष्ठ, भुजा को बलयुक्त, जंघा को अधम व पैरों को शरीर का अपवित्र व नीच हिस्सा करार दिया।

ऋग्वेद के मंडल 10 सूक्त 90 मंत्र 11 व 12 में वर्ण–व्यवस्था का उल्लेख है, इन्हीं दो मंत्रों ने वर्ण–व्यवस्था रूपी विशाल भवन की नींव रखी जिसका यजुर्वेद के अध्याय 31 मंत्र 11 तथा अथर्ववेद के काण्ड 19 सूक्त 6 मंत्र 6 में भी विवरण है।

ऋग्वेद, मण्डल 10 सूक्त 90 मंत्र 11 तथा 12

यंत्पुरूषं व्यदुधुः कतिधा व्यकल्पयन्।

मुख किमस्य को वाहू कार्वूरू पादाउच्येते।।1।।

ब्रह्मणोऽस्य मुखमासीद्वाहू राजन्यः कृतः।

उरूतदस्य यद्वैश्यः पद्भयां शूद्रोऽजायत।।2।।

अनुवाद – प्रजापति ने मानव–समाज रूपी जिस पुरूष का विधान किया, उसकी कल्पना कितने प्रकार की हुई ? इस पुरूष का मुख क्या है ? इसके दोनों बाहु कौन हैं ? कौन इसकी दोनों जाँघें है तथा इसके दोनों पैर कौन हैं।।1।। इन कतिपय प्रश्नों के उत्तर इसके आगे के मंत्र में मिलते हैं। इस पुरूष का मुँह ब्राह्मण, बाहु क्षत्रिय है, जाँघें वैश्य हैं और पैर शूद्र हैं।।2।।

वेदों में प्रजापति द्वारा मानव समाज रूपी ढाँचा जो तैयार किया गया उसमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र के कर्त्तव्य व अधिकार अथवा सामाजिक दायित्व निर्धारित नहीं हैं और न ही वैदिक काल के प्रारम्भ में समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र के रूप में अलग–अलग समूहों में विभाजित था। ऋग्वेद के ही मंडल 9 सूक्त 112 श्लोक 3 में कहा गया है–

''हे सोम! मैं मंत्रकर्त्ता ऋषि हूँ। मेरे पिता व पुत्र चिकित्सक हैं मेरी माता पत्थर पर अनाज पीसती है जिस प्रकार गोएँ चारे के लिए नाना चारागाहों में फिरा करती हैं उसी प्रकार हम लोग

भी नाना व्यवसायों के द्वारा धनोपार्जन के लिए तुम्हारा पूजन करते हैं। तुम इन्द्र के लिए प्रवाहित होओ।''

कर्म व योग्यता के आधार पर व्यक्ति का वर्ण निर्धारित होता था तथा कर्म के अनुसार वर्ण परिवर्तनीय होता था। एक ही पिता की संतान विभिन्न वर्णों में योग्यता के अनुसार कार्यरत होती थीं। इस तथ्य की पुष्टि का हरिवंश पुराण के अध्याय 32 श्लोक 40 में विवरण निम्न प्रकार है –

वत्सस्य वत्सभूमिस्तु भार्गभूमिस्तु भार्गवात्।

एते त्वश्चिरसः पुत्रा जाता वंशेऽथ भार्गवे।

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्च भरतर्षभ।।

अनुवाद – वत्स के पुत्र वत्सभूमि और भार्गव के भार्गभूमि हुए । भृगु–वंश में उत्पन्न ये अंगिरा के पुत्र ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र–चारों वर्ण के वंश–प्रवर्त्तक हुए।

विष्णु रहस्य पुराण 4–8–1 में विवरण निम्न प्रकार है–

पुत्रो गृत्समदस्यादि शुनको यस्य शौनकः

ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शुद्रास्तथैव च।

एतस्य वंशे संभूता विचित्रा कर्यभिर्द्विज।।

अनुवाद – गृत्समद के पुत्र शुनक और शुनक के पुत्र सौनक हुए जिनके वंश में अपने–अपने गुणकर्मानुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र उत्पन्न हुए।

इस प्रकार वर्ण का निर्धारण योग्यता व कर्म से ही प्राचीनकाल में होता था और आपस में कोई रागद्वेष भी नहीं था। वर्ण का पता व्यक्ति की आकृति देखकर नहीं लगाया जा सकता था। व्यक्ति के बारे में जानकारी प्राप्त होने पर ही उसके वर्ण का पता चलता था। वर्ण और जाति में अन्तर है। जाति का पता शारीरिक बनावट व आकृति देखकर ही लग जाता है, जैसे–मनुष्य, गाय, घोड़ा, बन्दर, हाथी, रेंगने वालों में साँप, मगर आदि इनको देखने से ही इनकी जाति का पता चल जाता है। हिन्दू वर्ण–व्यवस्था ने आगे जाकर जो जाति का रूप लिया, वह प्राकृतिक व वैज्ञानिक दोनों ही तरीके से गलत है।

गौतम ऋषि के न्याय अ.2, अहि–20 सूत्र 71 के अनुसार

''समानः प्रस्वात्मिका जाति''

अर्थात् जिन प्राणियों की जनन प्रक्रिया एक–सी होती है, वे सजाति कहलाते हैं। इसलिए सभी मनुष्यों की एक जाति है लेकिन सनातन हिन्दू धर्म में, जन्म के आधार पर निर्धारित दायित्वों,

बंधनों, निर्योग्यताओं तथा मान–सम्मान व सुविधा के आधार पर विभाजित व्यक्तियों के समूह को, जाति का रूप दे दिया गया।

ऋग्वेद के मंडल 10 सूक्त 90 के श्लोक 11–12 के अनुसार वर्ण को ईश्वरकृत ठहराया गया है। मनुस्मृति के अध्याय एक श्लोक 31 एवं महाभारत के शांति पर्व में इसका अनुमोदन किया गया है जो निम्न प्रकार है।

मनुस्मृति अध्याय 1 श्लोक 31 के अनुसार –

लोकानां तु विवृद्धयर्थ मुखबाहुरूपादतः।

ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं च निरवर्त्तयत।।

अनुवाद– ब्रह्मा ने लोकों की वृद्धि के निमित्त, मुख, बाहु, उरू और चरणों से क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र को उत्पन्न किया।

महाभारत शांति पर्व के अनुसार –

ततः कृष्णो महाभागः पुनरेव युधिष्ठिरः।

ब्राह्मणानां शतं श्रेष्ठं मुखादेवासृजत्प्रभुः।।1।।

बाहुभ्यां क्षत्रियशतं वैश्यानामूरूतः शतम्।

पद्भ्यां शुद्रशतं चैव केशवो भरर्षभ।।2।।

अनुवाद – हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ युधिष्ठिर! फिर महाभाग कृष्ण ने मुख से सौ श्रेष्ठ ब्राह्मणों को, दोनो बाहुओं से सौ क्षत्रियों को, दोनों जंघाओं से सौ वैश्यों को तथा दोनों चरणों से सौ शूद्रों को उत्पन्न किया।

ऋग्वेद में वर्णों की उत्पत्ति प्रजापति से, मनुस्मृति में ब्रह्मा से तथा महाभारत के शान्ति पर्व में चारों वर्णों की उत्पत्ति कृष्ण द्वारा किया जाना बतलाया है। उत्पत्ति का तरीका भी तीनों धर्मशास्त्रों में एक सा ही है। ब्राह्मण मुख से, क्षत्रिय भुजाओं से , वैश्य जांघों से तथा शूद्र पैरों से उत्पन्न हुए हैं। चारों ही वर्णों के लोग मानव हैं। पति व पत्नी के आपसी संसर्ग के बिना मनुष्य का जन्म होना असम्भव है। मानव का जन्म औरत के गर्भ से होता है। पुरुष बच्चे पैदा नहीं करता। प्रजापति, ब्रह्मा एवं कृष्ण तीनों ही पुरुष रूप में है। स्त्री के रूप में इनमें से कोई भी नहीं है। इन्होनें स्त्रियों के संसर्ग से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र को पैदा किया हो, ऐसा भी उल्लेख इन धर्मशास्त्रों में नहीं है। प्रजापति, ब्रह्मा व कृष्ण तीनों के मुँह तो है मुंह में खाना खाने के लिए भोजन नली है। हो सकता है कि इन तीनों ने उल्टी करके (By Vomiting) ब्राह्मण को पैदा कर दिया हो। लेकिन भुजाओं, जांघों, एवं पैरों में कोई छिद्र भी नहीं है। क्षत्रिय, वैश्य एवं

शूद्र इनकी बाँहों, जांघों एवं पैरों से कैसे निकले होगें ? इसका भी जिक्र इन तीनों ही धर्मशास्त्रों में नहीं है। प्रत्येक के दो भुजाएँ, दो जांघ व दो पैर हैं उनमें से किस तरफ की बाँह, जांघ व पैर से ये सनातनी हिन्दू वर्ण के पुरूष निकले, इस बात का भी खुलासा इन तीनों ही धर्मग्रन्थों में नहीं किया है। एक और स्वाभाविक आशंका यह उत्पन्न होती है कि ये चारों ही वर्ण के लोग किस उम्र में पैदा हुए होगें ? क्या जन्म के समय ये बच्चे थे अथवा जवान या बूढ़े ? महाभारत के शान्तिपर्व में तो एक कमाल और दिखा दिया कि कृष्ण ने एक बार में मुँह से एक सौ ब्राह्मणों को, भुजाओं से एक सौ क्षत्रियों को, जांघों से एक सौ वैश्यों को व पैरों से एक सौ शूद्रों को एक साथ ही पैदा कर दिया। महाभारत के रचनाकार ने सोचा होगा कि एक–एक प्राणी पैदा करने का कौन झंझट पाले एक साथ सौ–सौ के जन्म होना दिखा दो ताकि द्वापर युग में ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों व शूद्रों की जो आबादी बढ़ी है उस अधिक जनसंख्या को उत्पन्न करना तर्कसंगत ठहराया जा सके। इन धर्मशास्त्रों में यह भी उल्लेखित नहीं है कि बाद में इनके पैदा होने का तरीका क्यों बदला गया ? क्योंकि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र पति–पत्नी के संसर्ग के फलस्वरूप अति छोटे बालक के रूप में पैदा होते हुए हम देख ही रहे हैं।

यह शाश्वत सत्य है कि मानव की उत्पत्ति बालक के रूप में स्त्री–पुरूष के आपसी संसर्ग के परिणाम स्वरूप स्त्री के गर्भ से होती है। यदि आर्य ब्राह्मण पुरूष की उत्पत्ति एक ही श्रोत से अर्थात् माँ के गर्भ से होना बतलाते, तो क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र, ब्राह्मण को कभी भी श्रेष्ठ नहीं मानते और ऐसी स्थिति में श्रेष्ठता का मापदंड योग्यता व दक्षता होती।

मनु स्मृति के अध्याय 2 श्लोक 31–32 के अनुसार नामकरण भी इसी प्रकार किया गया। ब्राह्मण का नाम श्रेष्ठता लिए, क्षत्रिय का नाम बलयुक्त, वैश्य का नाम सम्पन्नता लिए हुए तथा शूद्र का नाम हेयता का सूचक तय किया ताकि नाम बतलाने मात्र से ही व्यक्ति के वर्ण की पहचान हो सके और नाम व कर्म के अनुसार व्यक्ति आचरण तथा व्यवहार करने की आदत डाल लेवे।

मनु ने ब्राह्मण को श्रेष्ठ ठहराने के लिए नाम के आधार पर उसकी अलग पहचान बनाने की व्यवस्था की है जिसका विवरण मनुस्मृति के अध्याय 2 श्लोक 31 एवं 32 में निम्न प्रकार है–

मंगल्यं ब्राह्मणस्य स्यात्क्षत्रियस्य बलान्वितम्।

वैश्यस्य धनसंयुक्तं शूद्रस्य तु जुगुप्सितम्।।31।।

अनुवाद– ब्राह्मण का नाम मंगल सूचक शब्द वाला, क्षत्रिय का बल सूचक शब्द वाला, वैश्य का धनसूचक शब्द वाला तथा शूद्र का निन्दा सूचक शब्द वाला नामकरण करना चाहिए।

शर्मवद्ब्राह्मणस्य स्याद्राज्ञो रक्षासमन्वितम्।

वैश्यस्य पुष्टिसयुंक्तं शूद्रस्य प्रेष्यसंयुतम्।।32।।

अनुवाद–ब्राह्मण का नाम 'शर्मा' शब्द से युक्त, क्षत्रिय रक्षायुक्त, वैश्य का पुष्टियुक्त तथा शूद्र का नाम प्रेष्य (दासता) सूचक उपनाम (उपाधि) वाला होना चाहिए।

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य को यज्ञोपवीत (जनेऊ) संस्कार के जरिये अलग समूह बनाकर शूद्रों से उन्हें अलग किया गया। शूद्र के अलावा बाकी द्विज कहलाये।

प्रत्येक वर्ण के लोगों के क्या कार्य या व्यवसाय होगें ? इसका निर्धारण भी ईश्वर से ही करवाया गया। ब्रह्मा, विष्णु, कृष्ण आदि ईश्वर व ईश्वर के अवतारों के माध्यम से ब्राह्मण का काम पढ़ना, पढ़ाना, धर्म का ज्ञान प्राप्त करना, दान लेना, धार्मिक अनुष्ठान करना, क्षत्रिय का काम समाज व देश की रक्षा करना, ब्राह्मण को दान देना, धार्मिक अनुष्ठान कराना, वैश्य का काम व्यवसाय व व्यापार करना तथा ब्राह्मण को दान दक्षिणा व आर्थिक सहयोग प्रदान करना व शूद्र का काम तीनों वर्णों विशेषकर ब्राह्मण की सेवा करना तय करवाये।

ब्राह्मण

मनुस्मृति के अध्याय 1 श्लोक 88 में ब्राह्मण का काम पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, दान देना तय किया है। यह सारा काम बिना मेहनत का है। कोई शारीरिक श्रम इन कामों में नहीं है जो दान देने वाली बात कही है उसका तात्पर्य विद्यादान से है। किसी को कोई नकद अथवा वस्तु के रूप में भेंट करने से नहीं है।

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा।

दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्।।

अनुवाद – ''पढ़ाना, पढ़ना, यज्ञ करना, यज्ञ कराना, दान देना और लेना ये कार्य ब्राह्मणों के लिए तय किये।''

क्षत्रिय

वर्ण–व्यवस्था में क्षत्रिय दूसरे पायदान पर आता है जिसका जन्म प्रजापति, ब्रह्मा एवं कृष्ण की भुजा से होना अंकित किया है जो शरीर का पवित्र हिस्सा है। मनुस्मृति के अध्याय एक श्लोक 89 के अनुसार जिसका कार्य प्रजा की सेवा करना, दान देना, यज्ञ करना, अध्ययन करना, विषयों में आसक्ति नहीं रखना आदि है। जो धर्म की रक्षा करने को बाध्य है जिसे ब्राह्मण के मान–सम्मान का ध्यान रखना है। प्रजा की रक्षा से तात्पर्य व्यवहार में केवल ब्राह्मण के हितों की ही रक्षा करनी है। जो न केवल ब्राह्मण को स्वयं पूज्य मानेगा बल्कि बाकी वर्णों से भी ब्राह्मणों की पूजा करवाना सुनिश्चित करेगा।

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।

विषयेष्वप्रसक्ति क्षत्रियस्य समासतः।।89।।

अनुवाद – ''प्रजा की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, अध्ययन करना, विषयों में आसक्ति न रखना संक्षेप में यह कार्य क्षत्रियों के लिए बनाये गये।''

वैश्य

वर्ण–व्यवस्था में तीसरे पायदान पर वैश्य आते हैं जिनकी उत्पत्ति वेदों के अनुसार प्रजापति, मनुस्मृति के अनुसार ब्रह्मा व महाभारत के शान्ति पर्व के अनुसार कृष्ण की जंघा से हुई है। मनुस्मृति में वैश्य के लिए पशुओं की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, अध्ययन करना, व्यापार करना, ब्याज लेने का काम करना और खेती करना ये कार्य निर्धारित किये गये है। मनुस्मृति के अध्याय एक श्लोक 90 में जिसका विवरण निम्न प्रकार है –

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।

वाणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च।।90।।

अनुवाद – ''पशुओं की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, अध्ययन करना, व्यापार करना, ब्याज लेने का काम करना, और खेती करना ये कार्य वैश्यों के लिए बनाये गये हैं।''

भगवद्गीता के अध्याय 18 श्लोक 44 में भी गोपालन, क्रय–विक्रय, सत्य व्यवहार वैश्य के काम बतलाये है।

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम।

परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्।।44।।

मनुस्मृति में वैश्य को नीच योनि में पैदा होने वाला प्राणी माना है जो न तो सम्मान का पात्र है और न ही मोक्ष का हकदार है। वैश्य को अपवित्र करार दिया है। जिस प्रकार मल (टट्टी) दुर्गंध युक्त है वैश्य भी उसी प्रकार अधम है। मनुस्मृति के अध्याय 5 श्लोक 132 में जिसका विवरण निम्न प्रकार है।

ऊर्ध्वनाभेर्यानि खानि तानि मेध्यानि सर्वशः।

यान्यधस्तान्येमेध्यानि देहाच्चैव मलाश्च्युताः।।

अनुवाद– ''जो इन्द्रियाँ नाभि के ऊपर है, वे सब पवित्र हैं, वैश्य तथा देह से निकले हुए मल अपवित्र हैं।''

शूद्र

वर्ण–व्यवस्था में शूद्र अन्तिम पायदान पर है। शूद्र के लिए केवल एक मात्र कार्य तीनों वर्णों, विशेषकर ब्राह्मण की ही सेवा करना है वह भी बिना पारिश्रमिक के। मनुस्मृति के अध्याय–1, श्लोक–91 के अनुसार शूद्र को चुपचाप तीनों वर्णों की सेवा करते रहना है–

एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्।

एतेषामेव वर्णानां शुश्रुषामनसूयया।।91।।

अनुवाद – ''ब्रह्मा ने इन सभी वर्णों की ईर्ष्याभाव से रहित होकर सेवा करने का ही एक मुख्य कार्य शूद्रों के लिए बनाया।''

हिन्दी व्याख्या – ब्रह्मा द्वारा ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों के लिए बनाए गए कर्मों का वर्णन करने के बाद भृगु मुनि उस ब्रह्मा के द्वारा ही बनाए ईर्ष्याभाव से रहित होकर सभी वर्णों के सेवाकार्य के बारे में जानकारी कराते हैं। सभी वर्णों की सेवा करना ही शूद्रों का मुख्य कार्य हैं।

भगवद्गीता के अध्याय 18 श्लोक 44 में शूद्रों का काम ऊपर के तीनों वर्णों की सेवा करना है। मनुस्मृति में ब्रह्मा ने अध्याय 1 श्लोक 91 में शूद्र का काम तीनों वर्णों की सेवा करना तय किया है। कृष्ण ने गीता में ब्रह्मा के ही आदेश की पुष्टि की है।

मनुस्मृति में शूद्र को ताजा भोजन खाने की मनाही की गई है। वह ब्राह्मण का दिया हुआ झूठा भोजन खावे और पुराने वस्त्र जो उसे पहनने के लिए दिये जावें वही पहने। नये वस्त्र पहनने पर भी प्रतिबंध लगाया गया है। जिस धर्म में मानव की ऐसी दशा है उसे सनातन हिन्दुओं ने विश्व का सर्वश्रेष्ठ धर्म माना है। मनुस्मृति के अध्याय 10 श्लोक 125 एवं अध्याय 5 श्लोक 140 का विवरण निम्न प्रकार है–

उच्छिष्टमन्नं दातव्यं जीर्णानिवसनानि च।

पुलकाश्चैव धान्यानां जीर्णाश्चैव परिच्छदः।।10–125।।

अनुवाद – ''शूद्र को भोजन के लिए झूठा अन्न, पहनने के लिए पुराने वस्त्र तथा बिछाने के लिए धान का पुआल एवं पुराने तोशक आदि देना चाहिए।''

आरक्षण की निकृष्ट एवं क्रूर व्यवस्था

वर्ण आधारित आरक्षण की सामाजिक व्यवस्था को कठोरता से पालना सुनिश्चित करने व ब्राह्मण की श्रेष्ठता व महत्ता को स्थायी बनाने के लिए कठोर शारीरिक दण्ड व मानसिक संताप दिए जाने के आज्ञापक नियम स्मृतियों में अंकित किए गये। ब्राह्मणों को खतरा वर्ण व्यवस्था के

सबसे नीचे के पायदान पर धकियाए गये शूद्रों से ही था इसलिए उन्हें शारीरिक व मानसिक रूप से गुलाम तथा आर्थिक रूप से बेबस व लाचार बनाने के लिए इन अमानवीय नियमों की रचना कर शासक पर इनकी पालना सुनिश्चित कराने की जिम्मेदारी डाली गई।

ब्राह्मण द्वारा शूद को किस अपमान व कृत्य के लिए क्या दण्ड दिया जाये इसका उल्लेख मनुस्मृति के विभिन्न अध्यायों में निम्न प्रकार किया है –

मनुस्मृति–अध्याय 8 श्लोक 270 के अनुसार –

एक जातिर्द्विजातींस्तु वाचा दारूणया क्षिपन्।

जिह्वायाः प्राप्यनुयाच्छेदं जघन्य प्रभवो हि सः।।

अनुवाद – ''यदि शूद्र जाति ब्राह्मणादि तीनों वर्णों को कठोर वचन कहकर आक्षेप करे तो उस शूद्र की जीभ काट लेनी चाहिए, क्योंकि वह सबकी अपेक्षा नीच वर्ण में उत्पन्न हुआ है।'' पुनश्चः मनुस्मृति– अध्याय 8 श्लोक 271 के अनुसार

नाम जातिग्रहं त्वेषमभिद्रोहेण कुर्व्वतः।

निक्षेप्योऽयोमयः शंकुर्ज्वलन्नारये दशांगुलः।।

अनुवाद – ''शूद्र किसी द्विज का नाम तथा जाति का उच्चारण करता हुआ, जैसे ''यज्ञदत्त ब्राह्मण अधम है'', इस प्रकार बोलता हुआ निन्दा करे तो उसके मुँह में दश अंगुल की आग में लाल की हुई लोहे की कील घुसेड़ देवे।''

मनुस्मृति–अध्याय 8 श्लोक 272 के अनुसार –

धर्मोपदेशं दर्पेण विप्रमाणामस्य कुर्वतः।

तप्तमासेचयेत्तेलं वक्ते श्रोत्रे च पार्थिवः।।

अनुवाद – ''यदि शूद्र वर्ण का व्यक्ति 'तुमको इस धर्म का पालन करना चाहिए' ऐसा धर्मोपदेश ब्राह्मण को देवे, तो उस शूद्र के मुँह और कान में राजा तप्त तेल डाल देवे।''

मनुस्मृति–अध्याय 8 श्लोक 279 के अनुसार

येन केन चिदगेन हिस्याच्चेच्छेष्टमन्त्यजः।

छेत्तव्यं तत्तदेवास्य तन्मनोरनुशासनम्।।

अनुवाद – ''शूद्र हाथ–पैर आदि जिस अंग से श्रेष्ठ जाति के ऊपर प्रहार करे तो राजा उसका वहीं अंग कटवा दे, यह मनु की आज्ञा है।'' पुनश्चः मनुस्मृति– अध्याय 8 श्लोक 280 के अनुसार–

पाणिमुद्यम्य दण्डं वा पाणिच्छेदनमर्हति।

पादेन प्रहरन् कोपात् पादच्छेदनमर्हति।।

अनुवाद – ''शूद्र यदि श्रेष्ठ जाति को मारने के लिए हाथ एवं डंडा उठावे तो उसका हाथ कटवा देना चाहिए और यदि क्रोध में आकर चरण से प्रहार करे तो उसका पैर कटवा देना चाहिए।'' पुनश्चः –

सहासनमभिप्रेप्सुरूकृष्टस्या पकृष्टजः।

कट्या कृतोज्ञो निर्वास्यः स्फिचं वास्याव कर्त्तयेत्।।

अनुवाद – ''शूद्र यदि ब्राह्मण के साथ एक आसन पर बैठे तो राजा उसकी कमर को तपाई हुई लोहे की शलाका से दागकर उसे देश से निकाल देवे अथवा उसका चूतड़ कटवा देवे।'' पुनश्चः मनुस्मृति–अध्याय 8 श्लोक 282 के अनुसार

अलनिष्ठीवतो दर्पाद् द्वावोष्ठौ छेदयेन्नृपः।

अवमूत्रयतो मेढमवशर्धयतो गुदम्।।

अनुवाद – ''शूद्र यदि दर्प से किसी ब्राह्मण के शरीर पर थूक दे तो राजा उसके दोनों होठ कटवा दे, यदि पेशाब करे तो मुत्रेन्द्रिय को और अधोवायु छोड़े तो गुदा को कटवा दे।'' पुनश्चः मनुस्मृति–अध्याय 8 श्लोक 283 के अनुसार–

केशुषु गृहणतो हस्तौ छेदयेदविचारयन्।

पादयोर्दाढिकायां च ग्रीवायां वृषणेषु च।।

अनुवाद– ''शूद्र यदि अहंकार से किसी ब्राह्मण का केश, चरण, दाढ़ी, गरदन या अंडकोष को पकड़ ले तो राजा बिना विचारे उस शूद्र का हाथ कटवा देवे।''

हिन्दू धर्म शास्त्रों ने शूद्रों को सम्पत्ति रखने का अधिकार नहीं दिया है, क्योंकि शूद्र का ब्राह्मण की सेवा करना ही एक मात्र काम है। इसलिए आजीविका हेतु अलग से कोई व्यवसाय निर्धारित नहीं किया है। उसकी आजीविका की व्यवस्था वह स्वयं नहीं कर सकता। वह कोई धन या सम्पत्ति नहीं रख सकता। ईश्वर द्वारा पैरों से पैदा हुआ करार देकर ब्राह्मणों ने षड्यंत्र व साजिश के तहत शूद्रों को मुफ्त में बेगार करने को विवश कर दिया और उसे सिर ऊँचा कर चलने से भी निषिद्ध कर दिया। उनके द्वारा पाई–पाई जोड़कर चुपचाप कमाये धन व सम्पत्ति को ब्राह्मण द्वारा छीन लेना एक पुण्य कार्य माना गया। मनुस्मृति– (8/413) के अन्यायपूर्ण फरमान निम्न प्रकार हैं–

शूद्रं तु कारयेद्दश्यं क्रीतमक्रीतमेववा।

दास्यायैव हि सृष्टोऽसौ ब्राह्मणस्य स्वयंभुवा।।

अनुवाद– ''शूद्र खरीदा हुआ हो या न हो, उससे दास–कर्म करावें, क्योंकि विधाता ने उसको ब्राह्मण का दास कर्म करने के लिए ही बनाया है।'' मनुस्मृति– 8/414 के अनुसार–

न स्वामिना विसृष्टोऽपि शूद्रो दास्याद्विमुच्यते।

निसर्गजं हि तत्तस्य कस्तरस्मात्तदं पोहति।।

अनुवाद– ''शूद्र अपने स्वामी के द्वारा दास–कर्म से मुक्त कर देने पर भी उसका कर्म से छुटकारा नहीं होता है क्योंकि उसका दासत्व स्वाभाविक है, कौन उसको उससे मुक्त कर सकता है।'' मनुस्मृति– 8/417 के अनुसार–

विस्त्रध ब्राह्मणः शुद्राद् र्दव्योपादानमचरे।

न हि तस्यास्ति किंचित्स्वं भर्तृ हार्यधनो हि. स.।।

अनुवाद– ''ब्राह्मण के लिए उचित है कि वह शूद्र का धन बिना किसी भय व संकोच के ले ले, क्योंकि शूद्र का अपना कुछ भी नहीं है, उसका धन उसके मालिक द्वारा हरण करने योग्य है।'' मनुस्मृति 8/416 के अनुसार–

भार्या पुत्रश्च दासश्च त्रय एवाधनाः स्मृताः।

यत्तेसमधिगच्छन्ति यस्य ते तस्य तद्धनम्।।

अनुवाद– ''स्त्री, पुत्र और दास ये तीनों अधन कहे गए हैं, अर्थात् ये धन के अधिकारी नहीं हैं। अतः यह जो कुछ धन प्राप्त करते हैं, वह उसी का होता है जिसके वे स्त्री आदि हैं। दास–कर्म शूद्रों का ही है, अतः 'दास' शब्द से शूद्र ही अभिप्रेत हैं।

शूद्र के पास सम्पत्ति होना ब्राह्मणों के लिए घातक माना गया है। मनुस्मृति के अनुसार यदि शूद्र सम्पत्ति का मालिक हो गया, स्वावलम्बी बन गया तो उसमें स्वाभिमान आ जायेगा। वह ब्राह्मणों को कष्ट देने लग जायेगा। सेवा कार्य बन्द कर देगा। इसलिए शूद्र धन कमाने की स्थिति में भी हो तब भी उसे ऐसा नहीं करने दिया जाना चाहिए। मनुस्मृति के अध्याय 10 श्लोक 129 में इसका विवरण निम्न प्रकार है –

शक्तेनापि हि शूद्रेण न कार्यों धनसंचयः।

शूद्रों हि धनमासाध ब्राह्मणानेव बाधते।।

अनुवाद– ''शूद्र धन संचय करने की स्थिति में हो, फिर भी ऐसा न करे, क्योंकि जो शूद्र धन संचय करता है, वह ब्राह्मण को दुःख पहुँचाता है।''

सम्पत्ति केवल सेवा कार्य करने से नहीं बच सकती। यह तब ही संभव है जब शूद्र ऊपर के तीनों वर्णों के लिए निर्धारित व्यवसाय करने लग जायें। इसके लिए राजा (शासक) को मनुस्मृति में यह आदेश दिया गया है कि यदि लोभवश कोई नीच जाति का व्यक्ति ऊँची जाति के लिए निर्धारित कार्य या व्यवसाय करना शुरू कर दे और इस प्रकार के व्यवसाय से कोई सम्पत्ति चुपचाप अर्जित कर लेवे तो उसकी ऐसी सम्पत्ति को छीन कर राजा ऐसे शूद्र को अपने राज्य की सीमा से बाहर फेंक देवे। मनुस्मृति के अध्याय 10 श्लोक 96 में उक्त आदेश निम्न प्रकार है –

यो लोभादधमोजात्या जीवेदुत्कृष्ट कर्म्मभिः।

तं राजा निर्धनं कृत्वा क्षिप्रमेव प्रववासयेत्।।

अनुवाद– ''यदि कोई नीच जाति का व्यक्ति लोभवश ऊँची जाति की जीविका करे तो राजा उसका सर्वस्व छीनकर उसे शीघ्र ही देश से निकाल दे।''

महर्षि अत्रि ने अत्रिस्मृति में तो यहाँ तक कह दिया है कि यदि कोई शूद्र जाने–अनजाने में ब्राह्मण के लिए निर्धारित व आरक्षित कार्य करने लग जाये तो राजा ऐसे शूद्र का तुरन्त वध कर देवे। राजा को महर्षि अत्रि ने भयभीत भी किया है। उनका कहना है कि शूद्र द्वारा यज्ञ, जप व तपस्या करने से राजा का राज्य नष्ट हो जाता है। राजा को यह नहीं बतलाया है कि शूद्र द्वारा यज्ञ के आयोजन करने, अध्ययन, अध्यापन का कार्य करने से ब्राह्मण की आजीविका पर विपरीत असर पड़ेगा, क्योंकि हो सकता है कि ऐसा बतलाने पर राजा अधिक ध्यान नहीं देवे या उक्त कार्यों की अनदेखी कर दे। इसलिए शूद्र के जप, तप, यज्ञ किए जाने के कृत्य को सीधा राज्य के नष्ट हो जाने से जोड़ दिया। उस समय के राजा बिना दिमाग के हुआ करते थे इसलिए फौरन ब्राह्मण की आज्ञा पालन करते थे तथा शूद्रों पर अत्याचार करते रहते थे। अत्रि स्मृति का श्लोक 19 निम्न प्रकार है –

वध्यो राज्ञा सवै शूद्रो जपहोमपरश्च यः।

यतोराष्टस्य हंताऽसौ यथा वह्नेश्चवै जलम्।।

अनुवाद– ''राजा को उचित है कि वह जप–यज्ञादि ब्राह्मणोचित कर्म करने वाले शूद्र का वध कर दे, क्योंकि जिस प्रकार जल आग को नष्ट कर देता है, उसी प्रकार जप–यज्ञादि करने वाला शूद्र सम्पूर्ण राज्य को नष्ट कर देता है।''

विदुर जो स्वयं एक दासी की अवैध संतान थे, ने भी शूद्रों को तीनों वर्णों की सेवा करने का ही उपदेश दिया है और इस प्रकार सेवा करने पर स्वर्ग में जाने का लालच दिया है। विदुर नीति के अध्याय 8 के श्लोक 28 में जिसका विवरण निम्न प्रकार है –

ब्रह्म क्षत्रं वैश्यवर्णं च शूद्रः क्रमेणैतान्यायतः पूजनयाः।

तुष्टेष्वेव्यथो दग्धपाप–स्त्यक्त्वा देहं स्वर्गसुखानि भुङ्क्ते।।28।।

अनुवाद– ''शूद्र यदि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की क्रम से न्यायपूर्वक सेवा करके इन्हें संतुष्ट करता है, तो वह व्यथा से रहित हो, पापों से मुक्त होकर देह–त्याग के पश्चात् स्वर्गसुख का उपभोग करता है''।।28।।

विष्णु पुराण के अध्याय 5 श्लोक 11 का विवरण निम्न प्रकार है –

प्राणनथस्तिथा दारान् ब्राह्मणर्थे विवेदयेत्।

स शूद्रजातिर्भोज्यः स्याद भोज्यः शेष उच्चते।।

अनुवाद– ''जो शूद्र अपने प्राण, धन तथा स्त्री को ब्राह्मण की सेवा में अर्पण कर दे, उस शूद्र का अन्न भोजन करने योग्य है और शेष शूद्रों का अन्न भोजन करने योग्य नहीं है।''

मनुस्मृति के अध्याय 8 श्लोक 418 के अनुसार

वैश्यशूद्री प्रयत्नेन स्वानि कर्माणि कारयेत्।

तौहिच्युतौ स्वकर्मेभयः ज्ञोमयेतामिदं जगत्।।

अनुवाद– ''राजा को चाहिए कि वैश्यों और शूद्रों को अपने–अपने कर्मों में यत्नपूर्वक लगाये रखे, अर्थात् उनसे अपना–अपना कर्म करवाता रहे, क्योंकि यदि ये अपने–अपने कर्मों से भ्रष्ट होंगे, अर्थात् उन्हें छोड़ देंगें तो ये जगत् को व्याकुल कर देंगे।''

यदि वैश्य मनुस्मृति के अध्याय 8 श्लोक 418 में निर्धारित व्यवसाय नहीं करता है, चुपचाप ब्राह्मण के लिए निर्धारित कर्म–दान, दक्षिणा प्राप्त करना, शास्त्रों के माध्यम से धार्मिक उपदेश देना प्रारम्भ कर देता है या क्षत्रिय के लिए तय किए गये काम, जैसे–शस्त्र चलाना, युद्ध कला में निपुणता प्राप्त करने का प्रयास करता पाया जाता है तो राजा (शासक) को मनुस्मृति के अध्याय 10 श्लोक 96 में यह निर्देश दिया है कि राजा (शासक) ऐसे वैश्य को उसकी धन–सम्पत्ति तथा सर्वस्व छीनकर अपने राज्य से निष्कासित कर देवे। मनुस्मृति में वैश्य को पापयोनि अर्थात् नीच जाति का करार दिया है।

यो लोभादधमो जात्या जीवने दुत्कृष्ट कर्म्मभिः।

तं राजा निर्धनं कृत्वा क्षिप्रमेव प्रयासयेत्।।

अनुवाद– ''यदि कोई नीच जाति का व्यक्ति लोभ में पड़कर ऊँची जाति की जीविका करे तो राजा उसका सर्वस्व छीनकर उसे शीघ्र ही देश से निकाल दे।''

इन धर्मग्रंथों में सनातन हिन्दू धर्म के चारों वर्णों के लोगों को इस प्रकार अस्वाभाविक, असामान्य, अप्राकृतिक तरीके से क्यों पैदा होना दिखाया। इसका व इसके पीछे छिपे मंतव्य, नियत, षड़यंत्र का पता इन वर्णों के लोगों के लिए मनुस्मृति व अन्य धर्मग्रंथों में निर्धारित व्यवसायों, दायित्वों व निर्योग्यताओं से ही लग पाता है। मनुस्मृति का ही अनुमोदन मनुस्मृति के बाद लिखे गये अन्य धर्मशास्त्रों, स्मृतियों, पुराण, उपनिषद, रामायण, महाभारत के रचनाकारों ने किया है।

वेदों में चारों वर्णों के लोगों की उत्पत्ति का तो उल्लेख है लेकिन वेदों में यह कहीं नहीं लिखा है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र के क्या दायित्व व व्यवसाय होगें ? वेदों में वर्ण–व्यवस्था, योग्यता व कर्म पर आधारित थी। जन्म से वर्ण का कोई लेना–देना नहीं था। एक ही व्यक्ति की संताने, योग्यता, दक्षता, व्यवसाय व कर्म के अनुसार विभिन्न वर्णों में जाती थी। उनमें सौहार्द भी था। वर्ण कर्म व योग्यता के अनुसार बदलते रहते थे। वर्ण का निर्धारण गुरूकुल (विद्यालयों) में आचार्यों द्वारा तय किया जाता था।

माँ–बाप बचपन में ही बच्चे को गुरूकुल में भेज दिया करते थे। गुरूकुल बस्ती अथवा आबादी से दूर जंगल में बने होते थे। बच्चे गुरूकुल में ही रहते थे। गुरूकुल में बच्चों को सभी प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। बच्चे का जिस क्षेत्र में अधिक रूझान होता था, उसे उसी क्षेत्र के विषय में दक्ष बनाया जाता था। जैसे कोई बच्चा व्यापार में निपुण हो तो उसे उस विषय में दक्ष कर वैश्य वर्ण में डाला जाता था। जो बलिष्ठ व साहसी होता था उसे क्षत्रिय वर्ण में डाला जाता था तथा जो सभी प्रकार की शिक्षा में से किसी में भी दक्षता प्राप्त करने में असमर्थ रहता था उसे सेवा कर्म करने हेतु शूद्र वर्ण में डाला जाता था। इस प्रकार व्यक्ति के वर्ण का निर्धारण शिक्षा प्राप्ति के दौरान गुरूकुल में आचार्यगण तय करते थे। उस समय तक शिक्षा पर किसी प्रकार का प्रतिबंध भी नहीं था। सभी वर्णों के बालकों को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था

जन्मानुसार वर्ण आधारित आरक्षण के षडयंत्र की बुनियाद–

जब योग्यता व सामर्थ्य के अनुसार वर्ण निर्धारित व स्थापित होने लगा तो जो व्यक्ति एक बार ब्राह्मण वर्ण में आ गया उसका यह प्रयास रहने लगा कि उसका लड़का भी ब्राह्मण ही बने, क्योंकि धर्म में ब्राह्मण को श्रेष्ठ प्राणी माना गया था। समाज उसे सम्मान की निगाह से देखता था। उसे आजीविका के लिए किसी प्रकार का परिश्रम करने की भी आवश्यकता नहीं रहती थी। बाकी वर्णों के लोग ब्राह्मण को दान–दक्षिणा देते थे। ब्राह्मण को केवल ज्ञान बाँटने के अलावा और कुछ नहीं करना पड़ता था। उनमें से ही गुरूकुल में पढ़ाने वाले आचार्य बनते

थे। इसलिए आचार्य बने ब्राह्मणों ने भी यही उचित समझा कि ब्राह्मण कुल में जन्म लेने वाले लड़कों को ही ब्राह्मण वर्ण में डाला जाय, क्योंकि गुरूकुल में सभी वर्णों के बालक जाते थे। शूद्र का लड़का जिसका बाप ब्राह्मण के यहाँ दास का काम कर रहा है यदि उस शूद्र का लड़का बुद्धि व सामर्थ्य के आधार पर ब्राह्मण वर्ण में आ गया और उस ब्राह्मण का लड़का शूद्र वर्ण में चला गया तो उस ब्राह्मण के लड़के को उसके यहाँ काम कर रहे शूद्र के लड़के की सेवा करनी पड़ेगी। यह चिन्ता व भय ब्राह्मणों व आचार्यों को सताने लगी। उन्होनें अपनी औलाद को सदा के लिए श्रेष्ठ बनाने का निश्चय किया। इसके लिए यह षड्यन्त्र रचा कि व्यक्ति अच्छे संस्कारों के कारण ब्राह्मण के घर जन्म लेता है, इसलिए उसे ब्राह्मण वर्ण में लिया जाना चाहिए। फिर इसे भाग्य से जोड़ा गया और यह तर्क दिया जाने लगा कि पूर्व जन्म के कर्मों के अनुसार ही व्यक्ति वर्ण विशेष में जन्म लेता है। इसलिए ब्राह्मण वर्ण के अलावा अन्य वर्णों में जन्म लेने वाले व्यक्ति के पूर्व जन्म के पाप या बुरे कर्म का प्रायश्चित करने के लिए ही ब्राह्मण वर्ण के अलावा नीचे वर्ण में उसका जन्म हुआ है इसलिए जन्म लेने वाले वर्ण में ही उसे पूर्व जन्म के पापों व बुरे कर्मों का फल स्वेच्छा से भोगना चाहिए। यह तर्क अन्य वर्णों के भोले–भोले व सीधे–साधे लोगों के मन व मस्तिष्क में बैठा दिया गया और वर्ण–व्यवस्था को योग्यता व सामर्थ्य के स्थान पर जन्म से जोड़ दिया गया।

वर्ण–व्यवस्था को जन्म से जोड़ने का दूसरा कारण यह भी जान पड़ता है कि आर्य बाहर से आये थे। वे अपनी श्रेष्ठता किसी भी हालत में नहीं खोना चाहते थे। वे नहीं चाहते थे कि गुलाम बनाये गये अनार्य जिनको राक्षस, दैत्य व असुर कहा गया, उनकी बराबरी पर आवें इसलिए उनको बिना किसी मापदण्ड के शूद्र वर्ण में डाल दिया। उनको भय लगा होगा कि गुलाम बनाये गये लोगों के बच्चे योग्यता के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य वर्ण में आ सकते हैं इसलिए ही जन्म को वर्ण का आधार बनाया गया। शूद्रों को दास भी कहा जाता था।

मनुस्मृति के अध्याय 8 श्लोक 415 में मनु ने दास सात प्रकार के बतलाये हैं – 1. जो युद्ध में जीतकर लाया गया हो। 2. जिसने अन्न के लिए दासत्व स्वीकार कर लिया हो। 3. जो घर की दासी का पुत्र हो। 4. जिसको खरीदा गया हो। 5. जो दान में मिला हो। 6. जिसके पिता आदि भी दास रहे हों। 7. जो राजकीय दण्ड से बचने के लिए दास बन गया हो।

मनु के दास के बारे में बतलाये गये 7 कारणों में से युद्ध में पराजित व्यक्ति तथा जिसके पिता दास रहे हों वे सभी शूद्र वर्ण के माने गये हैं। इसलिए शूद्र का लड़का भी शूद्र ही होगा यह मनु ने अपने आदेश में तय कर दिया। इस प्रकार वर्ण का कर्म अथवा योग्यता से कोई संबंध नहीं रहा, केवल जन्म लेने मात्र से ही सनातन हिन्दू धर्म में व्यक्ति का वर्ण तय होने लगा।

जन्म लेना व्यक्ति के बस में नहीं है लेकिन कर्म व कठिन साधना के माध्यम से वर्तमान को तो सुधारा ही जा सकता है। सम्मान व समृद्धि के लिए प्रयास तो किया ही जा सकता है।

लेकिन मनु ने सोची समझी साजिश के तहत जन्म को ही जीवन की अन्तिम परिणती अंगीकार करवाकर लोगों का उत्साह ठंडा कर दिया। उनकी कुछ कर गुजरने की इच्छाशक्ति को कुन्द कर दिया। समाज जड़वत हो गया। व्यक्ति को एक यंत्र में बदल दिया गया।

आर्य ब्राह्मणों ने अपने जन्म आधारित आरक्षण को और मजबूत करने की नियत से ही यह तर्क दिया कि व्यक्ति पूर्वजन्म के कर्मों के अनुसार ही वर्ण में जन्म लेता है। जिसके पूर्व के कर्म श्रेष्ठ होते हैं वह ब्राह्मण वर्ण में और जिसके पूर्व जन्म के कर्म अच्छे नहीं रहे जिसने पाप–पूर्ण कार्य किये हों उसका जन्म निम्न वर्ण में होता है इसलिए वर्ण में जन्म होना पूर्व जन्म के कर्मों का परिणाम है और पूर्व जन्म के कर्मों का फल समझकर जो भाग्य में लिखा है उसी प्रकार से जन्म वाले वर्ण के लिए निर्धारित कर्म करते रहना चाहिए। तभी मोक्ष संभव है और अगला जन्म अच्छे वर्ण में होना भी संभव है। वर्ण में उत्पत्ति को पूर्व जन्म के कर्मों का परिणाम करार दिये जाने से बाकी तीनों वर्णों के लोगों के पास यह विकल्प भी नहीं रहने दिया कि वे वर्तमान में अच्छे कर्म के बल पर अपना वर्ण परिवर्तित कर सकें। इस प्रकार देश के बहुसंख्यक वर्ग की सृजनशीलता, वैज्ञानिक खोज की ललक, आविष्कार की मानसिकता, प्राकृतिक विपदाओं से निजात दिलाने के लिए उपाय तलाशने की इच्छा शक्ति को समाप्त कर दिया।

धर्मशास्त्रों के माध्यम से ब्राह्मण रचनाकारों द्वारा ईश्वर अवतारों के माध्यम से चारों वर्णों के लोगों के व्यवसाय, दायित्व व निर्योग्यतायें तय नहीं करवाई जाती तो ब्राह्मणों के अलावा बाकी तीनों वर्णों के लोग व्यवसायिक स्वतंत्रता के लिए प्रयास कर सकते थे इसलिए ब्राह्मणों ने सोची समझी साजिश के तहत वर्णानुसार कर्म का सिद्धान्त भी ईश्वर अवतारों के द्वारा ही तय करवा दिया।

वर्ण व जातीय आरक्षण को स्थायी बनाने की साजिश में राज शक्ति का दुरूपयोग–

आर्य ब्राह्मणों ने वर्ण–व्यवस्था के रूप में स्थापित सामाजिक गैर बराबरी को कठोरता से लागू करने में राजशक्ति को एक साधन के रूप में इस्तेमाल किया। राजशक्ति पर ब्राह्मणों का वर्चस्व कायम रखे जाने हेतु राजा के सेनापति, प्रधान न्यायाधीश व प्रधानमंत्री के पद ब्राह्मण के लिए ही आरक्षित रखे जाने की व्यवस्था की गई जो सत्ता के केन्द्र बिन्दु होते हैं। राजा को यह भी उपदेश दिये गये कि वह प्रातःकाल उठकर विद्वान व वेद ज्ञाता ब्राह्मण की सेवा करे और ब्राह्मण की सलाह से ही शासन चलावे। ब्राह्मण की आजीविका की व्यवस्था करे तथा उसके मान–सम्मान का ख्याल रखे। यदि शूद्र ब्राह्मण की बराबरी करने का प्रयास करें, धर्म की बात सुने या धर्म को जानने का प्रयास करे तो उसे कठोर शारीरिक दण्ड देवे। शूद्र को दी जाने वाली मृत्युदण्ड की सजा को राज की एक सामान्य प्रक्रिया बनाया गया। मृत्युदण्ड, सम्पत्ति छिनने के डर व कठोर शारीरिक यातनाओं के भय से शूद्र वर्ण के लोगों को चुपचाप ब्राह्मण की

सेवा करते रहने को मजबूर होना पड़ा और इस प्रकार शूद्रों को शारीरिक रूप से गुलाम बनाया गया।

आर्य ब्राह्मणों ने राजा को आर्थिक दृष्टि से कभी सम्पन्न व सक्षम नहीं होने दिया। राजा को ब्राह्मणों की आजीविका के लिए वैदिक काल में बड़े–बड़े यज्ञ करने, कीमती आभूषण, धन व दासियाँ, पुरोहित वर्ग को यज्ञ के सम्पादन के बाद देने की बाध्यता, राजा की सुरक्षा, राज्य में अमन चैन के लिए आवश्यक समझी गई। युद्ध में लूटी गई सम्पत्ति में से आधा हिस्सा ब्राह्मणों को दिये जाने की परिपाटी डाली गई। राजा से यह भी अपेक्षा की गई कि यदि उसको यह लगे कि उसकी मृत्यु होने वाली है तो राज के खजाने की सारी सम्पत्ति ब्राह्मणों को दान देकर राज्य सिंहासन पर पुत्र को आरूढ़ कर वह युद्धभूमि में अपने प्राण त्यागे। राजा ब्राह्मण पर कोई कर नहीं लगाये। इस प्रकार आर्य ब्राह्मणों ने राजाओं को कंगाली पर ही रखा और वे पंगु बनकर ब्राह्मणों के आश्रित ही रहे।

शूद्रों में विभाजन :–

शूद्र संख्या में ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्यों की कुल संख्या से अत्यधिक थे। सभी इस देश के मूल निवासी थे। जिनको राजसत्ता व पाप तथा अधर्म का भय दिखाकर ही शारीरिक व मानसिक रूप से गुलाम बनाया गया। ब्राह्मण को यह भय था कि शूद्रों की यदि उनके वर्ण के आधार पर ही पहचान जारी रहती है तो इस आधार पर शूद्र संगठित हो सकते हैं। ब्राह्मण की जन्म आधारित आरक्षण की सत्ता को चुनौती दे सकते हैं, इसलिए शूद्रों की वर्ण के आधार पर की गई पहचान को समाप्त करने की साजिश रची गई। शूद्रों को कृषि, पशुपालन, दस्तकारी व चाकरी के आधार पर कई जातियों में विभाजित किया गया। शूद्रों में से ही जो लोग, ब्राह्मण की सत्ता को चुनौती देने में सक्षम थे, उनकी अन्त्यज के रूप में अलग से जातियाँ बनाई गई जिनको घृणित व अपमानजनक व्यवसायों में लगाया। शूद्र वर्ण की जातियों को समान धरातल पर नहीं रखा। जातियाँ आपस में घुल–मिल नहीं सकें, इसके लिए शादी–ब्याह केवल जाति में ही किये जाने की परिपाटी डाली गई। राजा को मनुस्मृति के अध्याय 8 के श्लोक 172 व 418 के माध्यम से यह हिदायत दी गई कि राजा जातियों के विलय को कठोरता से रोके। प्रत्येक जाति के व्यक्ति को उसकी जाति के लिए निर्धारित व्यवसाय अपनाने को मजबूर करे और उल्लंघन करने पर दंडित भी करे ऐसा करने वाला राजा स्वर्ग में जाता हैं।

जाति–व्यवस्था को मजबूत बनाया गया। इसके लिए जाति पंचायतें गठित की गई, जाति के लोगों के आपसी झगड़े, जैसे–सम्पत्ति, उत्तराधिकार व पति–पत्नी के विवाद जाति पंचायतों द्वारा निपटाने की व्यवस्था स्थापित की। जाति पंचायत का निर्णय जाति के लोगों पर बाध्यकारी बनाया गया। जाति पंचायत के निर्णय को नहीं मानने वाले को जाति से बहिष्कृत करने का भय

दिखाया गया। जाति–बहिष्कार मृत्युदण्ड के समान था, क्योंकि जाति से अलग हो जाने पर व्यक्ति को जातिगत व्यवसाय से भी वंचित होना पड़ता था। शादी विवाह की भी समस्या थी। अन्य जाति के लोग ऐसे व्यक्ति को अपनाते भी नहीं थे, इसलिए व्यक्ति के पास जाति के बाड़े में ही सीमित रहने के अलावा और कोई विकल्प नहीं छोड़ा गया। जन्म से लेकर मृत्यु तक के सारे कार्य जाति में ही सम्पन्न होने का रिवाज बन गया। लोगों ने अपनी जाति के बाहर सोचना ही बन्द कर दिया।

प्रत्येक जाति के लोगों की अलग–अलग बस्ती बसने लगी। बस्तियों के नाम जाति के नाम से होने लगे। जिनको अन्त्यज या अछूत माना गया उनकी बस्तियाँ दूर बसाई गई। एक जाति के लोग दूसरी जाति के लोगों में अधिक घुलें–मिलें नहीं, इस बात का विशेष ध्यान रखा गया।

सभी शूद्र जातियों के लोगों के व्यवसाय कम लाभकारी व शारीरिक श्रम पर आधारित थे। इसलिए शूद्र वर्ण की जातियों के लोग गरीब व अभाव में ही रहे। ब्राह्मण ने सभी हिन्दुओं को एक समाज के रूप में विकसित होने से रोका। आज हालत यह है कि शूद्र वर्ण के लोग 6000 से अधिक जातियों में विभाजित है। शूद्रों को जातियों में बाँटना ब्राह्मणों की बहुत बड़ी कूटनीतिक सफलता है। आज भी लोग जाति मे ही जीत हैं तथा जाति में ही मरते हैं, जाति से बाहर सोचने की क्षमता का विकास नहीं हो पाया है। विभिन्न जातियों में ऊँच–नीच की भावना इस कदर हावी है कि इनमें आपस में खान–पान तक बन्द है।

इस देश में आदि काल से धर्मशास्त्रों का लेखन कार्य ब्राह्मणों ने किया और जो बातें उन्हें अपने हित में लगी, उन्हें ईश्वरीय संदेश करार देकर धर्मशास्त्रों में अंकित कर दिया। जिस वर्ग को नुकसान पहुँचाना चाहते थे, उस वर्ग के लोगों को धर्म ग्रंथों के अध्ययन करने, उनके उपदेशों को सुनने, समझने पर कठोर पाबन्दी लगा दी। इस प्रकार धर्म के जानने, समझने पर प्रतिबन्ध लगने से शूद्र वर्ण के लोग कुटिल चालों से अनभिज्ञ रहे।

इस प्रकार आर्य ब्राह्मणों ने धर्म की आड़ में केवल ब्राह्मण वर्ण में जन्म लेने मात्र से ही अपने आपको सर्वश्रेष्ठ, विद्वान् व सृष्टि की समस्त वस्तुओं का स्वामी मान लिया। बाकी तीनों वर्णों, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्रों को द्वितीयक श्रेणी का नागरिक घोषित कर दिया और ईश्वर अवतारों के माध्यम से यह संदेश या उपदेश दिलवा दिया कि ज्ञान व गुण दोनों से रहित होते हुए भी ब्राह्मण पूजने योग्य हैं। ब्राह्मणों ने अपने आपको समाज का शिक्षक व धर्म का अधिकृत प्रवक्ता स्थापित कर लिया। उनके द्वारा पाप व दुराचरण करने पर भी उन्हें पापी व दुराचारी करार देने का अधिकार किसी को नहीं दिया। अपनी कुटिल चालों, षड्यंत्रों के द्वारा समाज को कई जातियों में बाँट कर उन्हें एक होने, देश व समाज के समग्र हित में सोचने का अवसर ही नहीं दिया। ब्राह्मण वर्ग में एक ऐसा उद्दण्ड, अहंकारी व निर्लज्ज वर्ग उत्पन्न हो गया जिसने इस देश के बहुसंख्यक वर्ग की सृजनशीलता, वैज्ञानिक खोज की ललक, आविष्कार की मानसिकता,

प्राकृतिक विपदाओं से निजात दिलाने के लिए उपाय तलाशने की इच्छाशक्ति को समाप्त कर दिया। बाकी तीनों वर्णों के, विशेषकर शूद्र वर्ण के लोग कई जातियों में बंटे होने की वजह से जातीय बंधन के कारण अपनी जाति में सिमट कर भाग्य भरोसे जीने के आदि हो गये। स्वाभिमान व आत्मसम्मान से जीने की उत्कंठा बहुसंख्यक वर्ग की समाप्त हो गई।

ब्राह्मण सभी काल में अल्पसंख्यक रहे। ऋषियों ने ब्राह्मणों के हित के लिए क्षत्रियों एवं वैश्यों का उपयोग किया। क्षत्रियों एवं वैश्यों को भी बराबरी पर नहीं आने दिया। उनका उपयोग शूद्रों को दबाने में किया। इसलिए हिन्दू धर्म एक धर्म का स्वरूप भी नहीं ले पाया और न ही यह विश्व में प्राचीन धर्म होते हुए भी विस्तृत आकार ही ले पाया।

ऋषियों की प्राथमिकता यहाँ के मूल निवासी जिन्हें अनार्य व असुर पुकारा गया उन्हें कैसे गुलाम बनाए रखा जाय वहीं तक सीमित रही। 'यदि यहाँ के मूल निवासियों को आर्य संस्कृति का हिस्सा बनाया भी जाता है तो, इनके दायित्व क्या हों?' 'इन्हें भविष्य में आर्यों की बराबरी करने से कैसे रोका जाए?' 'आर्यों की आने वाली पीढ़ी व नस्ल को शासकीय भूमिका में कैसे बरकरार रखा जा सकता है?' इन बातों पर ही आर्य ऋषियों व संन्यासियों ने अधिक ध्यान दिया और इस साजिश को अन्जाम देने में अनैतिक व दुराचरण करने में भी कोई संकोच नहीं किया। उनका एक ही लक्ष्य था कि आर्यों की सन्तान श्रेष्ठ मानी जाय। वह आर्थिक रूप से सम्पन्न हों। सत्ता उन्हीं के पास रहे। इनके लिए अनार्यों अर्थात् यहाँ के मूल निवासियों को असहाय, बेबस व दास बनाये रखना आवश्यक था, इसलिए इस नीति को ही धर्म का आधार बनाया। धर्म के मौलिक तत्त्व, जैसे समानता, भातृत्व व स्वतंत्रता को इसी नियत से कोई महत्त्व नहीं दिया।

बुद्धकाल व महावीरकाल में ब्राह्मणों की दुर्गति और उनका पुनरुत्थान–

यदि हम भारत के द्वापर युग के बाद के धार्मिक इतिहास पर दृष्टिपात करें तो पाएंगे कि ईसा मसीह से भी 600 वर्ष पूर्व बुद्ध व महावीर के उपदेशों ने एक नई धार्मिक व सामाजिक क्रांति को जन्म दिया था। मनु व ब्रह्मा द्वारा स्थापित की गई वर्ण आधारित समाज व्यवस्था को दोनों महामानवों ने अपने ओजस्वी विचारों से ध्वस्त कर दिया। वर्ण व्यवस्था के अनुसार बुद्ध व महावीर दोनों ही क्षत्रिय वर्ण से थे। ब्राह्मणों ने क्षत्रियों का सहारा लेकर ही न केवल अपनी जन्मगत श्रेष्ठता को बनाए रखा बल्कि हिन्दु समाज मे धर्म के मौलिक तत्व जैसे– समानता, स्वतंत्रता एवं भातृत्व, जो कि धर्म के आधार स्तम्भ भी हैं, को पनपने ही नहीं दिया। बुद्ध और महावीर के उपदेशों का तीसरे और चौथे वर्ण पर धकेले गए वैश्यों और शूद्रों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। बुद्ध ने अधिक प्रभावी ढंग से ब्राह्मणवादी व्यवस्था पर प्रहार किया। शूद्रों ने बड़ी संख्या में बुद्ध द्वारा प्रतिपादित समानता, स्वतंत्रता व बंधुत्व पर आधारित समाज को अंगीकार किया। वैश्यों पर महावीर के विचारों का अधिक प्रभाव पड़ा। क्षत्रियों के सहयोग के अभाव में ब्राह्मण पंगु व असहाय हो गए। ब्राह्मणों ने बुद्ध व महावीर के विचारों व आदर्शों को कभी अंगीकार नहीं

किया बल्कि बुद्ध के अनुयायी बन कर बुद्ध की सामाजिक क्रांति की ज्वाला को शान्त करने में व्यस्त हो गए। फिर भी अशोक के शासन काल तक लगभग समस्त राष्ट्र बुद्ध–राष्ट्र में परिवर्तित हो चुका था। लेकिन इसी दौरान बौद्ध शासकों ने ब्राह्मणों पर कोई अंकुश नहीं लगाया तथा मनुस्मृति व अन्य वैदिक धर्मग्रन्थों, पक्षपातपूर्ण व भेदभावग्रस्त उपदेशों के प्रचार–प्रसार पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाया। मनु व ब्रह्मा की मनुस्मृति आधारित सामाजिक व्यवस्था की विभिषिका से बचने का कोई कारगर उपाय नहीं किया। बौद्ध धर्म का शूद्रों पर व्यापक असर पड़ा। शूद्र भी बौद्ध संन्यासी बने। वर्ण–व्यवस्था पर इसका विपरीत असर पड़ा। ब्राह्मण क्षत्रियों के बल पर ही शूद्रों को दबाते थे लेकिन गौतम बुद्ध स्वयं क्षत्रिय थे। इस कारण ब्राह्मणों को क्षत्रियों का सहयोग नहीं मिलने से अलग–थलग पड़ गये। बहुत से ब्राह्मण बौद्ध हो गये लेकिन मानसिक रूप से बौद्ध के संदेशों को स्वीकार नहीं किया। वर्ण–व्यवस्था समाप्त–सी हो गई। हजारों सालों से जन्म के आधार पर चली आ रही ब्राह्मणों की श्रेष्ठता भी समाप्त–सी हो गई । कर्म व योग्यता के आधार पर गैर ब्राह्मण विशेषकर शूद्र बौद्ध धर्म की शिक्षा के कारण ऊँचे–ऊँचे पदों पर आसीन हो गये। ब्राह्मण बेरोजगार हो गये और वे बौद्ध धर्म को खत्म करने के षड्यंत्र में लग गये। ईसा से लगभग 160 वर्ष पूर्व सम्राट अशोक के पोते राजा हियद्रथ का उन्हीं के ब्राह्मण सेनापति पुष्यमित्र शुंग ने धोखे से वध कर दिया। बौद्ध भिक्षुओं का बड़े पैमाने पर कत्लेआम किया गया। बौद्ध धर्म सत्य, अहिंसा, दया, सदाचार व समानता का द्योतक था। धर्म के नाम पर सृजित की गई वर्ण–व्यवस्था के कारण ब्राह्मण असमानता, अन्याय व शोषण के पोषक थे और अपने हित के लिए हिंसा या किसी की भी हत्या करना पाप नहीं समझते थे। इसलिए बौद्ध धर्म की अहिंसा, दया व सदाचार की भावना ब्राह्मणवादी हिंसक व्यवस्था का शिकार हो गई। बौद्ध धर्म इस देश से समाप्त हो गया। ब्राह्मणों ने चौथी शताब्दी में मनुस्मृति की रचना कर वर्ण–व्यवस्था को पुनः कठोरता से लागू किया जो लोग सनातन हिन्दू धर्म की वर्ण–व्यवस्था में नहीं आये। उनको हेय व जरायमपेशा व्यवसाय में धकेल कर हर प्रकार के मानवीय अधिकारों से वंचित कर शस्त्रहीन भी कर दिया और शोषित मानकर गुलामों जैसा जीवन जीने को मजबूर किया। यह बर्ताव मुगलकाल में भी जारी रहा।

हिन्दू समाज–सुधारकों की ब्राह्मणों के हाथों दुर्गति–

जब–जब भी किसी समाज सुधारक ने सनातन हिन्दू धर्म के वर्ण व जाति आधारित आरक्षण सामाजिक गैर–बराबरी को बदलने का प्रयास किया तब–तब ब्राह्मणों ने उस समाज सुधारक के विचारों को कुन्द करने में कोई कसर नहीं छोड़ी। स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य समाज आज ब्राह्मणों के पूर्ण नियंत्रण में है जिसके फलस्वरूप सभी सनातनी हिन्दुओं की आर्य समाज के रूप में पहचान बनाने, कर्मकाण्ड व मूर्तिपूजा रोकने की पहल व मुहिम लगभग समाप्त हो गई है। मध्ययुगीन भारत में संत कबीर, गुरू नानक देव, संत तुकाराम, संत रविदास आदि अनेक संतों व विचारकों ने जाति–प्रथा, छुआछूत, ऊँच–नीच व सामाजिक गैर–बराबरी का पुरजोर विरोध किया लेकिन ब्राह्मणों ने उनके प्रयासों को असफल कर दिया।

इस प्रकार उपरोक्त विश्लेषण एवं धार्मिक ग्रंथों के उद्दहरणों से यह स्थापित है कि हिन्दू समाज व्यवस्था में आरक्षण की बुनियाद डालने वाले आर्य ब्राह्मण थे जिन्होनें न केवल

पुरूष वर्ग को अधिकारों दायित्वों व निर्योक्यताओं के आधार पर विभाजित किया वरन् उक्त सामाजिक गैर बराबरी व शोषण आधारित समाज व्यवस्था को स्थायी बनाने के लिए ईश्वर उत्पन्न कर व बनाकर उन्हें एक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया इसलिए यह मानना अनुचित है कि आरक्षण भारतीय संविधान की देन है। भारतीय संविधान के अस्तित्व में आने के पूर्व ही अंग्रेजों के शासनकाल में शूद्र वर्ग के महामानवों व मनीषियों ने जन्म आधारित सामाजिक ताने बाने से निजात पाने के प्रयास प्रारम्भ कर दिए थे।

****

2.

आरक्षण की जन्म आधारित धार्मिक समाज व्यवस्था के विरूद्ध सशक्त प्रयास

अंग्रेजों ने शासन सत्ता के सुचारू संचालन के लिए पढ़े लिखे लोगों की आवश्यकता की पूर्ति हेतु शिक्षा के द्वार सभी के लिए खोले। हिन्दू वर्ण व्यवस्था के नीचे के पायदान पर धकियाये गये शूद्र वर्ण की विभिन्न जातियों के लोगों को भी शिक्षा प्राप्ति का अधिकार मिला। जो कुछ लोग शिक्षा प्राप्त कर ब्रिटिश सरकार की शासन व्यवस्था का हिस्सा बने उनको आत्म–सम्मान से जीने व समानता के लिए संघर्ष की प्रेरणा मिली। जो भारतीय नवयुवक शिक्षा ग्रहण करने विदेशों में गये उनमें स्वतंत्रता की भावना का संचार हुआ और पहली बार राष्ट्रीयता को न केवल बल मिला बल्कि धर्म आधारित हिन्दू समाज व्यवस्था के विरूद्ध खुलकर बोलने का वातावरण भी बना। कांग्रेस के अन्दर भी स्वामी अछूतानन्द व दक्षिण भारत के दलित नेताओं ने छुआछूत समाप्ति का मुद्दा उठाया और हिन्दू वर्ण व्यवस्था के कारण पीड़ित व वंचित वर्ग को सामाजिक गुलामी से मुक्ति के लिए दबाव बनाया।

स्वामी अछूतानंद जी आरम्भ में आर्य समाजी थे पर वे शीघ्र ही आर्य समाज से अलग हो गए थे। उन्होनें आर्य समाज के बारे में कहा कि ''इसका उद्देश्य ईसाइयों और मुसलमानों से शत्रुता बढ़ाकर हिन्दूओं को वेदों और ब्राह्मणों का दास बनाना है।''

स्वामी जी ने अपने आंदोलन के लिए 'आदि हिंदू' प्रेस स्थापित किया और 'आदि हिंदू' तथा 'अछूत' नामक अखबारों का प्रकाशन किया। वे हिंदी क्षेत्र में पहले दलित लेखक, पत्रकार और संपादक थे। उन्होने कांग्रेस पार्टी में रहते हुए दलितों की समस्याओं को उठाया उन्हें दलितों की समस्याओं को कैसे हल किया जा सकता है, इस हेतु गठित समिति का सदस्य भी बनाया गया लेकिन नगण्य आर्थिक सहयोग व कांग्रेस की अछूतों के प्रति उपेक्षित सोच ने उन्हें कांग्रेस छोड़ने को मजबूर कर दिया। तथापि उत्तर भारत में दलित चेतना लाने में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा।

महात्मा ज्योतिराव फूले, जिनका जन्म 1827 में एवं निधन 1890 में हुआ था, ने सन् 1869 में जाति के आधार पर आरक्षण की मांग की थी। उन्होनें ब्राह्मणवाद और जाति–प्रथा के खिलाफ विद्रोह किया था और दलित–पिछड़ी जातियों तथा भारतीय स्त्रियों की मुक्ति के लिए सामाजिक आंदोलन चलाया था। वे पहले भारतीय थे, जिन्होंने महाराष्ट्र में अछूतों और लड़कियों के लिए स्कूल खोला था। वे शूद्रों, अतिशूद्रों और स्त्रियों का अज्ञान दूर करके उनकी गुलामी की

जंजीरें तोड़ना चाहते थे। उन्होंने ब्राह्मणी शास्त्रों, पुरोहितवाद और जाति–प्रथा पर जो कठोर प्रहार किया, आगे चलकर वही बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर की 'जाति का उन्मूलन' पुस्तक का आधार बना। महात्मा फुले ने 1873 में 'सत्य शोधक समाज' की स्थापना की थी और इसी वर्ष उनकी क्रांतिकारी पुस्तक 'गुलामगीरी' प्रकाशित हुई थी। अछूतों की पीड़ादायक गुलामी के जो चित्र 'गुलामगीरी' में हमें मिलते हैं, उससे उन्नीसवीं शताब्दी के आधुनिक भारत के समाज की उस वास्तविक तस्वीर का पता चलता है जिसे ब्राह्मणों ने बनाया था। इसी पुस्तक में महात्मा फुले अंग्रेजी राजसत्ता का शुक्रिया अदा करते हुए लिखते हैं, ''ये लोग अंग्रेजों के उपकारों को कभी भूलेंगे नहीं। उन्होंने इन्हें आज सैकड़ों साल से चली आ रही ब्राह्मणशाही की गुलामी की फौलादी जंजीरों को तोड़ कर मुक्ति की राह दिखाई हैं। यदि वे यहां न आते तो ब्राह्मणों ने इन्हें कभी सम्मान और स्वतंत्रता की जिंदगी न गुजारने दी होती।''

उसी काल में केरल में नारायण गुरू (1854) जाति–प्रथा के विरूद्ध आंदोलन चला रहे थे। वह केरल की ईझवा नाम की दलित जाति में पैदा हुए थे। उन्होंने सभी मनुष्यों के लिए ''एक जाति, एक धर्म और एक ईश्वर'' की घोषणा की थी। उनका लोकप्रिय नारा था, ''जाति मत पूछो, जाति मत बताओ और जाति के बारे में मत सोचो।'' जाति की धारणा को खत्म करने के लिए यह एक महत्वपूर्ण नारा था। वर्णव्यवस्था के खिलाफ उनके विद्रोह का तरीका भी क्रांतिकारी था। उन्होंने नए मंदिर बनाए, जिनमें अछूत बिना रोक–टोक के जा सकते थे। ब्राह्मणों के मंदिरों में अछूतों के प्रवेश पर रोक थी। ऐसी स्थिति में अछूतों के लिए मंदिर बनाना ब्राह्मणों के खिलाफ खुला विद्रोह था। वर्ण व्यवस्था को यह बहुत बड़ी चुनौती थी उन्होंने भी दलितों के लिए स्कूल खोले शिक्षा के प्रचार प्रसार पर बल दिया। इस कारण उन्हें ब्राह्मणों व नायर जमीदारों के प्रतिरोध का सामना करना पड़ा।

परियार रामास्वामी नायकर (1879–1973) ने दक्षिण भारत में जाति प्रथा व ब्राह्मणवाद के विरूद्ध सशक्त आन्दोलन खड़ा किया। वे ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास नहीं रखते थे। उनका कहना था–ईश्वर नहीं है, जिसने ईश्वर का आविष्कार किया वह मूर्ख है, जिसने ईश्वर का प्रचार किया वह दुष्ट है और जिसने ईश्वर की पूजा की वह असभ्य है। वह धर्मशास्त्रों की पवित्रता में विश्वास नहीं करते थे और उनकी होली जलाते थे। उनका यह मानना था कि जब तक भारत में ईश्वर की मान्यता रहेगी सामाजिक भेदभाव व छुआछूत समाप्त नहीं होगी उन्होने यहाँ तक कहा कि ''अछूत लोगों के लिए क्या यह वांछनीय नहीं है कि वे शक्ति व हिंसा के बल पर इन सामाजिक विषमताओं से मुक्ति प्राप्त करें या इस प्रयत्न में अपने आपको समाप्त कर डाले।'' उन्होनें अछूतों, स्त्रियों व पिछड़ी जातियों की शिक्षा में अवरोध उत्पन्न करने वाले ब्राह्मणों को शिक्षा से वंचित रखे जाने पर बल दिया था। उन्होंने कहा था कि कम से कम पंद्रह वर्षों तक ब्राह्मणों और उच्च वर्गों का कॉलेज तथा तकनीकी संस्थानों में प्रवेश रोक देना चाहिए, तभी वर्णव्यवस्था को खत्म किया जा सकता है। वे अपने समय के सबसे प्रख्यात ओजस्वी वक्ता थे और लेखनी के भी धनी थे।

बंगाल में चान्द गुरू (1850–1930) ने शूद्रों को शिक्षित बनने की प्रेरणा दी। चांद गुरू बंगाल की एकनाम (या नमः) शूद्र जाति में पैदा हुए थे। दलित जाति को वहाँ 'चांडाल' कहा जाता था। ये लोग शिक्षा से वंचित थे। शिक्षा ग्रहण करने को वे पाप समझते थे। शिक्षा से भयंकर अनिष्ट होता है, ऐसी धारणा इन लोगों के बीच प्रचलित की गई थी। इसी धारणा के कारण चांद गुरू भी पढ़ नहीं सके थे। उन्होंने इस धारणा का खंडन किया और स्वयं पाठशाला खोल कर उसमें दलित बच्चों के लिए शिक्षा की व्यवस्था की। बंगाल में 'एकनाम' शूद्रों को चाण्डाल नाम से पुकारा जाता था। 1891 में उन्होनें 'चांडाल' शब्द के विरूद्ध आन्दोलन चलाया। यह वैसा ही आंदोलन था, जैसा कि गांधीजी के 'हरिजन' शब्द के खिलाफ दलितों ने चलाया था। चांद गुरू के प्रयासों से ब्रिटिश सरकार ने 'चांडाल' शब्द के खिलाफ आदेश जारी किया। आदेश में कहा गया कि वे लोग 'चांडाल' नहीं है और उन्हें 'चांडाल' बोलना दंडनीय अपराध माना जाएगा। यह एक बहुत बड़ी क्रांति थी, जो सफल हुई थी। चांद गुरू ने ब्राह्मणवादी व्यवस्था से टक्कर लेने के लिए 'मतुआ' धर्म चलाया था। दरअसल वे 'एकनाम' शूद्रों में अंधविश्वास और गलत धारणाओं को एक नई व्यवस्था देकर ही ध्वस्त कर सकते थे। इस आंदोलन के द्वारा उन्होनें स्पष्ट घोषणा की थी कि छुआछूत की जो व्यवस्था ब्राह्मणों ने बनाई है, उसे 'एकनाम' शूद्र समाज नहीं मानता। उनको मंदिर प्रवेश नहीं चाहिए। उनका अपना अलग मंदिर होगा। उन्होंने कहा कि हम यह मानने के लिए तैयार नहीं हैं कि हमें समाज में केवल निकृष्ट कार्य करना चाहिए और हम अच्छे कार्य नहीं कर सकते। कहा जाता है कि बंगाल में 'चांडाल' कहे जाने वाले दलितों को 'नमः शूद्र' नाम चांद गुरू ने ही दिया था और यह नाम संभवतः उनके 'मतुआ धर्म' में परस्पर अभिवादन के लिए प्रयुक्त होने वाला शब्द था।

गुरू घासीदास (1756) ने छत्तीसगढ़ व मध्यप्रदेश में जन जागरण की ज्योति जलाई। उनका जन्म गिरौद गांव में एक दलित परिवार में हुआ था। वे धार्मिक प्रवृत्ति के संत थे। उन्होनें 'सतनामी संप्रदाय' स्थापित किया और उसके माध्यम से दलित जातियों को संप्रदाय में शामिल कर सतनामी बनाया। दलितों के बीच जातीय भेदभाव को दूर करने में 'सतनामी' आंदोलन ने बहुत बड़ी भूमिका निभाई। 'सतनामी धर्म' के बारह नियम थे, जो इस प्रकार थे – 1. मनुष्य की एक ही जाति है, वह है मानव–जाति,

2. हिंसाचार न करें,

3. मनुष्य एक ही धर्म सतधर्म है,

4. मदिरा पान न करो,

5. अंधविश्वासी और परंपरावादी न बनो,

6. भाईचारा मेल–मिलाप बढ़ाओ,

7. हीन भावना को त्याग दो,

8. स्त्री पुरूष समान है,

9. मूर्ति–पूजा मत करो, मंदिर में मत जाओ,

10. मेहनत करके कमाओ खाओ,

11. अपनी व्यवस्था पर अटल रहो और

12. जीवित शरीर को मुर्दा बनाकर मत रखो।

उनके आंदोलन के तीन सूत्र थे– सतनामी बनो, संगठन बनाओ और संघर्ष करो।

आत्म–सम्मान व समानता के लिए संघर्ष :–

महापुरूषों के इन आंदोलनों ने जो सामाजिक परिवर्तन का वातावरण बनाया, उसे दलितों ने तो पसंद किया, पर ब्राह्मण व्यवस्था पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ा। लेकिन ये दलित आंदोलन विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न रूपों में चलने के बावजूद जाति–प्रथा के उन्मूलन के मुद्दे पर समान सोच के थे। इन समाज सुधारकों के प्रयासों से देश भर में दलितों व पिछड़ों को जाग्रत करने व अपने अधिकारों के लिए लामबद्ध होने का धरातल मिला ओर स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान दबाव समूह बनकर उभरा।

हिन्दूधर्म आधारित निर्योग्यताओं के कारण बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने शैशवकाल से ही निरन्तर अन्याय, अत्याचार, शोषण व भेदभाव सहा। अवज्ञा, अवहेलना व अवमानना का सामना किया। अछूत जाति में जन्म के कारण पग–पग पर दुर्वव्यवहार व पक्षपात का शिकार बने। पढ़–लिख कर सक्षम व समर्थ बन जाने के उपरान्त वे समाज में व्याप्त घृणा, ऊँच–नीच, जात–पांत, कर्म–काण्ड आदि को समाप्त कर एक आदर्श समाज की स्थापना करना चाहते थे। वे चाहते थे कि दलित उन पर थोपी गई समस्त निर्योग्यताओं से मुक्त होकर सम्मानजनक जीवन व्यतीत करें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होने कई संगठन बनाए, हजारों प्रदर्शन व आन्दोलन किए, सन् 1927 में ''मनु–स्मृति'' को आग के हवाले किया।

बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर के अनुसार धर्म एक वर्ण को ज्ञान प्राप्त करने, दूसरे को शस्त्र प्रयोग करने, तीसरे को धनार्जन करने व चौथे को केवल दूसरों की सेवा करने की हिदायत देता है जबकि प्रत्येक व्यक्ति को ज्ञान की, सुरक्षा के लिए शस्त्र की व जीवनयापन के लिए धन की आवश्यकता होती है। जो धर्म कुछ लोगों को शिक्षा प्राप्ति का अधिकार देकर शेष को निरक्षर व अज्ञानी बनाए रखने में विश्वास रखता है वह धर्म नहीं होकर अनन्त काल तक लोगों को मानसिक दास बनाए रखने का एक षड़यंत्र है। जो धर्म एक वर्ण को शस्त्र प्रयोग करने का अधिकार देकर शेष समाज को आत्मरक्षा के लिए उन पर आश्रित बनाए रखने में

विश्वास रखता है वह धर्म नहीं अपितु शेष समाज को शास्वत दास बनाए रखने की एक कुटिल योजना है। जो धर्म एक वर्ण को धन–सम्पदा बटोरने का अधिकार देकर शेष समाज को दीनता व दरिद्रता में जीने के लिए मजबूर करता है वह धर्म नहीं होकर तुच्छ स्वार्थपरता है। बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेड़कर ने महाराष्ट्र के नासिक जिले के येवला नामक स्थान पर 13 अक्टूबर, 1935 में कहा था कि ''हमने समाज में समानता का दर्जा प्राप्त करने के लिए हर प्रकार के प्रयास किए, सत्याग्रह किए परन्तु सब बेकार। हिन्दू समाज में समानता के लिए कोई स्थान नहीं है।

बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेड़कर के अनुसार, ''हिन्दू धर्म, पंथों और सिद्धान्तों का मिश्रित समूह ही हिन्दुत्व है। इसकी छत्रछाया में पलते हैं– एकेश्वरवाद, बहुदेववाद और सर्वेश्वरवाद। समस्त हिन्दू या तो महान् देवता शिव और विष्णु के उपासक अथवा उनके नारी प्रतिरूप, साथ ही देवी मातृशक्तियों, वृक्षों, चट्टानों और जलधाराओं में बसी आत्माओं और संरक्षक ग्राम्य देवताओं के उपासक हैं। ऐसे व्यक्ति जो अपने देवताओं को सर्व प्रकार की बलि देते हैं और ऐसे व्यक्ति जो अहिंसक हैं और जिन्हें वध शब्द से ही घृणा है। जिनके धार्मिक अनुष्ठानों में मात्र प्रार्थनाएँ, मंत्रोच्चारण सम्मिलित हैं और ऐसे भी हैं जो धर्म के नाम पर अकथनीय आडम्बरों में लिप्त हैं और इसमें उनका बाहुल्य है जो कुल मिलाकर शास्त्रद्रोही हैं और उनमें से कई तो ब्राह्मण की सत्ता नकारते हैं अथवा कम से कम उनके धर्माचार्य गैर ब्राह्मण और कोई कहता है कि वे अन्य हिन्दूओं के समान रीति–रिवाज अपनाता है इसलिए वह हिन्दू है तो भी झूठ है, क्योंकि सभी हिन्दूओं के रीति–रिवाज एक समान नहीं हैं। उन्होंने आगे कहा है कि ''हिन्दू सोसायटी उस बहुमंजिली मीनार की तरह है जिसमें प्रवेश करने के लिए न कोई सीढ़ी है न दरवाजा। जो जिस मंजिल में पैदा हो जाता है उसे उसी मंजिल में मरना होता है।''

दिनांक 11.7.1917 को बम्बई में श्री नारायण चन्द्रावरकर की अध्यक्षता में अस्प्रश्यों की एक सभा हुई जिसमें सत्ता में प्रतिनिधित्व व शिक्षा की व्यवस्था किए जाने हेतु निम्न प्रस्ताव संख्या 3 व 4 भी पारित किए गये।

''तीसरा प्रस्ताव जो सर्वसम्मति से पास किया गया वह यह था–भारत में डिप्रेस्ड क्लासेज जिन्हें अस्पृश्य कहा जाता है, की संख्या बहुत अधिक मानी जाती है और उनकी दशा अत्यंत शोचनीय है जिसके कारण उनके साथ ऐसा बर्ताव किया जाता है जो शिक्षा की दृष्टि से अन्य भारतीयों से कोसों दूर हैं, उनकी प्रगति के लिए उन्हें कोई अवसर नहीं मिलते हैं। इसलिए यह जनसभा दृढ़तापूर्वक महसूस करती है कि सरकार को डिप्रेस्ड क्लासेस की सुधार की योजना तथा काउंसिल का पुनर्गठन करना चाहिए जिसमें डिप्रेस्ड क्लासेज के हितों का पूरा ध्यान रखा जाए। इसलिए यह जनसभा ब्रिटिश सरकार से अनुरोध करती है कि सरकार लेजिस्लेटिव काउंसिल के लिए डिप्रेस्ड क्लासेज को अपने प्रतिनिधि चुनकर भेजने का अधिकार उनकी जनसंख्या के आधार पर प्रदान करे और उनकी सुरक्षा का दायित्व ले।''

''चौथा प्रस्ताव जो सर्वसम्मति से पास किया गया था वह यह था कि सरकार से अनुरोध किया जाए कि सरकार समाज के सभी वर्गों के सामाजिक उत्थान के लिए अनिवार्य एवं िशुल्क शिक्षा की यथाशीघ्र व्यवस्था करे क्योंकि किसी समुदाय के सदस्यों में शिक्षा का सार्वभौमिक विस्तार उस समाज के सामाजिक उत्थान पर निर्भर करता है और डिप्रेस्ड क्लासेज का पतन अशिक्षा अथवा निरक्षरता एवं अज्ञान के कारण ही है।

उपरोक्त सम्मेलन के एक सप्ताह बाद ही बम्बई में ही श्री बापूजी नामदेव बागेड़ की अध्यक्षता में अस्प्रश्यों का एक और सम्मेलन हुआ जिसमें भी निम्न प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किए गये–

1. ब्रिटिश शासन के प्रति वफादारी का प्रस्ताव।
2. 11 नवंबर 1917 को आयोजित बैठक में इस प्रस्ताव के बहुमत से घोषित किए जाने के बावजूद यह सभा कांग्रेस–लीग योजना को समर्थन नहीं देगी।
3. कि इस सभा की मंशा यह है कि भारत के प्रशासन पर ब्रिटिश शासन का तब तक नियंत्रण रहे जब तक कि सभी वर्ग, विशेषतया डिस्प्रेस्ड क्लासेज देश के प्रशासन में प्रभावी रूप से भागीदार होने की स्थिति में नहीं आते।
4. कि यदि ब्रिटिश सरकार ने भारतीय जनता को राजनैतिक सुविधाएं देने का निर्णय किया है तो यह सभा अनुरोध करती है कि सरकार को विभिन्न विधान सभाओं अथवा विधायिकाओं में अस्पृश्यों को अपने प्रतिनिधि भेजने के अधिकार देने चाहिए ताकि उनके नागरिक एवं राजनैतिक अधिकार सुनिश्चित किए जा सकें।
5. कि यह सभा बहिष्कृत भारत समाज (डिप्रैस्ड इंडिया एसोसिएशन) के उद्देश्यों को स्वीकृति प्रदान करती है और उसे अपनी ओर से भी श्री मान्टेग्यू के सम्मुख अपने प्रतिनिधि भेजने का समर्थन करती है।
6. कि यह सभा सरकार से अनुरोध करती है कि वह डिप्रेस्ड क्लासेज की विशेष आवश्यकताओं पर ध्यान देते हुए इनके लिए निःशुल्क तथा अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करें और डिप्रेस्ड क्लासेज के विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति के रूप में विशेष सुविधाएं प्रदान की जाएं।
7. कि यह सभा उपरोक्त सभी प्रस्ताव वायसराय तथा बम्बई सरकार के समक्ष भेजने के लिए अपने अध्यक्ष को प्राधिकृत करती है।''

मान्टेग्यू चेम्सफोर्ड रिपोर्ट में, जिस पर 1919 का भारत सरकार का अधिनियम आधारित था, बिल्कुल स्पष्ट रूप से कहा गया था कि संविधान में अस्पृश्यों की सुरक्षा का प्रावधान अवश्य किया जाए। वास्तव में 1919 के संविधान में अस्पृश्यों को सर्वाधिक अल्पसंख्यक माना गया था और उनकी मांगों के लिए संरक्षण एवं सुरक्षा का प्रावधान किया गया था। अब उन प्रावधानों को और विस्तृत करने तथा उनकी रूपरेखा में परिवर्तन करने का प्रश्न था। जहां तक दलित वर्गों (डिप्रेस्ड क्लासेज) का प्रश्न था, उनकी स्थिति बिल्कुल भिन्न थी। भारत सरकार के

अधिनियम 1919 में एक प्रावधान के अन्तर्गत यह अनिवार्य कर दिया गया था कि ब्रिटिश सरकार 10 वर्ष की अवधि समाप्त होने पर, संविधान की कार्यप्रणाली की जांच करने के लिए, एक रायल कमीशन नियुक्त करेगी, जो संविधान में आवश्यक समझे जाने वाले संशोधनों के लिए भी अपनी रिपोर्ट देगा। इस प्रकार 1928 में सर जॉन साईमन की अध्यक्षता में रॉयल कमीशन नियुक्त किया गया। भारतीयों को आशा थी कि कमीशन में उन्हें भी सम्मिलित किया जाएगा परंतु लॉर्ड बर्किनहेड ने, जो उस समय भारत के राज्य सचिव थे, कमीशन में भारतीयों के सम्मिलित किए जाने का विरोध किया और उसे पूर्णतया संसदीय आयोग (पार्लियामेंटरी कमीशन) बनाने पर बल दिया। उस पर कांग्रेस तथा उदारपंथियों ने इसे अपना अपमान समझकर उसका विरोध किया। उन्होंने एक बड़ा आंदोलन चला कर कमीशन का बहिष्कार किया। विरोध की उस भावना को शांत करने के लिए ब्रिटिश सरकार को यह घोषणा करनी पड़ी कि कमीशन का कार्य पूरा हो जाने के बाद भारत के लिए संविधान लागू करने से पहले भारतीय प्रतिनिधियों को विचार–विमर्श के लिए बुलाया जाएगा। इस घोषणा के अनुसार संसद के प्रतिनिधियों तथा ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधियों के साथ विचार–विमर्श करने के लिए लंदन में एक गोलमेज सम्मेलन में भारत के प्रतिनिधियों को बुलाया गया। बाबा साहब डॉ. अम्बेड़कर व श्री आर.श्री निवासन ने अस्पृश्यों की ओर से प्रतिनिधित्व हेतु आमंत्रित करने पर भाग लिया। 12 नवंबर 1930 को सम्राट जार्ज पंचम ने भारतीय गोलमेज सम्मेलन का औपचारिक रूप से उद्घाटन किया।

गोलमेज सम्मेलन की अल्पसंख्यक समिति की तरफ से बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने निम्न ज्ञापन पेश किया–

स्वायत्तशासी भारत में बहुमत वाले शासन में शामिल होने के लिए दलित वर्ग निम्नलिखित शर्तों पर अपनी सहमति देगें :–

शर्त संख्या – 1

समान नागरिकता–

वर्तमान परिस्थिति में दलित वर्ग सदा गुलाम बनाए रखने वाले बहुमत के शासन का समर्थन नहीं कर सकता। बहुमत का शासन स्थापित होने से पहले अस्पृश्यता का उन्मूलन किया जाना अनिवार्य होना चाहिए। यह बहुमत की इच्छा पर नहीं छोड़ना चाहिए। दलित वर्गों के लोगों को स्वतंत्र नागरिकों के वे सभी अधिकार मिलने चाहिए जो साधारणतया स्वतंत्र देश के सभी नागरिकों को प्राप्त हैं।

(क) अस्पृश्यता उन्मूलन तथा समान नागरिकता की स्थापना सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित मौलिक अधिकारों को भारत के संविधान का अंग बनाने का प्रस्ताव है।

मूल अधिकार

भारत में राज्य के सभी व्यक्ति कानूनी रूप से एक समान हों और उन्हें समान नागरिक अधिकार प्राप्त हों। कोई वर्तमान अधिनियम, विनियमन, आदेश, रूढ़ि या विधि की व्याख्या–जिसके द्वारा अस्पृश्यता के आधार पर किसी प्रकार का दंड असुविधा, अयोग्यता, आरोपित की जाती है अथवा राज्य के किसी नागरिक से किसी प्रकार का भेदभाव किया जाता है, वह उस दिन से समाप्त हो जाएगा, जब से भारत का संविधान लागू होगा।

(ख) भारत सरकार के अधिनियम 1919 की धारा 110 तथा 111 के अंतर्गत, जो छूट और सुविधाएं कार्यपालिका को अब प्राप्त है, उन्हें समाप्त करना तथा कार्यपालिका के कृत्यों में उनके उत्तरदायित्व को यूरोपियन ब्रिटिश नागरिक के उत्तरदायित्व के समान बनाना।

शर्त संख्या–2

समान अधिकारों का अबाध उपयोग

दलित वर्गों के लिए अधिकारों की घोषणा मात्र से कोई लाभ नहीं होगा। यदि दलित वर्ग समान नागरिक अधिकारों को उपयोग करेंगे तो निस्संदेह उन्हें रूढ़िवादी पूरे हिंदू समाज के प्रतिरोध का सामना करना पड़ेगा। इसलिए दलित वर्ग के लोग यह अनुभव करते हैं कि अधिकारों की ऐसी घोषणाएं केवल घोषणाएं बनकर ही न रह जाएं बल्कि दैनिक व्यवहार में आनी चाहिए। उन घोषित अधिकारों के प्रयोग में उठने वाली बाधाओं का सामना करने के लिए उचित दण्ड की व्यवस्था की जानी चाहिए।

(क) अतः दलित वर्ग यह प्रस्ताव करता है कि 1919 के भारत सरकार के अधिनियम के भाग 11 में अपराध, प्रक्रिया और दंड का प्रावधान करने वाली निम्नलिखित धारा जोड़ी जाए।

(1) नागरिकता के नियम का उल्लंघन करने पर दंड का प्रावधान

यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति को कानून के अलावा अस्पृश्यता के आधार पर आवास, लाभ, सुविधाओं का उपभोग करने, सरायों में ठहरने, शैक्षिक संस्थाओं में प्रवेश करने सड़कों पर चलने, तालाबों और पानी भरने के अन्य स्थानों, कुओं का प्रयोग करने, सड़क मार्ग या जल मार्गों के आवागमन के साधनों का उपयोग करने, सिनेमाघरों, लोक मनोरंजन के स्थानों जिनका प्रयोग सार्वजनिक रूप से होता हो, पर जाने से रोकेगा तो वह दंड का भागी होगा, जिसे, अपराध के अनुसार, अधिक से अधिक पांच वर्ष का कारावास हो सकता है और जुर्माना भी हो सकता है।

(ख) दलित वर्गों द्वारा अपने अधिकारों के शांतिपूर्वक उपभोग करने में हिंदू केवल बाधाएं ही नहीं डालते। उनका सबसे अधिक प्रचलित तरीका सामाजिक बहिष्कार है। यदि दलित वर्गों के अधिकार कट्टर हिंदुओं को नहीं पचते हैं, तो सामाजिक बहिष्कार उनका अचूक शस्त्र है।

सामाजिक बहिष्कार किस प्रकार और किन अवसरों पर किया जाता है उसका वर्णन बम्बई सरकार द्वारा वर्ष 1928 में गठित एक समिति की रिपोर्ट में विस्तार से किया गया है।

शर्त संख्या–3

भेदभाव के विरूद्ध संरक्षण

दलित वर्गों के लोग भविष्य में व्यवस्थापिका द्वारा कानून बनाने अथवा कार्यपालिका द्वारा भेदभावमूलक आदेश जारी करने के बारे में आशंकित है। इसलिए वे बहुसंख्यक शासन को तब तक स्वीकार नहीं करेंगे, जब तक कि संवैधानिक रूप से व्यवस्थापिका द्वारा या प्रशासन में दलितों के विरूद्ध भेदभावमूलक नियम बनाने या आदेश जारी करने को असंभव नहीं बना दिया जाता।

इसलिए यह प्रस्ताव किया जाता है कि भारत के सांविधिक कानून में निम्नलिखित स्थाई प्रावधान कर दिए जाएं –

''सारे भारत में व्यवस्थापिका अथवा कार्यपालिका कोई भी ऐसे कानून नहीं बना सकती अथवा आदेश पारित नहीं कर सकती अथवा कोई नियम अथवा विनियम नहीं बना सकती, जिनसे राज्य की जनता के अधिकारों का उल्लंघन होता हो तथा भारत भूमि पर कहीं भी पूर्व प्रचलित विषमता अथवा अस्पृश्यतामूलक रीतियों की झलक मिलती हो। इसमें–

1. ठेके लेना–देना, मुकदमें दायर करना, पक्षकार बनना, गवाही देना, पैतृक संपत्ति प्राप्त करना, जायदाद बेचना, खरीदना, पट्टे पर जमीन लेना आदि का प्रावधान किया जाये।
2. सिवाय उन हालात के जहां किसी को वंचित रखना आवश्यक हो दलितों को नागरिक एवं सैनिक सेवाओं में भर्ती, शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश की व्यवस्था की जाए।
3. सराय होटलों में ठहरना, शैक्षिक संस्थाओं में भर्ती, नदियों के जल का उपयोग करना, झरनों, कुओं, तालाबों, सामान्य सड़कों, गलियों, सभी प्रकार की सवारियों चाहे वह धरती, जल अथवा आसमान पर हों, का उपयोग करना, सिनेमा, थियेटर आदि सभी सार्वजनिक स्थानों का उपयोग करना और सभी प्रकार के अधिकार अन्य नागरिकों की भांति जाति, रंग, धर्म अथवा वर्ग का भेदभाव किए बिना पूर्ण अधिकार प्राप्त हों।
4. बिना किसी प्रकार के भेदभाव किए सभी धार्मिक स्थानों – जो उस धर्म के लोगों के लिए सार्वजनिक रूप से खुले होगें, अछूतों के लिए भी खुले रहेंगे।
5. अन्य लोगों के समान अस्पृश्यों को न्यायालय में समान अधिकार, अन्य अधिकारों तथा उनकी जायदाद की सुरक्षा की गारंटी बिना पूर्व शर्त के दी जाएगी, जिससे उन्हें दंड देने, सताए जाने या जुर्माने की आशंका हो।

शर्त संख्या–4

विधानमंडलों में समुचित प्रतिनिधित्व?

दलित वर्गों को अपने कल्याण के लिए विधायिका एवं कार्यपालिका पर प्रभाव डालने के लिए समुचित राजनीतिक शक्ति प्रदान की जाये। इस विचार से वे मांग करते है कि चुनाव नियम में निम्नलिखित प्रावधान किए जाएं : –

1. प्रांतीय तथा केन्द्रीय विधायिक में उन्हें पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जाए।
2. उनको अपने ही वर्ग से प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया जाए जिसके लिए–

   (क) वयस्क मताधिकार और

   (ख) प्रथम दस वर्षों के लिए पृथक मतदान द्वारा उसके बाद संयुक्त चुनाव प्रणाली द्वारा उनके लिए सुरक्षित सीटों पर चुनाव का प्रावधान हो। यह भी जरूरी है कि संयुक्त चुनाव प्रणाली उनपर जबरदस्ती उनकी इच्छा के विरूद्ध तब तक नहीं थोपी जाए, जब तक संयुक्त चुनाव प्रणाली में पूर्ण वयस्क मताधिकार का विधान न हो।

टिप्पणी : – दलित वर्गों के लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व तब तक नहीं समझा जा सकता, जब तक कि अन्य समुदायों का प्रतिनिधित्व परिभाषित न हो। परन्तु यह अवश्य समझ लेना चाहिए कि दलित वर्ग इसे स्वीकार नहीं करेंगे कि किसी अन्य समुदाय के प्रतिनिधित्व को उनसे बेहतर सुविधाएं दे दी जाएं। इस दिशा में दलित वर्ग के लोग किसी प्रकार की अलाभकर स्थिति में रहना पसंद नहीं करेंगे। किसी भी हालत में बम्बई और मद्रास के दलित वर्ग अपनी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के लिए विशेष स्थान चाहेंगे, भले ही अन्य समुदायों को उन प्रांतों में कितना ही प्रतिनिधित्व मिले।

शर्त संख्या–5

नौकरियों में यथोचित प्रतिनिधित्व

सरकारी नौकरियों पर सवर्णों ने एकाधिकार जमा रखा है। इस कारण दलित वर्गों की भारी उपेक्षा हो रही है। सवर्ण लोगों ने न्याय और समानता को धत्ता बता कर सवर्ण हिंदुओं को लाभ पहुंचाने के लिए कानून की अनदेखी कर अपने अधिकारों का दुरूपयोग किया है।

दलित वर्ग उन उच्च जातीय हिन्दू अधिकारियों के हाथों बेतहाशा पीड़ित हुए हैं जिन्होंने नियम–कानून का दुरूपयोग करते हुए या दलित वर्गीय लोगों के प्रति पूर्वाग्रह रखते हुए सवर्णों के पक्ष के हित में न्याय, निष्पक्षता और अन्तरात्मा की परवाह न करते हुए सरकारी सेवाओं पर अपना अधिकार जमा लिया। इस अनिष्ट से बचाव केवल सरकारी सेवाओं में उच्च वर्ग के एकाधिपत्य को समाप्त करके एवं उन सेवाओं की आवश्यकता को इस ढंग से नियमित करके किया जा सकता है कि उनमें दलित वर्गों सहित सभी समुदायों की पर्याप्त हिस्सेदारी हो। इस

उद्देश्य के लिए दलित वर्गों को संवैधानिक कानून के अंग के रूप में निम्न कानूनी प्रस्ताव बनाने होंगे।

1. सरकारी सेवाओं की भर्ती और उनका नियंत्रण करने के लिए भारत में और प्रत्येक प्रान्त में लोक सेवा आयोग गठित किया जायेगा।

2. लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य को विधायिका द्वारा पारित प्रस्ताव के अतिरिक्त न तो हटाया जायेगा और न उसे सेवानिवृत्ति के पश्चात् राजसत्ता (क्राउन) के अधीन किसी पद पर नियुक्त ही किया जायेगा।

3. दक्षता के परीक्षणों, जिन्हें जैसा निर्धारण किया जाय, के अधीन लोक सेवा आयोग का यह कर्त्तव्य होगा –

(अ) सेवाओं की भर्ती इस ढंग से करना जिससे सभी समुदायों को समुचित और पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिल सके, और

(ब) विभिन्न समुदायों की किसी संबंधित विशेष सेवा में प्रतिनिधित्व की वर्तमान मात्रा के अनुसार रोजगार में समय–समय पर प्राथमिकता का नियमन करना।

सरकारी सेवा में प्रवेश की योग्यता : –

अछूतों की मांग है कि देश में न्यूनतम योग्यता के आधार पर सरकारी सेवाओं में एक निश्चित अनुपात अछूतों के लिए आरक्षित किया जाए। उच्चवर्गीय हिन्दू जैसे अछूतों की अन्य मांगों का विरोध करते है वैसे ही इसका भी करते हैं। उनका कहना है कि क्षमता और कार्युशलता सरकार के लिए आवश्यक है और नौकरियों का आधार वही रहना चाहिए न कि जाति या वर्ग। अनिवार्य योग्यताओं के विषय में कोई विवाद नहीं है, न ही क्षमता और कार्यकुशलता के मापदंड के बारे में कोई मतभेद है। मतभेद का एक ही कारण है और वह बहुत महत्वपूर्ण है। वह यह है कि क्या जाति और वर्ग का सरकारी नौकरियों में नियुक्ति के लिए ध्यान रखा जाए ? केवल शैक्षिक योग्यता पर टिके रहने के बजाए उच्चवर्गीय हिंदू इस बात पर बल देते हैं कि सरकारी नौकरियों में नियुक्तियां सभी वर्गों की खुली प्रतियोगिता के आधार पर की जाएं। उनका तर्क है कि इससे दोनों उद्देश्यों की पूर्ति हो जाएगी। यह व्यवस्था कार्यकुशलता के उद्देश्य को पूरा करेगी। दूसरे इससे अछूतों को सरकारी नौकरियों में प्रवेश पर कोई प्रतिबंध भी न होगा।

उच्चवर्गीय हिंदू अछूतों की मांग का विरोध यह कह कर जता रहे हैं कि कार्यकुशलता और प्रतियोगिता ही विश्वसनीय व्यवस्था है। इसके लिए भी तर्क असली मुद्दे से हट कर दिया जाता है। प्रश्न यह नहीं है कि क्या सरकारी नौकरियों के लिए कार्यकुशल व्यक्तियों का चुनाव प्रतियोगिता के आधार पर किया जाना ही उचित है ? प्रश्न यह है कि क्या मात्र यही कर देने से अछूत उम्मीदवार नौकरियों में आ जाएंगे क्योंकि प्रतियोगिता जाति और वर्ग का भेद किए

बिना सबके लिए खुली होगी। लेकिन यह देश की शिक्षा प्रणाली पर निर्भर है। क्या शिक्षा यथोचित रूप से लोकतांत्रिक है ? क्या शिक्षा सुविधाओं का व्यापक विस्तार है ? यदि नहीं, तो सभी वर्गों को खुली प्रतियोगिता में शामिल होने के लिए कहना अंधेर है। भारत में यह मूल स्थिति ही धोखे की जननी है। भारत में उच्च शिक्षा पर उच्चवर्गीय हिंदूओं खासकर ब्राह्माणों का एकाधिकार है। इस समाज में अछूतों को तो शिक्षा प्राप्ति के अवसर ही नहीं दिये जाते। उनकी निर्धनता ऊंचे पदों के लिए उच्च शिक्षा दिलाने में सबसे बड़ी बाधा है – – और उच्च सरकारी पद हैं, जिनका कोई मतलब होता है, क्योंकि उनका ही कारगर महत्व होता है – ये उनकी पहुंच से दूर हैं। सरकार उनकी उच्च शिक्षा दिलाने का दायित्व नहीं लेगी। उन्होंने अपने प्रस्ताव में यह मांग की है – – और उच्चवर्णीय हिंदू अपना दान सहयोग अछूतों को नहीं देंगे –– हिंदू दानशीलता पूर्णतः ब्राह्माणों के लिए है ––इस तरह नौकरियों के लिए अछूतों को प्रतियोगिताओं पर निर्भर करने को कहना उनके साथ एक पाखण्ड है। अछूतों द्वारा कही गई बात किसी भी प्रकार अनुचित नहीं है। वे मानते हैं कि कार्य–कुशलता बनाए रखना जरूरी है। इसी कारण अपने प्रस्ताव में उन्होंने स्वयं ही कहा है कि न्यूनतम योग्यता की शर्त पूरी होने पर ही उनकी मांग स्वीकार की जाए। दूसरे शब्दों में अछूतों की मांग यही है कि सभी सरकारी नौकरियों के लिए न्यूनतम योग्यता निर्धारित की जाए। और यदि किसी पद के लिए दो व्यक्ति आवेदन करें और अछूत उम्मीदवार न्यूनतम योग्यता रखता है तो चाहे उच्चवर्गीय हिन्दू उम्मीदवार को न्यूनतम योग्यता से बढ़ कर योग्यता भी प्राप्त क्यों न हो, अछूत उम्मीदवार को प्राथमिकता दी जाए। इसका वास्तविक अर्थ यही है कि नियुक्ति का आधार न्यूनतम योग्यता ही हो, उच्चतम योग्यता नहीं है। यह उन लोगों को विचित्र लग सकता है, जिन्हें इस बात पर कोई आपत्ति नहीं है कि कार्यकुशलता के मापदंड पर सरकारी सेवाओं में कुछ वर्गों का एकाधिार हो जाए। पर क्या कैम्पवेल ने यह नहीं कहा कि अपनी सरकार अच्छी कही जान वाली गैरों की सरकार से बेहतर होती है ? अछूतों की मांग और क्या है? वे कार्यकुशल प्रशासन को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं । इसलिए सरकारी सेवाओं के लिए वे न्यूनतम योग्यता की शर्त स्वीकार करने के लिए तैयार है। अछूत अच्छी सरकार के मुकाबले अपनी सरकार का विचार त्याग देने के लिए तैयार नहीं है। उच्चतम योग्यता के आधार पर बनाई गई सरकार सांप्रदायिक सरकार होगी। इसलिए क्योंकि मात्र उच्चवर्गीय हिन्दू ही न्यूनतम योग्यता की अपेक्षा उच्च शिक्षा का दावा पेश कर सकते हैं। अछूत ऐसा नहीं चाहते । उनका कहना यह है कि कार्यकुशल सरकार के लिए न्यूनतम योग्यता पर्याप्त है, क्योंकि इसी से अपनी सरकार संभव है। इसलिए सरकारी नौकरियों में प्रवेश के लिए न्यूनतम योग्यता का नियम होना चाहिए। इसी से स्व–सरकार और कार्यकुशल सरकार सुनिश्चित हो सकती है।

लोक सेवा में प्रवेश का प्रश्न सभी अल्पसंख्यक समुदायों के लिए महत्वपूर्ण प्रश्न है, परन्तु अनुसूचित जातियों के लिए यह प्रश्न सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि इस प्रश्न का संबंध उनके जीवन–मरण से है। इसके अनेक कारण हैं कि ऐसा क्यों है। सर्वप्रथम, अनुसूचित जातियों के

युवाओं के लिए आजीविका के साधन के दरवाजे खोलने का प्रश्न है। यह इस प्रश्न का एक पक्ष है जिसे कि अनुसूचित जातियां और यहां तक की भारत सरकार भी उपेक्षा नहीं कर सकती। व्यापार और उद्योग आजीविका के खुले साधन हैं, परन्तु ये सब अनुसूचित जातियों एवं पिछड़ो के लिए बंद है। केवल सरकारी सेवा ही ऐसा साधन है जिससे वे अपनी आजीविका प्राप्त कर सकते हैं। यद्यपि यह एक महत्वपूर्ण पक्ष है, केवल यही एक ऐसा पक्ष नहीं है जो इस प्रश्न को इतना महत्वपूर्ण बना देता है एक अन्य पक्ष भी है जो इसे महत्वपूर्ण बनाता है। इस पक्ष का संबंध उस प्रभाव से है जो सरकार के संरक्षण की उदारता से इस समुदाय की शिक्षा के प्रश्न पर पड़ेगा। उच्चवर्गीय हिंदू समुदाय का मामला इसका द्योतक है। उच्चवर्गीय हिंदू समुदाय ने तीव्रता से प्रगति की है जो स्पष्ट है कि शिक्षा की गहरी जड़ें उच्चवर्गीय हिन्दू समाज में व्याप्त हैं। इसका कारण यह है कि शिक्षा से सरकारी सेवा में प्रवेश पाने के लिए आजीविका का दरवाजा खुल जाता है। आजीविका का इसी प्रकार का आश्वासन अनुसूचित जातियों एवं पिछड़ों के लिए भी आवश्यक है जो शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ी हुई हैं। ऊपर बताए गए दो तर्कों से कहीं बड़ा एक तीसरा तर्क भी है। इसका संबंध इस बात से है कि अनुसूचित जातियों के सामान्य लोगों के हित अनुसूचित जातियों के शिक्षित लोगों के हितों से भिन्न हैं। यह बात इससे स्पष्ट होगी यदि यह महसूस किया जाए कि लोक प्रशासन का लोक कल्याण की दृष्टि से कितना महत्व है। सर्वप्रथम, आजकल प्रशासन की शक्ति में विधान बनाने की शक्ति निहित होती है।

आधुनिक समय में कोई भी कानून न तो पूरा है, और न ही सुविस्तृत है। इनमें से अधिकांश कानून प्रशासन को वे नियम बनाने की शक्ति देते हैं जो अधिनियम के उद्देश्यों को प्रभावी बनाने के लिए बनाए जाते हैं। दूसरे, कानून की प्रभावोत्पादकता इसी बात पर निर्भर करती है कि इसे किस प्रकार से कार्यान्वित किया जाता है। अतः अच्छे कानून की अपेक्षा अच्छे प्रशासन का कहीं अधिक महत्व है। कानून अच्छे सिद्ध नहीं हो सकते, यदि प्रशासन ठीक न हो। इसलिए प्रशासन का प्रश्न उन पिछड़ी व अनुसूचित जातियों के लिए अधिक महत्वपूर्ण है जो अच्छे नियमों की अपेक्षा अच्छे प्रशासन में रूचि रखती हैं। क्या वर्तमान प्रशासन अच्छा प्रशासन है ? वर्तमान प्रशासन के बारे मे अनुसूचित व पिछड़ी जातियां क्या सोचती हैं ? इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता कि व्यापक रूप से यह अभिमत है कि भारत भर में अनुसूचित जातियों की ओर समग्र प्रशासन अपनी प्रवृति में द्वेषपूर्ण, न्यायविहीन और विकृत है। वास्तव में अनुसूचित जातियों की पीड़ा और परेशानी उस विवेक से उत्पन्न होती है जो उन सभी मामलों में लोक सेवा अधिकारियों में निहित है जिन्हें अनुसूचित जातियों के विरूद्ध अपनाया जाता है और जिनका उद्देश्य यह होता हे कि अनुसूचित जातियों को नीचे रखा जाए। उच्चवर्गीय हिन्दू और मुसलमान अफसरों की मानसिकता को देखते हुए, अनुसूचित जातियों के प्रति भेदभाव होना निश्चित है। यह स्थिति उस समय तक बनी रहेगी जब तक कि प्रशासन अपने कर्मचारियों को ऐसे वर्गों से लेता रहेगा जो अनुसूचित जातियों के विरूद्ध हैं और जो उनके दमन में विश्वास रखते हैं। इससे अधिक कोई अन्य सशक्त तर्क नहीं हो सकता जो अनुसूचित जातियों की

सामान्य जनसंख्या के लाभ और कल्याण के निमित्त हो और जो यह दिखाता हो कि लोक सेवा में अनुसूचित जातियों का प्रवेश सबसे सशक्त विचार समझा जाना चाहिए। अछूत विशाल हिन्दू जन–समूह से घिरे हैं जो उनका विरोधी है और जिसे उनके साथ असमानता अथवा अत्याचार करने में लज्जा नहीं आती। ऐसे अन्यायों को दूर करने के लिए जो उनके विरूद्ध प्रतिदिन होते हैं अछूतों को प्रशासन की सहायता चाहिए। इस प्रशासन की प्रकृति और गठन क्या होगा ? सारांश में यह कहा जा सकता है कि भारत में प्रशासन पूर्णतया उच्चवर्गीय हिन्दूओं के हाथ में है। इस पर उनका एकाधिकार है। ऊपर से लेकर नीचे तक शासन नियंत्रण उच्चवर्गीय हिन्दूओं के हाथ में है। कोई भी ऐसा विभाग नहीं है जहां उच्चवर्गीय हिन्दूओं का आधिपत्य नहीं है। दूसरी बात याद रखने की यह है कि प्रशासन क्षेत्र में उच्चवर्गीय हिन्दू न केवल समाज–विरोधी हैं, अपितु निश्चित रूप से अछूतों के प्रति शत्रुतापूर्ण हैं। उनका उद्देश्य है कि अछूतों से भेदभाव रखा जाए तथा उन्हें कानून के लाभ से वंचित किया जाए और दमन व अत्याचार के विरूद्ध उन्हें कानून का सहारा भी न प्राप्त हो। इसका परिणाम यह है कि अछूत हिन्दू जनसंख्या तथा उच्चवर्गीय हिन्दू बाहुल्य के बीच फंसे है। एक यदि दूसरे के विरूद्ध गलत काम करता है तो दूसरा उसे अभियोगी बनाने की अपेक्षा गलती करने वाले की रक्षा करता है।

कुछ तथ्य संदेह से परे है। शरारत का स्रोत स्पष्ट है। अनुसूचित जातियों की सेवा में रूचि होना कितना महत्वपूर्ण है यह बात भी स्पष्ट है। इस बात में कोई विवाद नहीं कर सकता कि अन्य समुदायों की तुलना में अनुसूचित जातियों के विरूद्ध 4 जुलाई, 1934 के सरकार के संकल्प में विभेद करके गंभीर शरारात की गई है। इससे अनुसूचित जातियों के लिए परिणाम कितने घातक सिद्ध हुए, यह आई.सी.एस. में सांप्रदायिक अनुपात से संबंधित आगे दी गई तालिका में दर्शाया गया है –

तालिका 1

1942 में आई.सी.एस. में साम्प्रदायिक अनुपात

	समुदाय	*कुल संख्या*	*यूरोपीय लोगों को सम्मिलित करते हुए 1056 के जोड़ का प्रतिशत*	*यूरोपीय लोगों को छोड़ते हुए 568 के जोड़ का प्रतिशत*
1.	यूरोपीय	488	42.4	––
2	हिन्दू (उच्चवर्गीय)	363	34.4	63.2
3	मुसलमान	109	10.3	19.2
4	भारतीय ईसाई	23	2.2	4.0
5	एंग्लो–इंडियन	9	.9	1.5
6	पारसी	9	.9	1.5
7	सिख	11	1.0	2.0
8	अनुसूचित जातियां	1	00	00
9	अन्य	43	3.9	8.0
	जोड़	1056		

तालिका 2

आई.सी.एस. के अनुपात की तुलना में जनसंख्या का अनुपात

	समुदाय	*यूरोपीय लोगों को छोड़कर आई.सी.एस. का वास्तविक अनुपात*	*जनसंख्या का अनुपात*	*अधिक्य (+) कमी(–) सेवा अनुपात जिसकी तुलना जनसंख्या के अनुपात से की गई*
1.	हिन्दू	62.3	50.0	+13.2
2	मुसलमान	19.2	23.6	–4.4
3	भारतीय ईसाई	4.0	1.0	+3.0
4	एंग्लो–इंडियन	1.5	.03	+1.47
5	पारसी	1.5	0.3	+1.47
6	सिख	2.0	1.3	+0.7
7	अनुसूचित जातियां	––	13.5	–13.5
8	अन्य	8.0	––	––

इन तालिकाओं से निम्नलिखित अकाट्य निष्कर्ष निकलते हैं :–

1. सभी समुदायों ने आई.सी.एस. में प्रतिनिधित्व का सानुपातिक भाग प्राप्त करने की दिशा में समुचित प्रगति की है। केवल यही अपवाद है कि भाग्यहीन अनुसूचित जातियों के समुदाय ने कोई प्रगति नहीं की है।
2. कुछ समुदायों ने आई.सी.एस. में अपनी जनसंख्या के अनुपात से कहीं अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त किया है। यह बात बिन्दुओं के मामले में अधिक दर्शनीय है। यूरोपीय लोगों का प्रतिशत भाग 50 है। इसे छोड़कर यदि इसकी तुलना भारतीयों की स्थिति से की जाये तो हिंदुओं को आई.सी.एस. नियुक्तियों में 63 प्रतिशत पद प्राप्त हुए हैं जबकि उनकी जनसंख्या का 50 प्रतिशत है। हिंदू 13 प्रतिशत अधिक पदों का लाभ उठा रहे हैं।
3. प्रतियोगिता की असमानता को ठीक करने के लिए ही नामांकन पद्धति अपनाई गई है। फिर भी कुछ समुदायों को नामांकन का लाभ दिया गया है। अनुसूचित जातियों में से केवल एक सदस्य को नामांकित किया गया जबकि नामांकन के जरिए 31 उच्चवर्गीय हिन्दू 74 मुसलमान एवं 151 यूरोपिय लोग लिए गये हैं। यहां भी अनुसूचित जातियों के साथ न्याय नहीं किया गया है।

सरकारी सेवाओं में नियुक्ति करने वाले अधिकांशतः उच्चवर्गीय हिन्दू विशेषकर ब्राह्मण ही होते हैं और उनसे यह आशा करना संभव नहीं है कि वे अपने स्वविवेक का उपयोग अनुसूचित जातियों के पक्ष में करेगें। जब तक चयन की वर्तमान पद्धति जारी रहेगी तब तक अनुसूचित

जातियों के हितों का बलिदान होता रहेगा इसलिए भारत सरकार को बिना देर किए यह घोषित करना चाहिए :

1. अनुसूचित जातियां अन्य समुदायों के समान सेवाओं के उद्देश्य की पूर्ति के लिए अल्पसंख्यक है।

2. आई.पी.एस. के वार्षिक रिक्त स्थानों के लिए तथा उन अन्य केन्द्रीय सेवाओं के लिए जहाँ अखिल भारतीय स्तर की भर्ती अथवा स्थानीय तौर पर भर्ती की जाती है अनुसूचित जातियों का अनुपात जनसंख्या के अनुसार 13.5 प्रतिशत निर्धारित किया जाना चाहिए वे न्याय व समता की दृष्टि से आरक्षण के अधिकारी हैं।

जब तक यह नहीं किया जाता है तब तक अनुसूचित जातियों को लोकसेवाओं में जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व नहीं मिल सकेगा।

शर्त संख्या–6

पक्षपात अथवा हितों की उपेक्षा को दूर करना

इस बात को देखते हुए कि भविष्य में जब शासन बहुसंख्यक पुरातनपंथी हिंदुओं के हाथ में होगा, दलित वर्गों की आशंका है कि बहुसंख्यक सवर्ण हिंदू उनसे कोई सहानुभूति नहीं दिखाएंगे और संभवतः उनके हितों के प्रति पूर्वाग्रह बरतेंगे तथा उनकी मूलभूत आवश्यकताओं की उपेक्षा करेंगे – जिनकी अनदेखी नहीं की जा सकती। संविधान में प्रावधान अवश्य कर दिए गए हैं। विधायिका में दलित वर्ग के लोग अल्पसंख्यक रूप में ही रहेंगे। दलित वर्ग के लोग यह नितांत आवश्यक समझते हैं कि संविधान में उनके हितों की सुरक्षा के लिए व्यवस्था की जाए। इसलिए प्रस्तावित किया जाता है कि संविधान में निम्नलिखित प्रावधान किए जाएं :–

1. भारत की केन्द्रीय विधायिका तथा प्रत्येक प्रांतीय विधानसभा और कार्यपालिका अथवा कानून द्वारा गठित अन्य संस्थाओं के लिए यह अनिवार्य कर दिया जाए कि वे दलित वर्गों के लिए शिक्षा, स्वच्छता, नौकरियों में रखने हेतु उचित कानून बनाएं और कोई ऐसा कार्य न करें जो दलितों के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले।
2. जब कभी किसी भी प्रान्त में अथवा भारत में इन प्रावधानों का उल्लंघन होगा तो काउसिंल के गर्वनर जनरल को प्रान्तीय व्यवस्था तथा सैकेट्री ऑफ स्टेट को केन्द्रीय व्यवस्था के लिए अपील की जा सकेगी।

   यह प्रतीत हो कि प्रांतीय अथवा केन्द्रीय सरकारें इस प्रावधान को लागू करने के लिए आवश्यक कदम नहीं उठाती, तब ऐसे प्रत्येक मामले में गर्वनर जनरल तथा

भारत सरकार अपील सुनने वाले प्राधिकरण होने के नाते इस प्रावधान के पालन के लिए कुछ समय निर्धारित करें और प्रांतीय और केन्द्रीय सरकार इस विषय में उनको मानने को बाध्य हों।

शर्त संख्या–7

विशेष विभागीय सुरक्षा

बेबस, बेसहारा और बेकस दलितों की दुर्दशा का मुख्य कारण समस्त सवर्ण हिंदुओं की हठधर्मी है, जिसने कभी दलित वर्ग को बराबरी का स्थान नहीं दिया और न ही समानता का व्यवहार किया। उनकी आर्थिक स्थिति के विषय में केवल इतना ही कहना पर्याप्त नहीं है कि वे गरीबी के मारे हुए हैं अथवा वे भूमिहीन मजदूर वर्ग से हैं। वैसे तो ये दोनों बातें सही हैं तब भी यह ध्यान देने की बात है कि दलित वर्गों की गरीबी की जड़ अधिकांश रूप से सामाजिक पूर्वाग्रह हैं, जिसके परिणामस्वरूप वे जीविकोपार्जन के सभी साधनों से वंचित है। यह एक सत्य है, जो दलित वर्गों तथा साधारण सवर्ण हिंदू मजदूरों के बीच अंतर पैदा करता है और प्रायः उनकी मुसीबतों की जड़ है। यह भी ध्यान देने की बात है कि दलितों के उत्पीड़न तथा उनके दमन का कुचक्र विभिन्न प्रकार का है और उन मुसीबतों और अत्याचारों से अपनी रक्षा करने की उनकी क्षमता बहुत सीमित है। अस्पृश्यों पर जो अत्याचारों की घटनाएं साधारणतया सारे देश में घटित होती हैं, उनका वर्णन मद्रास सरकार के बोर्ड ऑफ रेवेन्यू के दिनांक 5 नवंबर 1892 के कार्यवाही सार संख्या 723 में किया गया है जिसका एक उद्धरण नीचे दिया जा रहा है –

''134–दमन के बहुत से तरीके हैं जिनकी ओर संक्षेप में संकेत किया गया है। पेरियाओं द्वारा आदेश न मानने पर उनके मालिक उन्हें दंड देने के लिए –

1. गांव पंचायत में अथवा फौजदारी अदालत में उनके विरूद्ध झूठे मामले दायर करते हैं।
2. पेरिया लोगों की बस्ती के चारों ओर जो परती जमीन है सरकार से प्राप्त कर लिया जाता है और पेरियाओं के जानवरों को घेर लिया जाता है तथा उन्हें मंदिरों में जाने से रोक दिया जाता है।
3. पेरिया लोगों के विरूद्ध सरकारी कागजात में छलकपट से मिरासियों के नाम लिखवा देते हैं।
4. गलतबयानी करके उनके पुश्तैनी अधिकारों को समाप्त कर उन्हें बर्बाद करते हैं।
5. उनके खेतों को जाने वाले पानी को रोक कर फसल सुखा डाल देते हैं।
6. जमींदारों द्वारा लगान बाकी होने पर बिना कानूनी नोटिस दिए उनकी जमीन से उन्हें बेदखल कर देते हैं।

''135– सभी माल एवं फौजदारी मामलों को निपटाने के लिए भारत में न्यायालय हैं, परन्तु उनसे गांव वालों की समस्याएं भी हल नहीं होती। न्यायालय में जाने की हिम्मत होनी चाहिए, कानूनी जानकारी में धन खर्च होता है। कानूनी खर्च की क्षमता होनी चाहिए और मुकदमों तथा अपीलों के दौरान जीवनयापन का साधन होना चाहिए। अधिकांश लोग निचली अदालतों के फैसले पर निर्भर करते हैं। जिन अधिकारियों के अधीन ये न्यायालय होते हैं, वे प्रायः भ्रष्ट होते हैं अथवा सामान्यतया वे धनाढ़यों तथा भूस्वामियों के वर्ग से संबंधित होते हैं।

136– ऐसे धनाढयों और जमीदारों के वर्ग के होने के कारण वे अपने ही देश के लोगों को नहीं प्रभावित करते, बल्कि यूरोपवासियों को भी प्रभावित करते हैं। प्रत्येक कार्यालय ऊपर से नीचे तक उन्हीं धनाढ़यों और भूस्वामियों के प्रतिनिधियों से भरा हुआ है। उनकी मर्जी के विरूद्ध कुछ नहीं किया जा सकता। शासन में उनका बहुत दबदबा है।

इन परिस्थितियों में निस्संदेह दलित वर्गों का उत्थान उस समय तक केवल स्वप्न बनकर रह जाएगा, जब तक शासन की समस्त कार्य–प्रणाली की अग्रिम पंक्ति में उनके उत्थान को वरीयता नहीं दी जाएगी और जब तक शासन स्तर से सबको समान अवसर प्रदान करने की नीति नहीं अपनाई जाती। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए दलित वर्गों का यह प्रस्ताव है कि शासन संविधान प्रदत्त नियम स्थायी रूप से लागू करने के लिए एक विभाग बनाए, जो नियमों को लागू करने की व्यवस्था करें।

1. संविधान लागू करने के साथ–साथ एक मंत्री के अधीन ऐसा विभाग भी बने, जो दलित वर्गों के हितों और उनके कल्याण कार्यों की देखरेख करे।
2. उस विभाग का मंत्री अपने पद पर तभी तक रहेगा जब तक केन्द्रीय व्यवस्थपिका का उस पर विश्वास हो।
3. उस मंत्री को कानून द्वारा प्रदत्त अधिकारों और कर्तव्यों का पालन ऐसे करना पड़ेगा कि उसको दलित वर्गों के दमन और उनके प्रति सामाजिक अन्याय से उनकी सुरक्षा करते हुए सारे देश में उनके लिए कल्याणकारी कार्य करने का उत्तरदायित्व सौंपा जाए।
4. गर्वनर जनरल निम्नलिखित नियम बनाने के लिए सक्षम हो :–

   (क) दलित वर्गों के कल्याण के संबंध में मंत्री को सभी अथवा कुछ ऐसे अधिकार अथवा कर्त्तव्य सौंपना, जिससे वह मंत्री उनकी शिक्षा एवं स्वच्छता आदि के सबंध में नियम बना सके।

   (ख) दलित वर्गों के कल्याण के लिए प्रत्येक प्रान्त में ब्यूरो स्थापित करना, जो मंत्री के अधीन रह कर कार्य करे और मंत्री को सहयोग करे।

शर्त संख्या – 8

दलित वर्ग और मंत्रिमंडल

यह आवश्यक है कि सरकारी कार्यकलाप पर प्रभाव डालने हेतु व्यवस्थापिक में उन्हें प्रतिनिधित्व मिले, जिससे कि दलित वर्गों को सरकार की सामान्य नीति निर्धारण करने का अवसर प्रदान किया जा सके। यह तभी संभव है, जब उन्हें मंत्रिमण्डल में शामिल किया जाए। दलित वर्गों के लोग इसलिए यह दावा करते हैं कि वे साधारणतया अन्य अल्पसंख्यकों के साथ–साथ मंत्रिमंडल में उन्हें भी शामिल करने का नैतिक अधिकार सुनिश्चित किया जाए। इसे ध्यान में रखते हुए दलित वर्गों के लोग प्रस्ताव करते हैं कि गर्वनर–जनरल तथा सभी प्रांतों के गर्वनरों को आवश्यक निर्देश दे दिए जाएं कि वे अपने मंत्रिमंडल में दलित वर्गों को यथोचित प्रतिनिधित्व दें।

ध्यान देने योग्य बात यह थी कि यद्यपि रिपोर्ट को विस्तृत रूप में संपूर्ण सहमति प्राप्त नहीं हुई थी, परन्तु राजनैतिक एवं संवैधानिक मामलों में अस्पृश्यों का पृथक अस्तित्व आम सहमति से स्वीकार कर लिया गया था।

प्रथम गोलमेज सम्मेलन के समाप्त होने से पहले इस निर्णय पर राजनीतिक दलों में से केवल कांग्रेस का रवैया स्पष्ट नहीं था। इसका कारण यह था कि कांग्रेस ने गोलमेज सम्मेलन का बहिष्कार किया था और सरकार के विरूद्ध सविनय अवज्ञा आंदोलन चलाने में लगी थी। कुछ समय पश्चात् दूसरा गोलमेज सम्मेलन भी आरंभ होने का समय आ गया। ब्रिटिश सरकार तथा कांग्रेस में समझौता हुआ जिसके फलस्वरूप कांग्रेस गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए तैयार हो गई और गोलमेज सम्मेलन के सामने जो समस्याएं उठीं उनका हल ढूंढ निकालने में कांग्रेस भी अपना योगदान करने पर सहमत हो गई।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में अस्पृश्यों की मांगों पर गांधी जी का रूख उनके अजीबोगरीब चरित्र का द्योतक है। जब दूसरे गोलमेज सम्मेलन के लिए सभी प्रतिनिधि एकत्र हुए तब संघीय ढांचा समिति (फेडरल स्ट्रक्चर कमेटी) की प्रथम बैठक हुई। संघीय ढांचा समिति में दिनांक 15 सितंबर, 1931 को गांधी जी ने अपना जो प्रथम भाषण दिया उसमें उन्होंने अस्पृश्यों की समस्या पर इस प्रकार कहा –

''कांग्रेस ने अस्तित्व में आते ही तथाकथित अस्पृश्यों की समस्या अपने हाथों में ले ली है। कोई समय था जबकि सामाजिक सम्मेलन कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशनों का प्रमुख अंग हुआ करता था, जिसके लिए स्व. रानाडे ने अपनी शक्ति लगा दी थी। अस्पृश्यों से सबंधित सुधार के विषय को प्रमुख स्थान दिया गया था। परन्तु 1920 में कांग्रेस ने अस्पृश्यता निवारण के प्रश्न के लिए बड़ा कदम उठाया, जिससे कि अस्पृश्यता निवारण कांग्रेस मंच का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम बन जाए। कांग्रेस ने सभी वर्गों में एकता लाने के लिए हिंदू और मुस्लिम एकता को

स्वराज प्राप्त करने के लिए जितना आवश्यक समझा, उतना ही सभी वर्गों में एकता और अस्पृश्यता निवारण पर बल दिया था। कांग्रेस की अस्पृश्यों के हित में जो स्थिति 1920 में थी वही आज भी है। इस प्रकार आप देखेंगे कि कांग्रेस ने शुरू से ही राष्ट्रीय हित के प्रश्नों पर कार्य किया।''

बाबा साहब अम्बेडकर ने कहा कि जिस किसी ने इस विषय पर अध्ययन किया होगा, उसे ज्ञात होगा कि वर्ष 1922 में कांग्रेस ने बारदोली कार्यक्रम में अस्पृश्योद्धार की जिस योजना को स्वीकार किया था, कांग्रेस कितनी विफल रही और वह कार्य उसने किस प्रकार हिंदू महासभा के मत्थे मढ़ दिया। किसी को भी यह कहने में कोई संकोच नहीं होगा कि गांधी जी ने ऊपर जो कुछ कहा, बिल्कुल झूठ था। श्री गांधी के भाषण से यह संकेत नहीं मिलता कि श्री गांधी अस्पृश्यों की मांगों पर क्या करने वाले थे, य़द्यपि मैं उनका अभिप्राय समझ गया था। परन्तु अधिक समय तक लोगों को वह यह सोचने से न रोक सके कि इस दिशा में उनकी क्या स्थिति होने जा रही है। सितंबर 17, 1931 को संघीय ढांचा समिति की जो बैठक हुई, उसमें श्री गांधी के हाथ में एक अवसर था। बैठक की कार्यसूची में संघीय ढांचा समिति के सदस्यों के चुनाव का प्रश्न भी शामिल था। इस विषय में श्री गांधी के निम्नलिखित विचार थे –

''मैं इस उप–शीर्ष (पांच) – विशेष हितों में विशेष निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा प्रतिनिधित्व पर आता हूँ। मैं कांग्रेस के पक्ष में बोलूंगा। कांग्रेस ने हिंदू, मुसलमान, सिख एकता पर विशेष जोर दिया है। इसके लिए ठोस ऐतिहासिक कारण हैं परन्तु कांग्रेस किसी भी रूप में इस सिद्धांत को जारी नहीं रखेगी। मैंने विशेष हितों की सूची सुनी है। जहां तक अस्पृश्यों का संबंध है, मैं पूरी तरह से सही समझ गया था कि डॉक्टर अम्बेडकर क्या कहना चाहते हैं, परन्तु अस्पृश्यों के हित में उसके प्रतिनिधित्व के लिए कांग्रेस डाक्टर अम्बेडकर के साथ है। अस्पृश्यों के हित कांग्रेस के सामने उतने ही स्पष्ट हैं, जितने पूरे देश के किसी अन्य व्यक्ति को स्पष्ट हो सकते हैं। अतः किसी और विशेष प्रतिनिधित्व का मैं पूरी ताकत से विरोध करूंगा।''

यह श्री गांधी द्वारा अछूतों के विरूद्ध कांग्रेस की युद्ध घोषणा के अतिरिक्त कुछ नहीं था। इसके परिणामस्वरूप कांग्रेस और अस्पृश्यों में संघर्ष शुरू हो गया। श्री गांधी की घोषणा से बाबा साहब अम्बेडकर को मालूम हो गया कि श्री गांधी उस अल्पसंख्यक समिति में क्या करेंगे जिसमें इस मुख्य विषय पर विचार होना था। श्री गांधी की योजना थी कि हिंदू, मुसलमान और सिखों में समझौता कराकर सांप्रदायिक समस्या का पटाक्षेप करते हुए अस्पृश्यों को अलग छोड़ दिया जाए। अल्पसंख्यक समिति की बैठक से पहलें ही श्री गांधी स्वंय अकेले ही मुसलमानों से समझौता करने में जुट गये। परन्तु कोई समझौता न हो सका।

बाबा साहब अम्बेडकर ने कहा कि ''प्रधानमंत्री, मुझे एक बात स्पष्ट करने की अनुमति दें कि दलित वर्गों ने ब्रिटिश सरकार से भारतीयों को तुरन्त सत्ता हस्तांतरित करने के लिए अभी कोई उत्तेजना नहीं दिखाई, न वे इसके लिए आतुर हैं। ब्रिटिश सरकार के खिलाफ उनकी कुछ

विशेष शिकायतें हैं और मैं समझता हूँ कि मैंने उन शिकायतों को बहुत सही और स्पष्ट ढंग से पेश किया है। वास्तव में सच तो यह है कि दलित वर्ग के लोग राजनीतिक शक्ति के हस्तान्तरण के लिए व्याकुल नहीं है। स्पष्टतः उनकी स्थिति इस प्रकार की है कि वे सत्ता हस्तांतरण के लिए आतुर नहीं हैं, परंतु यदि इस समय राजनीतिक सत्ता का हस्तांतरण करने के लिए जो होहल्ला मचा हुआ है, ब्रिटिश सरकार उसका सामना करने में अपने को बेबस पाती है। हम यह जानते हैं कि दलित वर्ग के लोग वर्तमान परिस्थितियों में इसका प्रतिरोध करने की स्थिति में नहीं हैं। तब हमारा निवेदन यह है कि सत्ता हस्तांतरण कुछ शर्तों के साथ ऐसी व्यवस्था में हो कि किसी गिरोह के हाथ में सारी शक्ति न चली जाए किसी अल्पतंत्र के हाथ में न चली जाए अथवा कुछ लोगों के गिरोह की मुट्ठी में न दब जाए, चाहे वे मुसलमान हों, या हिंदू। वरन वह हल ऐसा हो कि अपने–अपने समुदाय के अनुपात में सत्ता में सबको हिस्सा मिले। इस विचार से मुझे ऐसा नहीं लगता कि संघीय ढांचा समिति में मैं उस समय तक कैसे भाग लूं जब तक कि मैं यह नहीं समझ पाऊं कि उस समय तक मेरी तथा मेरे समुदाय की क्या स्थिति होगी।''

17 अगस्त, 1932 को प्रधानमंत्री ने सांप्रदायिक प्रश्न पर अपने निर्णय की घोषणा की। उसमें अस्पृश्यों से संबंधित जो निर्णय दिया गया था वह इस प्रकार था, साम्प्रदायिक आधार पर प्रतिनिधित्व के अलावा दलित समुदाय को भी प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया जो निम्न है–

''**ब्रिटिश सरकार का 1932 का सांप्रदायिक निर्णय** – (Communal Award) जिसमें दलित वर्गों के वे सदस्य, जो मतदान करने के पात्र हैं, सामान्य निर्वाचन क्षेत्र में मतदान कर सकेंगे। यह देखते हुए कि ये वर्ग केवल इसी तरीके से अपने बलबूते पर विधायिकाओं में समुचित प्रतिनिधित्व नहीं पा सकेंगे, उन्हें उतने समय तक के लिए ही विधायिकाओं में उचित प्रतिनिधित्व मिल सके, इस उद्देश्य के लिए खास क्षेत्र नियत किए गए हैं। वे सीटें उन विशेष निर्वाचनक्षेत्रों में केवल चुने गए दलित वर्गों द्वारा ही भरी जाएंगी। कोई भी मतदाता, जो विशेष निर्वाचन क्षेत्र में मतदान करेगा, वह सामान्य निर्वाचन क्षेत्र में भी मतदान कर सकेगा। ये विशेष निर्वाचन क्षेत्र मद्रास को छोड़ उन चुने हुए इलाकों में बनाए जाएंगे, जहां दलित वर्गों की आबादी अधिक हो। परन्तु ये निर्वाचन क्षेत्र पूरे प्रांत में फैले होंगे।

बंगाल में ऐसा करना संभव है, जहां सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में दलित मतदाताओं की संख्या अधिक है। इस प्रकार जब तक इस विषय में जांच रिपोर्ट नहीं मिल जाती, तब तक बंगाल में दलित वर्गों के विशेष निर्वाचन क्षेत्रों की संख्या निश्चित नहीं की गई है। ऐसा विचार है कि बंगाल विधानसभा में दलित वर्गों के लिए दस से कम संख्या नहीं होनी चाहिए।

अभी तक अंतिम रूप से तय नहीं किया गया है कि सभी प्रांतों में विशेष दलित वर्ग निर्वाचन क्षेत्रों में कौन से लोग और मतदाता कैसे मतदान के अधिकारी होंगे। इसका निश्चय मताधिकार समिति की रिपोर्ट में उल्लिखित नियमों के अनुसार होगा। कुछ उत्तरी प्रांतों के विषय

में संशोधन किया जा सकता है, जहां अस्पृश्यता के निर्धारित मापदंड प्रांत की अवस्था को देखते हुए परिभाषा के प्रतिकूल पाई जाएगी।

अंग्रेज सरकार यह नहीं मानती कि अस्पृश्यों के लिए नियत इन विशेष निर्वाचन क्षेत्रों की किसी सीमित अवधि के बाद भी आवश्यकता पड़ेगी। उसका विचार है कि यदि पहले भी नहीं, तो मतसूचियों के संशोधन की परिच्छेद 6 में वर्णित व्यवस्था के अनुसार 20 साल बाद तो यह व्यवस्था समाप्त हो जाएगी।

श्री गांधी को अहसास हुआ कि उनकी धमकी का असर नहीं हो रहा है। उन्हें इसकी भी परवाह नहीं रही कि प्रधान मंत्री से पंच–निर्णय करने की मांग पर उन्होंने भी हस्ताक्षर किये थे और इस नाते वह पंच–निर्णय को मानने को बाध्य थे। उन्होंने प्रधानमंत्री के किए–कराये पर पानी फेरना शुरू कर दिया।

गांधी जी ने दलितों को उनके प्रतिनिधि चुनने के अधिकार को वापिस लेने के लिए यर्वदा जेल से दिनांक 18.08.1932 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री जी को पत्र लिखा उसका ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने दिनांक 08.09.1932 को जवाब पेशकर गांधी जी के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया जवाब के कुछ अंश निम्न प्रकार हैं–

हमें जब दलित संस्थाओं से बहुत सी अपीलें प्राप्त हुई, सभी लोग यह भी मानते हैं कि सामाजिक विषमताओं से शोषण होता है और आपने भी यह स्वीकार किया है, तो हमने यह अपना कर्त्तव्य समझा कि विधानसभाओं में दलित वर्गों को सही अनुपात में प्रतिनिधित्व के अधिकारों की सुरक्षा की व्यवस्था की जाए। हम ऐसा कुछ भी नहीं करना चाहते थे, जिससे उनका संबंध हिन्दू समाज से टूट जाए। आपने स्वयं अपने 11 मार्च के पत्र में लिखा था कि आप विधानसभाओं में उनके प्रतिनिधित्व के विरूद्ध नहीं थे।

जहां विशेष निर्वाचन–क्षेत्र होंगे, वहां सामान्य हिंदुओं के निर्वाचन–क्षेत्रों में दलित वर्गों को मत देने से वंचित नहीं किया जाएगा। इस प्रकार दलित वर्गों के लिए दोहरे मतों का अधिकार होगा। एक विशेष निर्वाचन क्षेत्र के अपने सदस्य के लिए, दूसरा हिंदू समाज के सामान्य सदस्य के लिए, जिसे आपने अस्पृश्यों के लिए सांप्रदायिक निर्वाचन कहा है, हमने जान बूझकर उसके विपरीत फैसला दिया है और तय किया है कि दलित वर्ग के मतदाता सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में सवर्ण हिंदू उम्मीदवारों को मत दे सकेंगे तथा सवर्ण हिन्दू मतदाता दलित उम्मीदवार के पक्ष में उसके निर्वाचन क्षेत्र में मतदान कर सकेंगे। इस प्रकार हिंदू समाज की एकता को सुरक्षित रखा गया है।

हमने यह बात अनुभव की है कि उत्तरदायी सरकार के आंरभिक काल में प्रांतीय विधानसभाओं में, जो भी बहुमत में आए वहां दलितों की पसंद के भी कुछ प्रतिनिधि चुने जाएं, जबकि स्वयं आपने सर सैमुअल होर को अपने पत्र में लिखा था कि सवर्ण हिंदुओं ने दलितों

को सदियों से दलित बना रखा है। इसलिए नौ पांतों में से सात प्रांतों की विधानसभाओं में अपनी कठिनाईयों की आवाज उठाने के लिए उन्हें भी चुना जाए और यदि उनके हितों के विरूद्ध कुछ किया जाए, तो उसके विरोध में अपने विचार रख सकें, जिनकी बात विधानसभा या सरकार में कोई नहीं सुनता। हमने वहीं किया है, जैसा किसी भी बेबाक व्यक्ति को करना चाहिए। हम नहीं समझते कि वर्तमान हालात में मताधिकार की किसी प्रणाली के तहत यह व्यावहारिक हो सकता है कि ऐसे प्रतिनिधि, जो वास्तव में उनके प्रतिनिधि हैं, बहुमत प्राप्त सवर्ण हिंदुओं द्वारा चुने जाएंगे। आप तो बस दलितों को, जो सदियों से आज तक सामाजिक शिकंजे में जकड़े हुए हैं, अपने मनपसन्द के ऐसे प्रतिनिधियों को चुनने से रोकना चाहते हैं जो विधानसभाओं में जाकर उनकी ओर से आवाज उठा सकें, जिसका उनके भविष्य पर गहरा प्रभाव पड़ सके।

इन नितांत निष्पक्ष और सुविचारित प्रस्तावों के संदर्भ में आपके द्वारा लिए गए निर्णय को मैं उचित नहीं समझता। मैं तो यही समझता हूं कि आपने वास्तविक तथ्यों से भयभीत होकर यह निर्णय लिया है।

20 सितम्बर, 1932 को गांधीजी ने अस्पृश्यों को पृथक मतदान देने के विरूद्ध आमरण अनसन शुरू कर दिया। बाबा साहब के अनुसार श्री गांधी ने आमरण अनसन की घोषणा की लेकिन वे मरना नहीं चाहते थे और बहुत लम्बे जीवन के आकांक्षी थे लेकिन अनसन से समस्या उत्पन्न हो गई। बाबा साहब ने कहा समस्या यह भी थी कि श्री गांधी के प्राण कैसे बचाए जाएं ? उनके प्राण बचाने का केवल एक ही उपाय था, वह यह था कि सांप्रदायिक पंचाट को रद्द कर दिया जाए जिसके बारे में श्री गांधी कहते थे कि इसने उनकी आत्मा को हिला दिया है। प्रधानमंत्री ने एकदम स्पष्ट कर दिया था कि ब्रिटिश मंत्रीमण्डल उसे वापस नहीं लेगा और न ही उसमें अपने आप कोई परिवर्तन करेगा, परन्तु वे किसी ऐसे सिद्धांत को जो सवर्ण हिंदुओं और अस्पृश्यों को मान्य हो, उसके स्थान पर लाने के लिए तैयार थे। चूंकि मुझे गोलमेज सम्मेलन में दलितों का प्रतिनिधित्व करने का सौभाग्य मिला था, इसलिए यह मान लिया गया कि अस्पृश्यों की सहमति मेरे उसमें शामिल हुए बिना मान्य नहीं होगी। आश्चर्य की बात यह थी कि भारत के अस्पृश्यों के प्रतिनिधि और नेता के रूप में मेरी स्थिति पर कांग्रेसियों ने प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया, वरन् उसे वास्तविक रूप से स्वीकार किया। स्वभावतः सबकी आंखे मेरी ओर लगी थीं, जैसे कि मैं इस नाटक का खलनायक होऊं।

यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं कि इन जटिल परिस्थितियों में, मैं असमंजस में पड़ गया। मेरे सामने दो ही रास्ते थे। मेरे सामने कर्तव्य था, जिसे मैं मानवीय कर्तव्य मानता हूँ कि श्री गांधी के प्राणों को बचाया जाए। दूसरी ओर मेरे सामने समस्या थी कि अस्पृश्यों के उन अधिकारों की रक्षा की जाय जो प्रधानमंत्री ने दिए थे। मैंने मानवता की पुकार को सुना और श्री

गांधी के प्राणों की रक्षा की। मैं सांप्रदायिक पंचाट में ऐसे ढंग से परिस्थितिवश परिवर्तन करने के लिए राजी हो गया जो श्री गांधी को संतोषजनक लगे।

24 सितम्बर 1932 को पूना पेक्ट पर बाबा साहब ने गांधी के प्राण बचाने के लिए हस्ताक्षर किए।

<u>पूना पैक्ट का मूल पाठ</u> : –

समझौते का मूल पाठ निम्न प्रकार से था –

1. प्रांतीय विधानसभाओं में सामान्य निर्वाचित सीटों में से दलित वर्गों के लिए सीटें सुरक्षित की जाएंगी जो निम्न प्रकार होंगी।

   मद्रास 30, बम्बई और सिंध मिला कर 15, पंजाब 8, बिहार एवं उड़ीसा 18, मध्य प्रांत 20, असम 7, बंगाल 30, संयुक्त प्रांत 20, कुल योग 148, ये संख्या प्रांतीय काउंसिलों में कुल सीटों की संख्या पर आधारित थी, जिन्हें प्रधानमंत्री ने अपने फैसले में घोषित किया था।
2. इन सीटों का चुनाव संयुक्त निर्वाचन प्रणाली द्वारा निम्नलिखित प्रक्रिया से किया जाएगाः

   दलित वर्गों के सभी लोग जिनके नाम उस निर्वाचन क्षेत्र की मतदाता सूची में दर्ज होगें, एक निर्वाचन मंडल में होंगे, जो प्रत्येक सुरक्षित सीट के लिए दलित वर्गों के चार अभ्यर्थियों का पैनल चुनेगा। वह चुनाव–पद्धति एकल मत प्रणाली के आधार पर होगी। ऐसे प्राथमिक चुनाव में जिन चार सदस्यों को सबसे अधिक मत मिलेंगे, वे सामान्य निर्वाचन के लिए उम्मीदवार माने जाएंगे।

3. केंद्रीय विधानमंडल में दलित वर्गों का प्रतिनिधित्व उपरोक्त खंड 2 में उपबंधित रीति से संयुक्त निर्वाचन प्रणाली के सिद्धांत पर होगा और प्रांतीय विधानमंडलों में उनके प्रतिनिधित्व के लिए प्राथमिक निर्वाचन के तरीके द्वारा सीटों का आरक्षण होगा।
4. केंद्रीय विधानमंडल में अंग्रेजी राज के तहत सीटों में से दलित वर्गों के लिए सुरक्षित सीटों की संख्या 18 प्रतिशत होगी।
5. उम्मीदवारों के पैनल की प्राथमिक चुनाव व्यवस्था केंद्रीय तथा प्रांतीय विधानमंडलों के लिए जिनका ऊपर उल्लेख किया गया है प्रथम दस वर्ष के बाद समाप्त हो जाएगी। दोनों पक्षों की आपसी सहमति पर निम्नलिखित पैरा 6 के अनुसार इसे पहले भी समाप्त किया जा सकता है।
6. प्रांतीय तथा केंद्रीय विधानमंडलों में दलितों के लिए सीटों का प्रतिनिधित्व, जैसा कि ऊपर खंड 1 और 4 में दिया गया है, तब तक जारी रहेगा, जब तक कि दोनों संबंधित पक्षों में आपसी समझौते द्वारा उसे समाप्त करने पर सहमति नहीं हो जाती।

7. केंद्रीय तथा प्रांतीय विधानमंडलों के चुनाव के लिए दलितों को मतदान का अधिकार उसी प्रकार होगा जैसा लोथियन समिति की रिपोर्ट में कहा गया है।
8. दलित वर्गों के सदस्यों को स्थानीय निकायों के चुनावों तथा सरकारी नौकरियों में अस्पृश्य होने के आधार पर अयोग्य नहीं ठहराया जाएगा। दलितों के प्रतिनिधित्व को पूरा करने के लिए सभी तरह के प्रयत्न किए जाएंगे और सरकारी नौकरियों में उनकी नियुक्ति निर्धारित शैक्षिक योग्यता के अनुसार की जाएगी।
9. सभी प्रांतों में शैक्षिक अनुदान से उन दलितों के बच्चों को सुविधाएं प्रदान करने के लिए समुचित धनराशि नियत की जाएगी।

समझौते की शर्तें श्री गांधी ने मान ली और उनको भारत सरकार के अधिनियम में शामिल कर लिया गया। पूना पैक्ट पर विभिन्न प्रतिक्रियाएं हुई। अस्पृश्य दुखी थे। ऐसा होना स्वाभाविक था। बहुत से लोग उस समझौते के पक्ष में नहीं है। वे यह जानते हैं कि यह सही है कि प्रधानमंत्री द्वारा कम्युनल अवार्ड में दी गई सीटों की अपेक्षा पूना पैक्ट में अस्पृश्यों को अधिक सीटें दी गई हैं। पूना पैक्ट से अस्पृश्यों को 148 सीटें मिली है, जबकि कम्युनल अवार्ड में 78 सीटें मिलनी थीं। परन्तु इससे यह परिणाम निकालना कि कम्युनल अवार्ड की अपेक्षा पूना पैक्ट में बहुत कुछ अधिक दिया गया है, वास्तव में कम्युनल अवार्ड की उपेक्षा करना है क्योंकि कम्युनल अवार्ड ने अस्पृश्यों को वास्तविक प्रतिनिधित्व दिया था।

कम्युनल अवार्ड से अस्पृश्यों को दो लाभ थे –

1. पृथक मतदाता प्रणाली द्वारा अस्पृश्यों को सीटों का निश्चित कोटा, जिन पर अस्पृश्य उम्मीदवारों को अस्पृश्यों द्वारा ही चुना जा सकता है।
2. दोहरी मतदान सुविधा – वे एक वोट का उपयोग पृथक मतदान के तहत दे सकते थे और दूसरा आम चुनाव के समय देते।

अब यदि पूना पैक्ट ने सीटों का कोटा बढ़ा दिया है तो इसने दोहरे मत की सुविधा भी समाप्त कर दी है। सीटों की वृद्धि दोहरे मत की सुविधा की हानि की क्षतिपूर्ति कभी नहीं कर सकती। कम्युनल अवार्ड द्वारा दिया गया दोहरे मतदानका अधिकार अमूल्य एवं विशेष्ज्ञ अधिकार था। यह एक राजनीतिक हथियार था, जिसकी बराबरी नहीं की जा सकती। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में मतदान करने योग्य अस्पृश्यों की संख्या पूर्ण मतदान संख्या का दसवां भाग है। इस मतदान शक्ति से आम हिंदू उम्मीदवारों के चुनाव में अस्पृश्यों की स्थिति निर्णायक होती, चाहे साधिकार न भी हो। कोई भी सवर्ण हिंदू अपने निर्वाचन क्षेत्र में अस्पृश्यों की उपेक्षा नहीं कर पाता और अस्पृश्यों को आंख दिखाने की स्थिति में भी न रहता। अस्पृश्यों के मतों पर निर्भर करता। आज अस्पृश्यों की कम्युनल अवार्ड की अपेक्षा कहीं अधिक सीटें मिली हैं। लेकिन वास्तविक प्रतिनिधित्व नहीं मिला। प्रत्येक सदस्य यदि क्षुब्ध नहीं भी है, तो भी उदासीन है। यदि

कम्युनल अवार्ड द्वारा दिया गया दोहरे मतदान का अधिकार बरकरार रहता, तो अस्पृश्यों को कुछ सीटें भले ही कम मिलती, परंतु प्रत्येक सदस्य अस्पृश्यों के लिए भी प्रतिनिधि होता। अस्पृश्यों के लिए अब सीटों की संख्या में की गई बढ़ोतरी नहीं है। इससे पृथक मतदान प्रणाली और दोहरे मतदान की क्षतिपूर्ति नहीं होती। हिंदुओं ने यद्यपि पूना पैक्ट पर खुशियां नहीं मनाईं, वे इसे पसंद नहीं करते। वे इस अफरातफरी में श्री गांधी के प्राणों की रक्षा के लिए चिंतित थे। इस दौरान भावना की लहर चल रही थी कि श्री गांधी के प्राण बचाना महान कार्य है। इसलिए जब उन्होंने समझौते की शर्तें देखी, तो वे उन्हें पसंद नहीं थीं, लेकिन उनमें उस समझौते को अस्वीकार करने का भी साहस नहीं था। जिस समझौते को हिंदुओं ने पसंद नहीं किया और अस्पृश्य उसके विरोध में थे, पूना पैक्ट को दोनों पक्षों को स्वीकार करना पड़ा, और उसे भारत सरकार के अधिनियम में शामिल कर लिया गया।

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में दलित आंदोलन ने सममुच एक नई करवट ली थी। पूरे देश का दलित वर्ग इससे जुड़ा और हिंदू व्यवस्था से टकराने की घटनाएं देश के कोने–कोने में घटने लगीं। दलितों ने गांवों में उन व्यवस्थाओं का उल्लंघन करना शुरू कर दिया जो उन पर थोपी गई थीं। फलतः देशभर में दलित को उच्च वर्ग व गांव की दबंग जातियों की हिंसा का शिकार होना पड़ा, उनका सामाजिक बहिष्कार किया जाने लगा और उन्हें गांवो से पलायन करना पड़ा। यह गुलामी के खिलाफ खुला विद्रोह था। इस विद्रोह में बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के इन शब्दों ने जैसे जान ही डाल दी थी, ''दलितों तुम विद्रोह करो। तुम्हारे पास खोने के लिए गुलामी के सिवाय कुछ नहीं है, पर पाने के लिए आजादी है।''

ऐसी ही एक घटना ने बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर को हिला दिया। उस घटना ने न केवल उन्हें दलितों की असहाय स्थिति के बारे में और गहराई से अध्ययन करने के लिए बाध्य किया, बल्कि उन्हें धर्मांतरण के निर्णय तक पहुंचा दिया। यह घटना 1935 की है। बंबई सरकार ने आदेश जारी किया था कि सार्वजनिक स्कूलों में अछूतों के बच्चों को प्रवेश दिया जाए। अतः बंबई प्रेसीडेंसी के अहमदाबाद जनपद के धोल्का तालुका में कविठा नामक गांव में 8 अगस्त 1935 को गांव के अछूत अपने चार बच्चों को स्कूल में दाखिल कराने ले गए। इसे देखने के लिए सवर्ण हिंदू स्कूल के चारों ओर जमा हो गए। जब दाखिला हो गया तो अगले कुछ दिन हिंदुओं ने अपने बच्चों को स्कूल से हटा लिया। उसके कुछ दिन बाद एक ब्राह्मण ने गांव के एक अछूत पर हमला बोल दिया। इस हमले के विरूद्ध 12 अगस्त को गांव के अछूत मजिस्ट्रेट की कचहरी में शिकायत करने पर धोल्का पहुंचे। सवर्ण हिंदुओं ने यह देखकर कि अछूतों के बालिग लोग गांव में नहीं है, लाठी, भालों और तलवारों से अछूतों के घरों पर हमला कर दिया। उन्होंने महिलाओं, बूढ़ों और बच्चों को मार–मार कर अधमरा कर दिया। धोल्का गए अछूत भी उसी रात में गांव लौटने वाले थे। सवर्ण हिंदू उनको मारने के लिए घत लगाकर रास्ते में छिपकर बैठ गए। पर एक वृद्धा ने उन अछूतों को सूचित कर दिया था, जिससे वे उस रात न पहुंचकर तड़के गांव पहुंचे। हमलावर सवर्ण हिंदू मध्य रात्रि तक उनकी प्रतीक्षा करते रहे और

फिर घरों को लौट गए। आतंकित अछूत गांव छोड़कर अहमदाबाद चले गए और वहां जाकर गांधीजी की संस्था 'हरिजन सेवक संघ' के मंत्री को स्थिति से अवगत कराया, इस पर संस्था के मंत्री ने कुछ नहीं किया। उधर गांव में सवर्ण हिंदुओं द्वारा अछूतों का सामाजिक बहिष्कार कर दिया गया। उन्हें मजदूरी देना बंद कर दिया गया। खाने–पीने की चीजें बेचने से इंकार कर दिया गया, उनका घरों से निकलना दूभर कर दिया गया और उनके कुंए में मिट्टी का तेल डाल दिया गया। अंततः 17 अक्टूबर को अछूतों ने मजिस्ट्रेट के यहां फौजदारी का मुकदमा कर दिया।

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने लिखा है कि इस मामले में सबसे अजीब पक्ष महात्मा गांधी और उनके सहयोगी बल्लभ भाई पटेल का रहा, जिन्होंने अछूतों को यही सलाह दी कि वे गांव छोड़ दें। इस मामले में दलित सर्वथा असहाय थे, यह बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने महसूस किया। वे इस घटना से इतने व्यथित हुए कि उन्होंने 1935 में ही येवला में हिंदू धर्म में न रहने की घोषणा की।

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि पूना पैक्ट के फलस्वरूप विधायिका में दलितों के लिए आरक्षित सीटों पर सवर्ण मतदाताओं का बहुमत होने के कारण सवर्ण ऐसे दलित को विधायिका में चुनेंगे जो उनके ईशारे पर काम करे। फरवरी 1937 में हुए विधानसभा चुनाव से यह साबित हो गया कि अस्पृश्यों की तरफ से प्रभावकारी प्रतिनिधित्व उभरकर सामने नहीं आ सका। इस प्रकार अस्पृश्यों ने कम्यूनल अवार्ड में जो प्राप्त किया था वह पूना पेक्ट के कारण गंवा दिया। गोलमेज सम्मेलन में बाबा साहेब अम्बेडकर ने इस बात पर बल दिया था कि

''अस्पृश्यों को केवल व्यवस्थापिकाओं में ही अपने प्रतिनिधि भेजने का अधिकार न मिले, अपितु उन्हें मंत्रिमण्डल में भी प्रतिनिधित्व का अधिकार मिले। अस्पृश्यों की परेशानी केवल कानूनों के कारण ही नहीं, वरन शासन में भी अस्पृश्यों के विरूद्ध प्राचीन काल से चले आ रहे पूर्वाग्रह के कारण भी है। जब तक सार्वजनिक सेवाओं में हिंदुओं का प्रभुत्व रहेगा तब तक अस्पृश्य लोग पुलिस से कभी सुरक्षा की आशा नहीं कर सकते, न्यायपालिका से भी न्याय की आशा नहीं कर सकते और वे प्रशासन से भी कुछ अपेक्षा नहीं कर सकते। सार्वजनिक सेवाओं में क्रूरता से अस्पृश्यों को तभी मुक्ति मिल सकती है, जब कार्यकारी पदों पर अस्पृश्यों की नियुक्ति की जाएं।

अनुसूचित जातियों की राजनैतिक मांगें

मद्रास में 23 सितंबर 1944 को राय बहादुर एन शिवराज बी.ए., बी.एल.एम.एल.ए. की अध्यक्षता में भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति की बैठक में नए संविधान में अस्पृश्यों के हितों के संरक्षण के संबंध में पास किए गए संकल्प।

संकल्प संख्या – 1

विषय : अनुसूचित जातियों के पृथक अस्तित्व को मान्यता देना

यह समिति इस प्रकार के प्रोपेगेंडा पर विरोध प्रकट करती है और इस अवसर पर बहुत ही खासतौर पर जोर डाल कर यह बता देना चाहती है कि अनुसूचित जातियों का भारत के राष्ट्रीय जीवन में पूर्णतया अपना पृथक अस्तित्व है और क्रिप्स प्रस्तावों के अर्थों में सिखों तथा मुसलमानों की अपेक्षा वे अधिक धार्मिक अल्पसंख्यक हैं।

संकल्प संख्या – 2

विषय : अनुसूचित जातियां एवं संविधान के संबंध में ब्रिटिश सरकार द्वारा की गई घोषणा।

भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति हाल ही में ब्रिटिश सरकार द्वारा की गई घोषणा का स्वागत करती है, जिसमें कहा गया है कि ब्रिटिश सरकार अन्य किन्हीं दलों के साथ–साथ अनुसूचित जातियों को भी स्वतंत्र भारत के संविधान में भागीदार होने के लिए अत्यंत आवश्यक और इसे महत्वपूर्ण दल मानती है और इसे भारतीयों को सत्ता हस्तांतरण करने के लिए पूर्व एक आवश्यक शर्त मानती हैं।

संकल्प संख्या – 3

विषय : संवैधानिक संरक्षण

कार्य समिति घोषणा करती है कि जब तक निम्नलिखित बातें पूर्ण नहीं की जाती, तब तक भारत के लिए कोई भी संविधान अनुसूचित जातियों को स्वीकार्य नहीं होगा :

(अ) इसमें अनुसूचित जातियों की सहमति हो।

(ब) इसमें अनुसूचित जातियों के बिल्कुल पृथक अस्तित्व की मान्यता स्वीकार की जाए।

(स) इसमें निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रावधान लिए जाएं

1. अनुसूचित जातियों की माध्यमिक, विश्वविद्यालय तथा उच्च स्तर की शिक्षा के लिए प्रांतीय एवं केंद्रीय सरकारों के बजट में धनराशियां निश्चित की जाएं।
2. चकबंदी आयोग के माध्यम से अनुसूचित जातियों को अलग बसाने के लिए सरकारी भूमि का कुछ भाग आरक्षित किया जाए।
3. अनुसूचित जातियों की आवश्यकताओं, उनकी जनसंख्या तथा उनके महत्वपूर्ण अस्तित्व के अनुसार, निम्नलिखित संस्थाओं में उनका प्रतिनिधित्व निश्चित किया जाए :–
   (क) विधान सभाओं में
   (ख) कार्यपालिका में

(ग) नगर पालिकाओं और स्थानीय निकायों में
(घ) सरकारी नौकरियों में
(ड) लोक सेवा आयोगों में।

4. उपरोक्त प्रावधानों को मौलिक अधिकारों की संज्ञा दी जाए, जिससे विधान सभाएं अथवा कार्यपालिकाएं, इनमें संशोधन करने या इन्हें बदल डालने के लिए सक्षम न हों।
5. भारत सरकार अधिनियम 1935 की धारा 156 के अंतर्गत नियुक्त किए जाने वाले महालेखापरीक्षक के स्तर के अधिकारी की नियुक्ति के लिए प्रावधान किया जाए, जो उपरोक्त मौलिक अधिकारों के कार्यान्वयन की समीक्षा करे और उसे उन्हीं सूरतों में हटाया जा सके, जिन सूरतों में संघीय न्यायालय का न्यायाधीश हटाया जाता है।

संकल्प संख्या – 4

विषय : सांप्रदायिक समझौते।

भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति, जो सांप्रदायिक समस्या को शीघ्र हल करना चाहती है, हिंदुओं और मुसलमानों के मध्य समझौता कराने के लिए श्री गांधी और श्री जिन्ना के बीच चल रही गुप्त समझौता वार्ताओं की भर्त्सना करती है। कार्य समिति का विचार है कि सांप्रदायिक समझौते का ऐसा खंडित स्वरूप प्रत्येक दशा में हानिकारक है। यह इसलिए हानिकारक है कि इससे अन्य समुदायों को यह संदेह उत्पन्न होता है कि उनके हितों को हानि पहुंचाने के लिए दो समुदायों में बेईमानी की सांठगांठ हो रही है। यह समिति इस बात पर बल देती है कि सांप्रदायिक प्रश्न के समाधान की प्रक्रिया पर जिसमें सबको उचित तथा समान न्याय मिल सके, विचार किया जाना तभी संभव है, जब सभी वर्गों के प्रतिनिधियों की उपस्थिति में सबकी मांगों पर सार्वजनिक रूप से विचार विमर्श हो।

संकल्प संख्या – 5

विषय : संविधान समीक्षा

भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति का यह विचार है कि भारत के वर्तमान संविधान (भारत सरकार अधिनियम 1935) में अल्पसंख्यक प्रतिनिधित्व से संबंधित प्रावधान किसी स्पष्ट सिद्धांत पर आधारित नहीं है। समिति को लगता है कि जो व्यवस्था इस समय है उसके अनुसार कुछ अल्पसंख्यक समुदायों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व नहीं मिला है, जबकि अन्य अल्पसंख्यकों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से कहीं अधिक प्रतिनिधित्व उनके ऐतिहासिक एवं सैनिक महत्व के आधार पर दिए गए दावों के कारण दिया गया है। कमेटी मांग करती है कि चूंकि भारत का भावी संविधान भारतीयों के लिए होगा, इसलिए संविधान बनाते समय अल्पसंख्यकों से संबंधित व्यवस्थाओं में ऐसा संशोधन किया जाए, जिसे सभी अल्पसंख्यकों को समानता के सिद्धांत पर अधिकार मिल सके।

संकल्प संख्या – 6

विषय : विधान सभाओं तथा कार्यपालिकाओं में प्रतिनिधित्व।

भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति चाहती है कि यह स्पष्ट तौर पर बल देकर कहा जाए कि प्रतिनिधित्व के मामले में अल्पसंख्यक समुदायों के बीच पक्षपात सहन नहीं किया जाएगा और प्रांतीय तथा केंद्रीय विधानमंडलों और प्रांतीय तथा केंद्रीय कार्यपालिका में उसी आधार पर प्रतिनिधित्व निश्चित किया जाए और वही सिद्धांत लागू किया जाए, जो मुसलमानों पर लागू हो।

संकल्प संख्या – 7

विषय : मतदान पद्धति।

भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्यसमिति का विचार है कि भारत सरकार अधिनियम के अंतर्गत हुए पिछले चुनावों के अनुभवों से सिद्ध हो गया है कि संयुक्त निर्वाचन प्रणाली के आधार पर चुनाव लड़ने के कारण अनुसूचित जातियां विधानसभाओं में अपने सही एवं प्रभावशाली प्रतिनिधियों को भेजने के अधिकार से वंचित रही हैं और उसमें सवर्ण हिंदुओं को अनुसूचित जातियों में ऐसे सदस्यों को नामजद कर भेजने का अधिकार मिला था, जो सवर्ण हिंदूओं की ही कठपुतली बनने को तैयार रहते थे। इसलिए इस समिति की यह पुरजोर मांग है कि संयुक्त निर्वाचन प्रणाली तथा सुरक्षित सीटों की प्रणाली समाप्त कर अस्पृश्यों के लिए पृथक निर्वाचन प्रणाली लागू की जाए।

संकल्प संख्या – 8

विषय : कार्यकारी सरकार का स्वरूप।

भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति इस तथ्य की ओर संकेत करना चाहती है कि बहुसंख्यक समुदाय के हाथों में केवल धन, संपत्ति, व्यापार एवं उद्योग ही नहीं है, वरन् राज्य का सारा प्रशासन ऐसे बहुसंख्यक समुदाय द्वारा नियंत्रित किया जा रहा है, जिसके सदस्यों ने बड़े तथा छोटे–छोटे पदों पर एकाधिकार जमा रखा है। यह समिति इस स्थिति को अल्पसंख्यकों के हितों के लिए बहुत बड़ा खतरा समझती है, क्योंकि इससे बहुसंख्यक समाज को अल्पसंख्यकों पर पूरा आधिपत्य जमाने का अधिकार मिलता है। भारत सरकार अधिनियम 1935 में कार्यकारी सरकार के संबंध में, जो संवैधानिक प्रावधान किए गए हैं, उनसे ऐसी खतरनाक शक्ति को प्रोत्साहन मिला है, जिसके अंतर्गत विधानसभाओं में अल्प संख्यकों की भावनाओं की परवाह किए बिना सरकार बनाने का अधिकार मिल जाता है।

सभी प्रांतीय तथा केंद्रीय सरकारों में कार्यकारी सरकार का निम्नलिखित ढंग से गठन किया जाना चाहिए :–

1. सरकार में प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री एवं अन्य मंत्रीगण सामान्य समुदाय तथा अल्पसंख्यक समुदायों से संविधान द्वारा निर्धारित अनुपात में लिए जाएं।

2. सामान्य समुदाय से लिए गए प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री तथा अन्य मंत्रीगण का निर्वाचन पूरे सदन तथा एकल हस्तांतरणीय मत से किया जाए।
3. अल्पसंख्यकों का प्रतिनिधित्व करने वाले मंत्रीगण विभिन्न अल्पसंख्यक समुदायों द्वारा एकल हस्तांतरणीय मत से चुने जाएं।
4. सरकार के मंत्रीगण विधानसभाओं के सदस्य ही हों, जो प्रश्नों के उत्तर देंगे, मतदान में भाग लेंगे तथा बहसों में भाग लेंगे।
5. सरकार में मंत्री का कोई स्थान खाली होने पर उस स्थान की पूर्ति मूल नियुक्ति के अनुसार की जाएगी।
6. सरकार का कार्यकाल विधानसभा के कार्यकाल के बराबर तथा साथ–साथ समाप्त होगा।

संकल्प संख्या – 9

विषय : सरकारी सेवाएं।

यह वांछनीय है कि कोई भी सरकार व्यक्तियों की नहीं, वरन् कानून की सरकार हो और उसका संचालन कानून के अनुसार हो, परंतु इस तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि सरकारी तंत्र का संचालन व्यक्तियों द्वारा ही होता है। ऐसी दशा में सरकार चाहे अच्छी हो अथवा बुरी, उस सरकार का निष्पक्ष और निरपेक्ष होना बहुत हद तक इस बात पर निर्भर करता है कि सरकारी तंत्र का संचालन करने वाले व्यक्ति किस सीमा तक निष्पक्ष न्यायप्रिय तथा निरपेक्ष हैं। भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति की यह धारणा है कि इस वर्तमान शासन व्यवस्था से, जो जातिवादी, संकुचित मनोवृत्ति, न्याय भावना विहीन तथा अनुसूचित जातियों से घृणा करने वालों के द्वारा नियंत्रित एवं संचालित हो अस्पृश्यों की सुरक्षा, न्याय अथवा सहानुभूति कभी नहीं हो सकती इसलिए कार्य समिति यह मांग करती है कि संविधान द्वारा इस बात की पुष्टि अवश्य कर दी जानी चाहिए कि सरकारी सेवाओं में अनुसूचित जातियों को उसी अनुपात में आरक्षण प्रदान किया जाना चाहिए, जिस अनुपात में मुस्लिम समुदाय को स्वीकार किया जाए।

संकल्प संख्या – 10

विषय : शिक्षा के लिए प्रावधान।

भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति अनुभव करती है कि जब तक अनुसूचित जातियों के लोग प्रशासन में महत्वपूर्ण पदों पर पहुंचने के योग्य नहीं हो जाते, तब तक अनुसूचित जातियों को वहीं मुसीबतें उठानी पड़ेंगी, जो अन्याय और अपमान सरकार और जनता द्वारा आज तक उन पर किया जाता रहा है। इसीलिए कार्य समिति अनुसूचित जातियों में उच्च शिक्षा के प्रसार को नितांत आवश्यक और महत्वपूर्ण समझती है। परंतु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि ऐसे उच्च स्तर की शिक्षा गरीब अनुसूचित जातियों के वश की बात नहीं है। इसलिए समिति यह आवश्यक समझती है कि अस्पृश्यों को उच्च शिक्षा के साधन सुलभ कराना राज्य का दायित्व माना जाए, जो इस काम के लिए वित्तीय व्यवस्था करे। यह समिति मांग करती है

कि संविधान द्वारा प्रांतीय सरकारों तथा केन्द्रीय सरकार पर यह दायित्व निश्चित कर दिया जाए कि वे अनुसूचित जातियों की उच्च शिक्षा के लिए प्रत्येक वर्ष बजट में एक निश्चित धनराशि विशेष रूप से नियत करे और इस मद को प्राथमिकता दी जाए।

संकल्प संख्या – 11

विषय : अनुसूचित जातियों की पृथक बस्तियां।

भारतीय दलित संघ की कार्यसमिति का विचार है कि :–

(अ) जब तक अनुसूचित जातियों के लोग इस दयनीय दशा में कि सवर्ण हिंदू के कारण दलित गांवों के बाहर तिरस्कृत लोगों की भांति रहने पर विवश हैं जहां उन्हें अपनी आजीविका का कोई साधन प्राप्त नहीं होता और सवर्ण हिन्दूओं की अपेक्षा वे बहुत कम संख्या में है, अस्पृश्य ही बने रहेंगे और सदैव सवर्ण हिन्दूओं के आतंक और दमन के शिकार होते रहेंगे तथा स्वतंत्र जीवन निर्वाह नहीं कर सकेंगे।

(ब) सवर्ण हिन्दूओं के दमन और अत्याचार, जिनमें स्वराज के बाद ओर बढ़ोतरी हो जाएगी, उनसे अनुसूचित जातियों की सुरक्षा के लिए तथा उनके पूर्ण विकास के लिए आर्थिक एवं सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जाए और अस्पृश्यता निवारण का मार्ग प्रशस्त किया जाए। समिति यह मांग करती है कि भावी संविधान में निम्नलिखित प्रावधान किए जाएं :–

1. अनुसूचित जातियों को सवर्ण हिंदुओं के गांवो तथा अपने वर्तमान गांवों से हटा कर स्वतंत्र रूप से सवर्ण हिंदुओं से अलग बसाया जाए।
2. अनुसूचित जातियों की नई बस्तियां बसाने के लिए संविधान द्वारा एक आवास आयोग का निर्माण करने की व्यवस्था की जाए।
3. समस्त कृषि योग्य सरकारी भूमि तथा और भी भूमि जो कृषि योग्य बनाई जाए उपरोक्त आयोग को दे दी जाए जिस पर अस्पृश्यों की बस्तियां बसाई जा सके।
4. अनुसूचित जातियों को बसाने की योजना को पूरा करने के लिए संविधान द्वारा उपरोक्त आयोग को भूमि अधिग्रहण अधिनियम के अंतर्गत निजी मालिकों से नई भूमि प्राप्त करने और खरीदने का अधिकार दिया जाए।
5. संविधान में यह व्यवस्था की जाए कि केन्द्र सरकार आवास आयोग को इस कार्य के लिए कम से कम पांच करोड़ रूपये प्रतिवर्ष स्वीकार किया करेगी।

संकल्प संख्या – 12

भारतीय परिगणित जाति संघ की कार्य समिति सर्वसम्मति से डा.बी.आर. अम्बेडकर के नेतृत्व में अपना पूर्ण विश्वास प्रकट करती है और उन्हें यह अधिकार प्रदान करती है कि कार्य समिति तथा अनुसूचित जातियों की ओर से वह यथा–समय तथा आवश्यकतानुसार अन्य राजनीतिक दलों अथवा उनके नेताओं से बातचीत करें।

क्रिप्स प्रस्तावों का विरोध

क्रिप्स प्रस्तावों के अस्पृश्यों पर प्रभाव के विषय में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का बयान–

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि संविधान सभा का प्रस्ताव कांग्रेस का हृदय जीतने के विचार से लाया गया है जबकि पाकिस्तान का प्रस्ताव मुस्लिम लीग को खुश रखने वाला प्रस्ताव है। परन्तु ये प्रस्ताव दलित वर्ग के विषय में क्या कहता है ? संक्षेप में, इनके हाथों में हथकड़ी और पांवों में बेड़ी डालकर उन्हें सवर्ण हिन्दूओं को सौंप दिया गया है। वे सवर्ण हिन्दू उन्हें कुछ नहीं देगें–रोटी के बदले पत्थर मारेंगे, क्योंकि संविधान सभा का गठन दलित वर्ग के साथ विश्वासघात के सिवाय और कुछ नहीं है। इसमें कुछ संदेह नहीं कि संविधान सभा में दलितों की क्या स्थिति होगी और संविधान सभा में राजनीतिक कार्यक्रम क्या होंगे? संविधान सभा में दलित का कुछ भी प्रतिनिधित्व नहीं होगा, क्योंकि इस प्रस्ताव में सांप्रदायिक कोटा निश्चित किया गया है। यदि उसमें हमारे कुछ प्रतिनिधि लिए भी जाते हैं, तो वे न स्वतंत्र होंगे और नहीं उनका स्वतंत्र निर्णायक मत होगा। पहली बात तो यह कि दलित वर्ग के प्रतिनिधि वहां निस्सहाय अल्पसंख्यक के तौर पर होंगे। दूसरी बात यह कि संविधान सभा के सभी निर्णयों में सर्वसम्मति की आवश्यकता नहीं समझी जाएगी। किसी भी समस्या को हल करने के लिए बहुसंख्यक दल का बहुमत काफी है। उसका संवैधानिक महत्व कुछ भी हो इसका कोई महत्व नहीं। स्पष्ट है कि इस व्यवस्था से संविधान सभा में दलित वर्ग की कोई सुनवाई नहीं होगी। तीसरी बात यह कि ब्रिटिश सरकार के प्रस्ताव के आधार पर समानुपात की वर्तमान व्यवस्था, जिसके द्वारा संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव होना है। इसके आधार पर सवर्ण हिंदुओं का वास्तविक अधिकार होगा कि वे दलितों के प्रतिनिधियों को नामित करें। वे प्रतिनिधि सवर्ण हिंदुओं के पिट्ठू होंगे। चौथी बात यह कि संविधान सभा ऐसे कांग्रेसियों द्वारा भरी जाएगी, जो बहुमत से अपने कार्यक्रम लागू करेंगे। इसमें कोई संदेह नहीं कि श्री गांधी द्वारा दलितों के सामाजिक उत्थान के लिए किए गए प्रयत्नों के बारे में चाहे कुछ भी क्यों न कहा जाए, संविधान में दलितों के लिए भारत के राष्ट्रीय जीवन में पृथक अस्तित्व देने जैसे किसी भी प्रकार की राजनीतिक मान्यता देने के सर्वथा विरूद्ध है। ऐसा होने से संविधान सभा में बहुसंख्यक दल अपने बहुमत से अस्पृश्यों के उन सभी संरक्षणों पर पानी फेर देगा, जो उन्हें वर्तमान संविधान में प्राप्त है। जो भी व्यक्ति संविधान सभा की इन बातों को समझेगा वह यह स्वीकार करेगा कि ब्रिटिश सरकार के इन प्रस्तावों में दलित वर्ग के लोगों को भेड़ियों के सामने फेंक दिया गया है।

यह कहा जा सकता है कि संविधान सभा दलितों को संवैधानिक संरक्षण का अधिकार देने से इंकार करगी, उसके लिए ब्रिटिश सरकार ने संविधान सभा में संधि की व्यवस्था रखी है उसका उद्देश्य दलितों के हितों का ध्यान रखना है। समझौते के इस प्रस्ताव से यह स्पष्ट नहीं होता कि संधि में ब्रिटिश सरकार ने किस प्रकार के संरक्षण को समझौते में शामिल करने का निश्चय किया है। यह महत्वपूर्ण विषय है क्योंकि प्रस्ताव को लेकर ब्रिटिश सरकार और दलितों

के बीच मतभेद हो सकते हैं कि नए संविधान में उनके संरक्षणों की क्या प्रकृति होगी, कितनी मात्रा और क्या उपाय होंगे ? समझौते के विषय में दूसरा और महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि समझौते के पीछे कितनी बाध्यता होगी ? क्या संविधान सभा द्वारा निर्मित संविधान एक अंग के रूप में होगा ? जिसमें इस प्रकार का कोई प्रावधान होगा कि जो प्रावधान संधि के विरूद्ध होगें, उन्हें रद्द किया जा सके ? क्या यह संधि दो सरकारों, भारतीय राष्ट्रीय सरकार और ब्रिटिश सरकार के मध्य केवल संधि समझी जाएगी। यदि समझौता उपरोक्त पहली शर्त के अनुसार होता है, तो वह देश के कानून के रूप में होगा और उस पर भारत सरकार की वैधानिक बाध्यता होगी। यदि वह संधि दूसरी शर्त पर होती है तो यह देश का कानून होगा। वह स्वीकृति राजनीतिक बाध्यता होगी। तब वह संधि राष्ट्रीय सरकार द्वारा निर्मित संविधान के ऐसे प्रावधान का उल्लंघन नहीं कर सकती, क्योंकि ऐसी ही बात स्वतंत्र आयरिश के बारे में है, जो एक अधिराज्य नहीं है। इस संधि की बाध्यता राजनीतिक बाध्यता ही होगी। यह स्पष्ट है कि ऐसी बाध्यता का प्रयोग इस पर निर्भर करता है कि सरकार किस प्रकार की होगी और लोकमत कैसा होगा। इस तथ्य पर विचार करने से दो प्रश्न उठते हैं : 1. संधि की शर्तों को लागू करने के लिए ब्रिटिश सरकार के पास कौन से करार होंगे ? 2. क्या ब्रिटिश सरकार अपने उन संसाधनों से भारतीय राष्ट्रीय सरकार को संधि से बांधे रख सकेगी ? पहले प्रश्न का उत्तर यह है कि इसके दो उपाय होंगे, युद्ध या व्यापारिक युद्ध। जहां तक सैनिक शक्ति के साधन का प्रयोग करने की बात है, ब्रिटिश सरकार को तब भारतीय सेना उपलब्ध नहीं होगी। वह पूर्णतया भारतीय राष्ट्रीय सरकार को हस्तांतरित कर उसके नियंत्रण में कर दी जाएगी। इसलिए समझौते को लागू करने के लिए ब्रिटिश सरकार के पास यह साधन भी नहीं रह जाएगा। यह असंभव है कि ब्रिटिश सरकार समझौते को लागू करने के लिए भारतीय राष्ट्रीय सरकार को विवश करने के लिए अपनी सेना भेजेगी। व्यापार युद्ध छेड़ना संभव नहीं है। यह आत्मघाती नीति है और आयरिश फ्री स्टेट के साथ भूसंपत्ति की वसूली को लेकर हुई लड़ाई के अनुभव से स्पष्ट है कि वणिकों का देश इस पर अपनी स्वीकृति नहीं दे सकता, चाहे वह उन्हीं के हित में क्यों न हो? इसलिए संधि एक बेजान फॉर्मूला बन जाएगी। ब्रिटिश सरकार ने ये प्रस्ताव यह समझकर भेजे हैं कि भारतवासी इन प्रस्तावों का स्वागत करेंगे। परंतु न तो ब्रिटिश सरकार और न सर स्टैफोर्ड क्रिप्स के पास इसका स्पष्टीकरण है कि वे इस प्रकार के प्रस्ताव को क्यों भेज रहे हैं, जिनकी भर्त्सना करते हुए कुछ ही महीने पहले उन्होंने रद्द कर दिया था।

<u>हिन्दू समाज व्यवस्था में शासित व शोषित वर्ग की स्थिति व भविष्य के परिणाम</u> :–

बाबा साहब का मानना है कि ब्राह्मण शासित वर्ग (शूद्रों और अस्पृश्यों) के जो कुल हिंदूओं की आबादी के 80 प्रतिशत है, बहुत ही घोर शत्रु रहे हैं और यह दीन–हीन शासित वर्ग कितना नीचे गिरा हुआ है, अपमानित है, निराश है, कुठित है, वह केवल ब्राह्मणों के कारण और उनके दर्शन के कारण ही ऐसा है। ब्राह्मणवाद के इस दर्शन के 5 मूलभूत सिद्धान्त हैं– 1. विभिन्न वर्गों में असमानता 2. शूद्रों और अस्पृश्यों पर शस्त्रादि रखने पर पूरी रोक 3. शूद्रों और

अस्पृश्यों के लिए शिक्षा के द्वार बंद करना 4. सत्ता और अधिकार से शूद्रों और अस्पृश्यों को दूर रखना 5. शूद्रों और अस्पृश्यों को संपत्ति अधिग्रहण से वंचित रखना और 6. स्त्रियों की पूर्ण अधीनता एवं दमन। असमानता ब्राह्मणवाद का अधिकारिक सिद्धांत है और दलितों द्वारा समानता के लिए प्रयास पर उनका दमन करने के असीम अधिकार ब्राह्मणों को प्राप्त हैं।

इस देश में कोई भी ऐसी सामाजिक बुराई तथा सामाजिक कुप्रथा नहीं है, जिस पर ब्राह्मणों की मुहर न लगी हो। मानव का मानव के प्रति अमानुषिक व्यवहार, जैसे कि जातिपांति की भावना, अस्पृश्यता, उच्च पद पर पहुंचने पर रोक, योग्यता की अनदेखी करना ब्राह्मणों का धर्म है। यह मान लेना गलत न होगा कि किसी मनुष्य द्वारा दूसरे के साथ ऐसे पाशविक व्यवहार करना ही ब्राह्मण धर्म है, क्योंकि ब्राह्मणों ने समाज की पतिततम प्रथा को शह दी, जिससे भारत में शूद्रों, अस्पृश्यों व स्त्रियों को जितने घोर कष्ट उठाने पड़े उनकी संसार के किसी अन्य भाग से तुलना नहीं की जा सकती। शूद्रों, अस्पृश्यों और नारी के लिए ब्राह्मणों ने, जो घृणित विधान रखे संसार के किसी भी भाग में किसी बौद्धिक वर्ग में उनका सानी नहीं, क्योंकि संसार के अन्य भागों में बौद्धिक वर्ग ने अपने ही देश के लोगों को अशिक्षित रखकर सदा के लिए अज्ञानता और निर्धनता के गर्त मे नहीं धकेला जैसा कि भारत में ब्राह्मणों ने किया है।

भारत में शासक वर्ग मुख्यतया ब्राह्मण है। यह आश्चर्य की बात है कि आज के ब्राह्मण इस कथन का खंडन करते हैं कि वे शासक वर्ग से संबंधित हैं, यद्यपि वे किसी समय अपने को भूदेव कहते थे। क्या इसका कारण यह है कि वे अब यह महसूस करने लगे हैं कि उन्होंने मानवता के इस पावन नियम द्वारा अपने वर्ग के ही नहीं वरन सभी वर्गों के हितों की रक्षा करनी चाहिए, लेकिन उन्होंने अन्य समुदाय के विश्वास को तोड़ने का अपराध किया है और इसलिए वे दुनियां को मुंह दिखाने लायक नहीं हैं अथवा क्या यह उनका विनम्र भाव है ? अब यह देखा जाए कि इसमें से सच क्या है ?

ब्राह्मण ही शासक वर्ग है, इस पर प्रश्नवाचक चिन्ह नहीं लगाया जा सकता। दो प्रकार से इसकी परीक्षा की जा सकती है। प्रथम परीक्षा लोगों की भावना की और दूसरी प्रशासन पर नियंत्रण रखने की। मुझे विश्वास है इन दो से अच्छा और कोई परीक्षण नहीं हो सकता। जहां तक पहले परीक्षण की बात है, उसमें कोई संदेह नहीं किया जा सकता जनसाधारण की भावना के अनुसार ब्राह्मण पवित्र हैं। प्राचीन काल में ब्राह्मण चाहे कितना जघन्य अपराध कर दे, उसे मृत्यु दण्ड नहीं दिया जा सकता था। उसे पवित्र मनुष्य मान कर ही सभी प्रकार की सुविधाएं प्राप्त थी।

इतिहास साक्षी है कि ब्राह्मण सदैव उन्हीं अन्य वर्गों को अपने से सम्बद्ध करते थे तथा शासक वर्ग के समान स्तर देने को तैयार होते थे, जो उनके अधीन रहकर उनके धर्म आधारित आजीविका के साधन को सुरक्षा कवच प्रदान कर उन्हें श्रेष्ठ, बुद्धिमान सर्वज्ञाता मनवाने में सहयोग प्रदान कर सकने की क्षमता रखते थे। प्राचीनकाल तथा मध्यकाल में ब्राह्मणों ने क्षत्रियों

अथवा सैनिक वर्ग से ऐसा संबंध जोड़ा था और दोनों ने जनता पर शासन किया। वास्तव में उन्होंने जनता को कुचल डाला था। ब्राह्मणों ने अपनी कलम से और क्षत्रिय ने तलवार से अत्याचार और शोषण किया। इस समय ब्राह्मण ने वणिक वर्ग को जिसे बनिया कहते हैं अपने साथ जोड़ लिया। क्षत्रियों से नाता तोड़कर बनियों से संबंध जोड़ना उनके लिए स्वाभाविक है। आज के व्यापारिक युग में धन महत्वपूर्ण शस्त्र है। इस प्रकार नाता जोड़ने के परिवर्तन का यही मुख्य कारण है। दूसरा कारण यह है कि राजनीतिक मशीनरी को गतिमान रखने के लिए धन की आवश्यकता है। ब्राह्मण ''यूज एण्ड थ्रो'' की नीति में विश्वास करता है।

भारत के शासक वर्ग की तुलना अन्य देशों के शासक वर्गों से करना अधिक श्रेयस्कर समझते हैं। फ्रांस में जब क्रांति ने जन्म लिया और जनता ने शासक वर्ग से समानता की मांग की, तो शासक वर्ग ने स्वेच्छा से सत्ता और अधिकार छोड़कर अपने को जनता में शामिल कर लिया। यह स्टेट्स जनरल की इस घटना से स्पष्ट है कि जन सामान्य के 600 प्रतिनिधि पहुंचे। जबकि पादरी तथा सामंतों में से प्रत्येक 300–300 प्रतिनिधि पहुंचे। प्रश्न यह उठता है कि 1200 सदस्य कैसे बैठते, बहस करते और मतदान करते। जनसामान्य के तीनों दलों की यूनियनों को एक चैम्बर में बैठने के लिए और एक व्यक्ति एक मत के आधार पर मतदान करने के लिए जोर दिया। पादरियों तथा सामंतों ने इस स्थिति को स्वीकार नहीं किया, क्योंकि ऐसा करने का अर्थ होता अपनी अमूल्य परंपराओं और सुविधाओं का परित्याग करना लेकिन तब भी उनमें से अधिकांश ने जनसामान्य की मांग स्वीकार कर ली और फ्रांस को स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व पर आधारित संविधान दिया।

जापान के शासक वर्ग ने वर्ष 1855 से 1870 के दौरान जब जापानी सामंतशाही को त्याग कर वर्तमान शासन पद्धति अपनाई तब वहां का शासक वर्ग फ्रांस के शासक वर्ग की अपेक्षा अधिक देशभक्त था। जैसा कि जापान के इतिहास का विद्यार्थी जानता है, जापानी समाज में चार वर्ग थेः 1. दमियों, 2. समुराई 3. हेमिन अथवा जन सामान्य और 4. ईंटा अथवा बहिष्कृत। इन जातियों के सीढी दर सीढ़ी ऊंचे–नीचे वर्ग थे। सबसे नीचे ईंटा थे, जो हजारों की संख्या में थे। उनमें से ऊपर हेमिन थे जो ढाई तीन करोड़ थे। हेमिन से ऊपर समुराई थे, जिनकी संख्या 20 लाख थी, जिनके हाथों में हेमिनों का जीवन–मरण बंद था। सबसे ऊपर दमिया अथवा बड़ी जागीर वाले सामंत थे, जिनका नीचे के तीनों वर्गों पर पूर्ण शासन था। उनकी संख्या 300 थी। दमितों और समुराई लोगों ने समझ लिया कि सभी को समानता और समान नागरिकता देना और सामंतवाद को त्याग देना संभव है। तदनुसार दमियों लोग जो राष्ट्रीय भावना से ओत–प्रोत थे और राष्ट्रीय एकता में कोई बाधा उत्पन्न नहीं करना चाहते थे, अपनी सुख–सुविधाओं का परित्याग करने के लिए आगे आए और सर्वसाधारण में शामिल हो गए।

इस संबंध में फ्रांस व जापान के शासक वर्ग की तुलना में भारत का शासक वर्ग एकदम विपरीत है। भारत में शासक वर्ग ब्राह्मण भारतीय स्वतंत्रता की बलिवेदी पर ऐसा बलिदान करने

का संकल्प नहीं कर सकता। राष्ट्रीयता के नाम पर अपनी सुख–सुविधाओं का परित्याग करने के बजाए भारत का शासक वर्ग अपनी सुख–सुविधाओं को पक्का बनाए रखने के लिए राष्ट्रीयता का नारा लगाकर उसका दुरूपयोग करता है। जब कभी शोषित वर्गों के लोग सरकारी सेवाओं में, कार्यपालिका में तथा विधानमंडलों में संरक्षण की मांग करते है, तब शासक वर्ग ''राष्ट्रीयता खतरे में है'' का नारा बुलंद करता है।

कांग्रेसी राजनीतिज्ञ शिकायत करते हैं कि अंग्रेज भारतीय जनता को पूर्णतया शक्तिहीन करके शासन कर रहे हैं। परन्तु वे भूल जाते हैं कि शूद्रों और अस्पृश्यों को शक्तिहीन करने का कानून ब्राह्मणों द्वारा लागू किया गया था। वास्तव में शूद्रों और अस्पृश्यों को शक्तिहीन रखने में ब्राह्मण अटल विश्वास रखते हैं। जब ब्राह्मणों को शस्त्र धारण करने की आवश्यकता हुई तो अपनी सुख सुविधाओं की सुरक्षा के लिए उन्होंने शस्त्र धारण कर लिए। उसके लिए उन विधानों का पुनरीक्षण कर डाला और शूद्रों तथा अस्पृश्यों को बिना उनकी मुसीबतों को सुने शस्त्ररहित ही रखा। यदि आज भारत की जनसंख्या में अधिकांश लोग पौरूषहीन हैं, उनका मनोबल नष्ट हो गया है और वे दुर्बल हो गये हैं तो उसका मुख्य कारण है ब्राह्मणों की पूर्ण निरस्त्रीकरण की नीति, जिसे वे युग युगान्तर से शुद्रों के प्रति अपनाते चले आ रहे हैं संसार में किसी आध्यात्मिक वर्ग ने इतना विश्वासघात नहीं किया जितना भारत में ब्राह्मणों ने किया है।

गैर–ब्राह्मण जातियों में, ब्राह्मणों के समान योग्यता वाले लोगों द्वारा मुख्य पदों को प्राप्त करने और ब्राह्मणों के आरक्षण को उखाड़ फेंक देने वाले लोगों के आंदोलन की संभावनाओं को समाप्त करना ही ब्राह्मणों ने आवश्यक समझा। ब्राह्मणों ने समस्त अधिशासी पदों को अपने लिए आरक्षित करने के साथ–साथ शिक्षा पर ब्राह्मणों का एकाधिकार कायम रखने के लिए विधान बनाया। जैसा कि पहले ही संकेत दिया जा चुका है, ब्राह्मणों ने विधान बनाकर हिंदू समाज के निम्नतर वर्ग के लिए पढ़ाई–लिखाई अपराध घोषित कर दिया, जिसका उल्लंघन करने वाले को कठोर तथा अमानुषिक दंड, जैसे अपराधी की जीभ कटवा देना और उसके कान में पिघलता हुआ सीसा डलवा देना, की व्यवस्था की गई। कांग्रेसी यह कह कर छुट्टी नहीं पा सकते कि ऐसे दंड अब नहीं दिए जाते।

भारत में शासक वर्ग कांग्रेस की टोली में क्यों घुस गया है और सभी लोगों से कांग्रेस का समर्थन करने के लिए क्यों कहता है ? संक्षेप में, शासक वर्ग को भलीभांति मालूम है कि सुविधाहीन लोगों का आंदोलन वर्ग सिद्धांतों, वर्गीय हितों और जातीय संघर्ष पर आधारित है। यह एक दिन सुविधा संपन्न वर्ग की कब्र खोद देगा। इसलिए कांग्रेस लोकतंत्र के लिए कार्य नहीं कर रही है बल्कि प्राचीन हिन्दू धर्म की पुर्नस्थापना के लिए काम कर रही है जिसमें वंशानुगत शासक वर्ग हो और वंशानुगत दास।

****

3.

संवैधानिक आरक्षण की बुनियाद

संविधान सभा का गठन–

ब्रिटेन की संसद ने यह तय कर दिया था कि भारत के भावी संविधान का निर्माण ब्रिटिश सरकार द्वारा नहीं वरन् स्वयं भारतीयों द्वारा किया जाना चाहिए। भारत का भावी संविधान अनिवार्य रूप से भारतीय ही होना चाहिए। वह संविधान भारतीय आवश्यकताओं, उसकी परिस्थितियों तथा उसकी परंपराआं के अनुरूप हो। आवश्यक शर्त केवल यह है कि संविधान निर्मात्री संस्था का गठन भारत के सभी प्रमुख वर्गों की सहमति से होना चाहिए।

ब्रिटेन की संसद में जुलाई के प्रथम सप्ताह में भारत स्वतंत्रता विधेयक पेश किया गया तथा 15 जुलाई, 1947 को ब्रिटेन की संसद ने भारत स्वतंत्रता अधिनियम पारित कर दिया और इससे भारत की स्वतंत्रता का मार्ग प्रशस्त हो गया।

बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर को संविधान सभा के लिए चुनाव लड़ना पड़ा और वे बंगाल विधानसभा से दलितों के प्रतिनिधि के रूप में श्री जोगेन्द्र नाथ मण्डल के सक्रिय सहयोग एवं मुस्लिम लीग की सहायता से 20 जुलाई, 1946 को चुनकर संविधान सभा में चुनकर आये। लेकिन यह उनका दुर्भाग्य ही था कि 15 जुलाई, 1947 को बंगाल का विभाजन हो गया। इस विभाजन से बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर की संविधान सभा की सदस्यता समाप्त हो गई। उधर डॉ0 एम0आर0 जयकर ने संविधान सभा से इस्तीफा दे दिया था। इसलिए बम्बई से उनकी 'सीट' भरने के लिए बाबा साहब डॉ0 अम्बेडकर को चुना गया और वे 23 जुलाई, 1947 को निर्विरोध चुनकर पुनः संविधान सभा में आये। तभी बाबा साहब को कानूनमंत्री भी नेहरू मंत्रीमण्डल में बनाया गया। संविधान सभा में कुल 297 सदस्य चुने गये थे जिनमें देश के सभी क्षेत्रों, धर्मों, वर्गों, समुदायों व भाषाओं के गणमान्य व्यक्ति थे, जिनकी किसी न किसी रूप में देश के अन्दर अपनी अलग पहचान थी। कुछ तो देश की आजादी के कारक भी थे।

।। भारतीय संविधान के निर्माण में बाबा साहब अम्बेडकर की भूमिका।।

केबिनेट मिशन ने मूलभूत अधिकारों, अल्पसंख्यकों, आदि के संबंध में एक एडवाइजरी कमेटी (सलाहकारी समिति) के गठन की सिफारिश की थी। सरदार पटेल की अध्यक्षता में गठित इस सलाहकार समिति में बाबा साहब को भी सदस्य के रूप में सम्मिलित किया गया। अपने कार्य को सुचारू रूप से चलाने के लिए इस समिति ने चार उप–समितियां गठित की। इनमें से

फंडामेन्टल राइट्स (मूलभूत अधिकार समिति) प्रमुख थी जिसके भी बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर सदस्य थे।

संविधान सभा ने तीन अन्य समितियों का भी गठन किया। इनमें पं. जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में गठित 1. यूनियन पावर कमेटी तथा 2. यूनियन कांस्टीटयूशन कमेटी प्रमुख थी। बाबा साहब यूनियन कांस्टीटयूशन कमेटी के सदस्य बनाये गये। इनके अतिरिक्त बाबा साहब स्टियरिंग कमेटी तथा नेशनल फ्लेग कमेटी के भी सदस्य थे। राष्ट्रीय ध्वज कमेटी में सदस्य के रूप में बाबा साहब, राष्ट्रीय ध्वज में 'चरखा' के स्थान पर 'अशोक चक्र' तथा सारनाथ के अशोक स्तम्भ को राष्ट्रीय चिन्ह (एम्बलम) के रूप में स्वीकार करवाने में सफल रहे।

संविधान सभा ने सात सदस्यों की एक प्रारूप समिति का अलग से गठन किया। 29 अगस्त 1947 को बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर को प्रारूप समिति का अध्यक्ष चुना। प्रारूप समिति ने 141 दिन बैठक कर संविधान का प्रारूप तैयार किया। जिनपर संविधान सभा में सदस्यों ने दौरान बहस 7635 संशोधन के सुझाव पेश किए जिनमें से 2473 संशोधनों पर विचार–विमर्श कर निर्णय लिया गया। शेष संशोधन प्रस्ताव या तो वापिस ले लिए गये अथवा संविधान सभा ने उनपर विचार करना उचित ही नहीं समझा संविधान सभा ने संविधान के प्रारूप पर विचार करने में 114 दिन लगाये। अंतिम रूप में संविधान प्रारूप में 395 धाराएं (आर्टीकल्स) तथा 8 सूचियां (शैड्यूल्ड) रह गई।

दिनांक 25.11.1949 को बाबा साहब ने संविधान सभा में अपने अन्तिम अभिभाषण में कहा। ''संविधान सभा के काम को वापस निहारते हुए, अब 2 वर्ष, 11 महीने और 17 दिन हो जायेंगे, उस दिन से जब 9 दिसम्बर 1946 को प्रथम बैठक हुई थी। इस अवधि में संविधान सभा के कुल मिलाकर 11 सत्र हुए। इन 11 सत्रों में से प्रथम 6 लक्ष्यों के प्रस्ताव को पारित करने और मौलिक अधिकार, संघ संविधान, संघ शक्ति, प्रान्तीय संविधान, अल्पसंख्यक तथा अनुसूचित क्षेत्र एवं जनजातीय समितियों के प्रतिवेदनों पर विचार करने में व्यतीत हो गये। 7,8,9,10 और 11 सत्रों में प्रारूप संविधान पर विचार–विमर्श हुआ। संविधान सभा के इन 11 सत्रों में 165 दिन व्यतीत हुए।

बाबा साहब अम्बेडकर ने संविधान सभा में कहा कि अन्य देशों की संविधान सभाओं ने अपने–अपने संविधानों को तैयार एवं पारित कराने में बहुत कम समय लिया। यह सही है, किन्तु हमें दो बातों की ओर ध्यान देना चाहिए। एक अमरीका, कनाड़ा, दक्षिण अफ्रीका और आस्ट्रेलिया के संविधान अत्यन्त लघु संविधान हैं, उनमें बहुत कम अनुच्छेद हैं, जबकि भारतीय संविधान में अधिक हैं। दूसरे अमरीका, कनाड़ा, दक्षिण अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया के संविधान निर्माताओं को संशोधनों की समस्या का सामना नहीं करना पड़ा, जबकि हमें 2473 संशोधनों की छान–बीन करके उन्हें पारित कराना पड़ा।''

संविधान सभा में सरकारी सेवा व पदों के आरक्षण का मुद्दा

संविधान सभा में सरकारी सेवाओं में आरक्षण के मुद्दे पर महत्वपूर्ण सुझावों के अंश/ प्रारूप समिति के समक्ष आरक्षण से संबंधित धारा 10 थी जो संविधान में अनुच्छेद 16 (4) के तौर पर समावेश की गई।

धारा–10

प्रारूप संविधान की धारा 10 एक लम्बी बहस का मुद्दा बनी। इस धारा में शेड्यूल्ड कास्ट्स और जनजातीय लोगों के लिए नौकरियों में आरक्षण का प्रावधान था। लेकिन बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने इन लोगों को इस धारा में पिछड़ा वर्ग के नाम से रखा। इस नाम से रखा जाना अधिकांश सदस्यों को पसन्द नहीं आया। इसलिये इस विषय पर अनेक संशोधन आये।

शेड्यूल्ड कास्ट्स और ट्राइब्स के स्थान पर पिछड़ा वर्ग शब्द रखे जाने के कुछ विशेष कारण थे। संविधान सभा ने कुछ उपसमितियों का गठन किया था। इनमें एक सलाहकार समिति (Advisory Committee) थी। स्वतंत्रत भारत में कानूनी दृष्टि से पहली बार शेड्यूल्ड कास्ट्स और ट्राइब्स के लोगों के लिए आरक्षण का मुद्दा विचार का विषय बना। एक वोट की कमी से आरक्षण प्रस्ताव पारित नहीं हो सका। तब बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के सामने एक महान् गंभीर समस्या उत्पन्न हो गई कि इन लोगों के लिये आरक्षण का प्रबन्ध किस प्रकार किया जाए ? इस कानूनी लड़ाई को जीतने के लिये उन्होंने नये ढंग से इसकी शुरूआत की।

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने शेड्यूल्ड कास्ट्स और ट्राइब्स के स्थान पर 'पिछड़ा वर्ग' शब्द रखकर आरक्षण पर इस कानूनी जंग को जीतने के लिये जो नई शुरूआत की उसका विरोध अनेक सदस्यों ने किया। अनेक सदस्य 'पिछड़ा वर्ग' शब्द के प्रयोग के विरूद्ध थे।

इस बहस में भाग लेते हुए डॉ. धर्मप्रकाश ने आरोप लगाया कि––''प्रत्येक आदरणीय सदस्य जानता है कि हमारी राष्ट्रीय सरकार ने उत्तराधिकार में एक ऐसा प्रशासनतंत्र पाया है, जो साम्प्रदायिक, प्रान्तीय और धार्मिक संकीर्ण दृष्टिकोण वाला है। अब भी यह अस्वीकार नहीं किये जाने वाला सत्य है कि जब कभी नौकरियों में आरक्षण की बात उठती है तब जहां किसी प्रान्त या समुदाय के लोगों की तादाद ज्यादा है तो वे प्रान्तवाद या व्यक्तिवाद के आधार पर लोगों की भर्ती करते हैं। जहाँ भर्ती होने वाला, अफसर के प्रान्त का है वहाँ प्रान्तीय दृष्टि से पक्षपात होता है। जहाँ तक वह उसके समाज से सम्बन्धित है वहाँ साम्प्रदायिकता के आधार पर होती है। जहाँ वह उसकी जाति, उपजाति या समुदाय का है वहाँ पक्षपात उस दृष्टि से होता है। भर्ती करने वाला अफसर योग्यता नहीं देखता है। वह केवल स्वार्थ देखता है।''

आज देश का वातावरण ऐसा है जो नौकरियों में ही नहीं बल्कि विधानसभाओं में भी आरक्षण का प्रावधान रखने की माँग करने को बाध्य करता है। अन्य समुदाय के समान उनका

सांस्कृतिक उत्थान होने पर आरक्षण का विरोध करने में मैं पहला व्यक्ति हूँगा। जब तक वे सांस्कृतिक उत्थान का वह स्तर प्राप्त नहीं करते हैं, मैं आरक्षण का समर्थन करता हूँ।

संविधान सभा के सदस्य श्री चन्द्रिका राम का मत था कि ''सदस्यगण शायद यह बात जानते हैं कि दलित वर्ग और शेड्यूल्ड कास्ट्स के लोगों के आरक्षण के मुद्दे पर सलाहकार कमेटी में विचार किया गया था किन्तु वह वोट की कमी के कारण रद्द हो गया। अन्यथा अनुसूचित जाति के लिये आरक्षण का प्रावधान कानूनी बाध्यता के अन्तर्गत आ जाता। लेकिन जैसा कि मैं पाता हूँ कि लोग आश्चर्य कर रहे हैं कि इस धारा में 'पिछड़ा वर्ग' शब्दों को क्यों रखा गया हैं ? और 'पिछड़ा वर्ग' की परिभाषा ठीक से क्यों नहीं दी गई है ?

मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि सेठ दामोदर स्वरूप जो समाजवादी पार्टी के एक सदस्य हैं, और जो इस बात के लिये लोकप्रसिद्ध है कि वह चाहते हैं कि जनसंख्या के सभी समुदायों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए, वही इस धारा में पिछड़ा वर्ग की भलाई के प्रावधान पर क्यों आपत्ति कर रहै हैं ? इस संदर्भ में मैं प्रारूप समिति के परिश्रम की पूरे दिल से प्रशंसा करता हूँ।

श्री जसपत राय कपूर ने जाहिर किया कि

''महोदय, दुर्भाग्यवश पिछले कुछ समय से हम देख रहे हैं कि इस देश में प्रान्तवाद बढ़ता जा रहा है। अब–तब हम इसका शोर सुनते हैं । बंगालियों के लिये बंगाल, मद्रासियों के लिये मद्रास और इसी तरह की बातें महोदय यह शोर देश की एकता के हित मे नहीं है और न ही देश की अखंडता के हित में है। हम पाते हैं कि कुछ प्रान्तीय सरकारों ने नियम बना लिया है कि प्रान्त में रोजगार उस व्यक्ति को मिलेगा जो बहुत वर्षों से उस प्रान्त में रह रहा है।''

पं. हृदय नाथ कुंजरू का प्रस्ताव था कि ''संविधान में यह प्रावधान किया गया है कि अनुसूचित जनजाति और दलित वर्गों सहित सभी अल्पसंख्यकों के लिये विधायिका में आरक्षण परिभाषित पिछड़े वर्ग के लिए दस वर्ष के लिए होगा अब क्या यह वांछनीय नहीं है कि समय की वैसी ही सीमा धारा 10 की उपधारा (3) में रखी जाय। वास्तव में केन्द्रीय और प्रान्तीय प्रशासन में अल्पसंख्यकों के आरक्षण के लिए यह अधिक बल के साथ लागू की जानी चाहिए।

श्री पी. कक्कन ने आरक्षण का समर्थन करते हुए कहा ''उपाध्यक्ष महोदय धारा 10 का समर्थन करने में मुझे प्रसन्नता है। बेचारे अनुसूचित जाति के लोग सरकारी सेवाओं में उचित नियुक्तियाँ नहीं पाते। उच्च अधिकारी दलित लोगों की बजाय अपने लोगों को नियुक्ति देते हैं। पदोन्नति में भी उन्हें न्याय नहीं मिलता है। सरकार इन दलितों से आवश्यक शैक्षणिक योग्यता और व्यक्तित्व की आशा कर सकती है, अर्हता की नहीं। केवल शैक्षिक अर्हता को ध्यान में रखने से ये लोग आगे नहीं आ सकते हैं। मैं इस सभा में कहता हूँ कि इन लोगों की नियुक्ति के लिये आरक्षण पर सरकार को कुछ विशेष कदम उठाने चाहिए।''

श्री मुन्नी स्वामी पिल्ले ने चर्चा में भाग लेते हुए जाहिर किया ''महोदय, महापरिवर्तन के लिये इस देश के संविधान में, मैं महसूस करता हूँ कि जिन समुदायों ने जीवन निर्वाह का आनन्द नहीं उठाया है उनकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। इस उद्देश्य से मैने संशोधन का नोटिस दिया जिस पर पचास सदस्यों द्वारा हस्ताक्षर करवा कर इसे सभा में प्रस्तुत किया है।... महोदय दूसरे दिन हमारे आदरणीय उपप्रधानमंत्री सरदार पटेल ने कहा था कि अनुसूचित जाति के लोगों को केवल न्याय ही नहीं मिलना चाहिए बल्कि उनके साथ उदारता का व्यवहार किया जाना चाहिए। इस दृष्टिकोण और भावना के अन्तर्गत मैं प्रार्थना करता हूँ कि इस सभा को स्पष्ट संकेत देना चाहिए कि अनुसूचित जाति के लोगों के हित का ध्यान रखा जायेगा.... मैं महसूस करता हूँ कि अन्य समुदाय भी आरक्षण की माँग करेंगे लेकिन अनुसूचित जाति के लोगों का मामला साम्प्रदायिकता के आधार पर नहीं देखा जाना चाहिए क्योंकि उनको अधर में लटका छोड़ दिया गया है और वर्षों से सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक विकास से वंचित किए गये इन वर्गों के लिए यह आवश्यक है और मैं भी महसूस करता हूँ कि उनका मामला पूरी शक्ति से रखा जाना चाहिए ताकि प्रत्येक सदस्य न्याय पा सके। इसके अतिरिक्त वे लोग जो अनुसूचित जाति से भर्ती हुए हैं, वे अपनी योग्यता सिद्ध कर चुके हैं। महोदय, मैं कह सकता हूँ कि हम सब जानते हैं कि सेना में भी कश्मीर में उन्होंने सर्वाधिक दक्षतापूर्ण भूमिका निभाई है।

(जैसा कि बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने ठीक कहा है कि ''बैकवर्ड'' शब्द का रखा जाना बहुत उपयुक्त इसलिये है कि धारा 10 की उपधारा (1) और (2) बेकार सिद्ध होगी यदि ''बैकवर्ड'' शब्द धारा 10 की उपधारा (3) में नहीं रहता है।)

श्री एच जे खाण्डेकर का मत था कि ''उपाध्यक्ष महोदय, मैं धारा 10 का समर्थन करने आया हूँ जिस पर सभा में बहस चल रही है। इसका समर्थन करने से पहले मैं प्रारूप समिति के उस मित्र को बधाई देता हूँ जिसने धारा 10 की उपधारा (3) में बैकवर्ड शब्द को रखा है। यदि यहाँ ''बैकवर्ड'' शब्द नहीं होता तो शेड्यूल्ड कास्ट्स के लोगों का उद्देश्य पूरा नहीं होता जैसा कि होना चाहिए। जिन लोगों ने सभा में भाषण दिये है, उन मित्रों ने शेड्यूल्ड कास्ट्स की हालत का वर्णन किया है। हालत इतनी दयनीय है कि यद्यपि शेड्यूल्ड कास्ट्स के लोग सरकारी नौकरियों के लिये प्रार्थना पत्र देते हैं, किन्तु वे नियुक्त नहीं किये जाते हैं क्योंकि चुनने वाले लोग उनके समुदाय या वर्ग के नहीं होते है। इस बारे में मैं बहुत से उदाहरण दे सकता हूँ क्यांकि मैं देश के सभी प्रान्तों की जानकारी रखता हूँ कि शेड्यूल्ड कास्ट्स के लोग अच्छी तरह योग्य होने पर भी नियुक्ति के अवसर नहीं पाते और नौकरियों में उचित व्यवहार भी नहीं पाते हैं।''

श्री दामोदर स्वरूप सेठ, श्री टी.टी. कृष्णामाचारी एवं कई सदस्यों ने आरक्षण का इस आधार पर विरोध किया कि इससे योग्यता की अनदेखी होगी साथ ही प्रशासनिक कार्यक्षमता पर भी विपरीत असर पड़ेगा लेकिन उनके इस प्रस्ताव को बहुमत का समर्थन नहीं मिल पाया।

बाबा साहब अम्बेड़कर ने सरकारी सेवा के पदों बाबत् सभी संशोधन प्रस्तावों एवं आपत्तियों पर विस्तार से निम्न जवाब पेश किया।

''श्रीमान् उपाध्यक्ष, मैं आरम्भ में कहने जा रहा हूँ कि बहस में उठे कुछ विशेष प्रश्नों के उत्तर देने से पहले मेरा कहना है कि मि. मिश्र के संशोधन संख्या 334 को मैं स्वीकार नहीं करता हूँ मैं नजरूद्दीन अहमद के संशोधन संख्या 336 व 337 को स्वीकार नहीं करता हूँ मि. इनाम के संशोधन संख्या 338 जिनका संशोधन मि. अनन्थसयनम अय्यंगर के संशोधन संख्या 77 ने किया है उसको मैं स्वीकार करता हूँ। मैं. मि. कपूर के संशोधन सं. 340 जिसका संशोधन मि.मुन्शी और मि. अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर के संशोधन संख्या 81 व 82 ने किया है उसको मैं स्वीकार करता हूँ।''

मैं नहीं समझता हूँ कि मुझको संशोधन सं. 334 व 337 का उत्तर देने के लिए बुलाया गया है। इसलिए 'रेजीडेन्स' (Residence) जिस पर लम्बी बहस रही, उस पर और धारा 10 की उपधारा (3) में ''बैकवर्ड'' शब्द के प्रयोग पर मेरी बात सीमित रहेगी। मेरे मित्र टी.टी. कृष्णामाचारी ने प्रारूप समिति पर ताना मारा है कि संभवतः प्रारूप समिति अपने कुछ सदस्यों का स्वार्थ देखती रही है इसलिये संविधान बनाने के बजाय वकीलों के वैभव की कोई चीज बना दी है। मैं कहने को तैयार नहीं हूँ कि यह संविधान ऐसे प्रश्न नहीं खड़ा करेगा जो कानूनी और न्यायिक व्यवस्था में शामिल होंगे। वास्तव में मि. टी.टी. कृष्णाचारी से पूछना चाहूँगा कि क्या वे उदाहरण देकर बता सकते हैं कि दुनिया के संविधानों में से कौन सा संविधान वकीलों के लिए वैभव की बात नहीं बता रहा है। विशेष रूप से मैं उनसे पूछता हूँ कि अमेरिका, कनाडा और अन्य देशों के संविधान की रखी विशाल रिपोर्टों में से मुझको कोई उदाहरण दें। इसलिए मैं बिल्कुल शर्मिन्दा नहीं हूँ यह संविधान बाद में व्याख्या के लिये संघीय न्यायालय में ले जाया जाता है। यही दशा प्रत्येक संविधान और प्रत्येक समिति की होती है। इसलिये इस बात पर मैं अधिक नहीं कहूँगा।

अब 'रेजीडेन्स' (Residence) के प्रश्न पर आते हैं, बात बहुत आसान है। मैं नहीं समझ सकता हूँ कि टी.टी. कृष्णमाचारी जैसे विद्वान इस संशोधन के मौलिक उद्देश्य को समझने में क्यों विफल हैं ?

मैं इसे बिल्कुल नहीं समझ पाया हूँ। मैं इस संशोधन के उद्देश्य को कहूँगा। सभा के बहुत से लोगों की यह भावना है कि प्रान्त ओर रियासत के क्षेत्रीय अधिकार को नहीं मानते हुए पूरे भारत में एक समान नागरिकता लागू की है। यह केवल एक साथ–साथ चलने वाली बात है कि किसी निश्चित पद के लिए रेजीडेन्स (Residence) कोई योग्यता नहीं होनी चाहिए। उसके साथ यह भी विचार होना चाहिए कि लोगों को एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त को, एक रियासत से दूसरी रियासत को भागने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। किसी निश्चित स्टेट के साथ बिना आधार एवं संबंध के नौकरी पाने के लिए आने की इजाजत भी नहीं देनी चाहिए जिससे वे फल चखकर भाग जायें। इसलिये कुछ सीमाएं होना अनिवार्य है। यह बताया गया था, जब इस बारे

में खोजबीन हुई, कि पहले से ही आज बहुत से प्रान्तों में नौकरी पाने के लिये कुछ अवधि का निवास होने के बारे में प्रान्तीय सरकार ने नियम बना लिये थे। इसलिये संशोधन का प्रस्ताव था कि सामान्य नियम है कि निवास योग्यता नहीं होनी चाहिए यद्यपि कुछ अपवाद हो सकते हैं जो आम बात से बाहर नहीं है। हम सिर्फ परम्परा को निभा रहे हैं जो पहले से ही बहुत से प्रान्तों में है। हमने यह पाया था कि विभिन्न काफी अलग–अलग प्रान्त यह कानून बना रहे थे कि नौकरी पाने के लिये निवास की अवधि होना चाहिए। कुछ प्रान्तों ने कहा कि व्यक्ति वास्तव में स्थायी होना चाहिए। इसका क्या अर्थ होता है, प्रत्येक नहीं जानता है। कुछ ने दस वर्ष, कुछ ने सात वर्ष और कुछ ने कुछ और निवास की अवधि तय की। इसलिये महसूस किया गया कि योग्यता एक सी तय हो जो सम्पूर्ण भारत में समान हो। निष्कर्ष के रूप में यदि यह उद्देश्य पाना है तो अर्हता के साथ निवास की अवधि भी समान होनी चाहिए। यह अधिकार प्रान्त या रियासत के बजाय केवल संसद को दिया जाना चाहिए। इस संशोधन का यह निहित लक्ष्य है कि अर्हता के लिये निवास की अवधि तय हो।

''उस समय आपत्ति के संबंध में जो मेरे मित्र मि. कामथ ने उठाई है, मैं उसका उत्तर नहीं दूँगा क्योंकि मि.मुन्शी और अन्य मित्रों ने जवाब दे दिया है। उन्होंने बता दिया है कि संशोधन की भाषा पूरी तरह इस संविधान के अन्य प्रावधानों के अनुरूप क्यों है।

''महोदय अब उस प्रश्न की ओर आना है जो सभा के सदस्यों को संघर्ष में डाले हुए है। वह धारा 10 की उपधारा (3) में 'बैकवर्ड' (Backward) शब्द का प्रयोग है। कुछ सामान्य बातों से मुझको इसकी शुरूआत करनी चाहिए ताकि सदस्यगण धारा–10 की उपधारा (3) इसका आयात महत्व व अनिवार्यता को समझ सकें। यदि सदस्यगण इस विषय में कोशिश करेंगे और विचारों का आदान–प्रदान करेंगे तो वे पायेंगे कि तीन तरह के विचार हैं जो सबके लिए स्वीकार्य और हमारे लिये पुनर्विचारार्थ इस कानून के लिए आवश्यक है। इन तीनों बातों मे पहली बात है कि सभी नागरिकों के लिये सेवा के समान अवसर होने चाहिए। सभा के बहुत सदस्यों की यह इच्छा है कि प्रत्येक व्यक्ति जो निश्चित पद के योग्य है उसको आवेदन पत्र देने की स्वतंत्रता होनी चाहिए अर्थात् ऐसी परीक्षा एवं टैस्ट देने का, जिससे यह तय हो कि वह किसी पद के योग्य है या नहीं। इस बात की कोई सीमा नहीं होनी चाहिए। समान अवसर के सिद्धान्त के लागू होने में कोई रूकावट नहीं होनी चाहिए। सभा के अधिकांश सदस्यों का दूसरा विचार है कि यदि यह सिद्धान्त लागू होना है तो उनके निर्णय के अनुसार यह पूरी तरह सब पर लागू होना चाहिए। इसलिये किसी भी वर्ग अथवा समुदाय के लिये किसी भी रूप में कोई आरक्षण नहीं होना चाहिए। जहाँ तक सरकारी नौकरियों का सम्बन्ध है, सभी नागरिक, यदि वे योग्य हैं, उनको समानता के स्तर पर रखा जाना चाहिए, यह दूसरा दृष्टिकोण है जो हम रखते हैं। तब हम एक शक्तिशाली मत रखते हैं जो जोर देकर कहता है कि यह एक अच्छा सिद्धान्त है कि अवसर की समानता होगी। उसी समय यह भी प्रावधान होना चाहिए कि कुछ समुदायों को शासन में स्थान देना है, जिनको अब तक प्रशासन से बाहर रखा गया है। जैसा मैंने प्रारूप

समिति के तीनों विचारों को सामने रखकर एक सूत्र तैयार करना था। प्रथम सबको अवसर उपलब्ध होंगे। दूसरा, उन निश्चित समुदायों के लिए आरक्षण होगा जिनको प्रशासन में अब तक उचित स्थान नहीं मिला है। यदि आदरणीय सदस्यगण इन तीन सिद्धान्तों को दिमाग में रखेंगे कि हमको झगड़ा मिटाना है तो वे पायेंगे कि इस संविधान की धारा 10 उपधारा (3) के प्रावधान से अच्छा कोई प्रावधान तैयार नहीं हो सकता था। जो विश्वास रखते हैं कि समान अवसर उपलब्ध होने चाहिए वे पायेंगे कि यह प्रावधान धारा 10 उपधारा (1) में किया गया है। यह एक सामान्य सिद्धान्त है। उसी समय जैसा कि मैंने कहा कि कुछ समुदायों की यह माँग थी कि ऐतिहासिक कारणों से प्रशासन एक या कुछ समुदायों के हाथों में रहा है इसका समाधान खोजना था। यह स्थिति पूर्णरूप से स्वीकार करनी थी जिनको सरकारी सेवाओं में स्थान नहीं मिला है। वास्तव में हुआ यह है कि जिस पहली बात से हम सब सहमत हैं कि सबको समान अवसर मिलेंगे, को हम तोड़ रहे हैं। मुझको उदाहरण देने दें। यह मानते हुए कि किसी समुदाया या समुदायों का आरक्षण कुल पदों का 70 प्रतिशत कर दिया जाय और 30 प्रतिशत आरक्षित छोड़ दिया जाय क्या कोई कह सकता है कि सामान्य प्रतियोगिता के लिए 30 प्रतिशत आरक्षण हैं ? क्या यह पहले सिद्धान्त 'समान अवसर होंगे' की दृष्टि से संतोषजनक होगा ? मेरे विचार में नहीं हो सकता है। इसलिये जो पद आरक्षित होने हैं, यदि धारा 10 उपधारा (1) के साथ आरक्षण को मजबूत रखना है तो उसकी सीमा अल्पसंख्यक होनी चाहिए। केवल यह तरीका है कि पहला सिद्धान्त संविधान में स्थान पा सकता है और लागू हो सकता है। यदि आदरणीय सदस्य यह स्थिति समझते हैं कि हमकों दो बातों को सुरक्षित रखना है सबको अवसर की समानता का सिद्धान्त और उसी समय उन समुदायों की माँग को पूरा करना, जिनको स्टेट में उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है। मुझे विश्वास है कि जब तक आप 'बैकवर्ड' की तरह उचित शब्द प्रयोग नहीं करते, आरक्षण का प्रावधान नियम को खा जायेगा। नियम में से कुछ नहीं बचेगा। मेरा विचार है कि मैं कह सकता हूँ कि यह न्याय पक्ष का समर्थन है कि प्रारूप समिति ने 'बैकवर्ड' (Backward) शब्द को रखने की जिम्मेदारी अपने कन्धों पर ली थी। मैं स्वीकार करता हूँ कि संविधान सभा ने मूल रूप में जो जो मौलिक अधिकार पारित किये उनमें यह नहीं है। मैं समझता हूँ कि आदरणीय सदस्यगण महसूस करेंगे कि कई कारणों से कमजोर प्रारूप के लिए प्रारूप की हँसी उड़ाई गई। कभी किसी और बात के लिए जो उचित नहीं है तो कभी भविष्य में विरोध के लिए। जो संविधान तैयार हुआ है उसमें संभावना को अधिक स्पष्ट रूप में रखा गया है। मैं समझता हूँ कि 'बैकवर्ड' शब्द रखने का समर्थन न्याय–पक्ष से काफी है। इस प्रकार संविधान सभा ने सरकारी सेवा के पदों में पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण के प्रारूप को पारित कर दिया। इस कारण सरकारी सेवाओं में पिछड़े वर्ग को आरक्षण का प्रावधान मौलिक अधिकारों का हिस्सा बन गया।

भारतीय संविधान की विशेषताएँ :–

भारतीय संविधान विश्व का सबसे विस्तृत व लिखित संविधान है। संविधान निर्माताओं ने संसदीय लोकतंत्र को देश के लिए अधिक उपयुक्त माना जिसमें जनता के प्रति जवाबदेह विधायिका, समर्पित कार्यपालिका व स्वतंत्र न्यायपालिका की परिकल्पना को साकार रूप प्रदान किया और यह अपेक्षा की थी कि लोकतंत्र में सत्ता के तीनों स्तम्भ बिना किसी भेदभाव व पूर्वाग्रह के सभी को फलने फूलने का समान अवसर प्रदान करेंगे, इसलिए जहां संविधान में लोगों के मौलिक अधिकार निश्चित कर उनकी सुरक्षा की व्यवस्था की गई है वहीं भविष्य की शासन व्यवस्था लोक कल्याणकारी रहे इसकी भी अपेक्षा नीति निर्देशक तत्वों के जरिए की गई है।

नागरिकों के मौलिक अधिकार :–

1. **मूल अधिकारों से असंगत या उनका अल्पीकरण करने वाली विधियाँ :–** 1. इस संविधान के प्रारम्भ के ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियाँ उस मात्रा तक शून्य होंगी जिस तक वे इस भाग के उपबंधों से असंगत हैं।

2. राज्य ऐसी कोई विधि नहीं बनाएगा जो इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों को छीनती है या न्यून करती हैं और इस खण्ड के उल्लंघन में बनाई गई प्रत्येक विधि उल्लंघन की मात्रा तक शून्य होगी।

3. इस अनुच्छेद में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) ''विधि'' के अंतर्गत भारत के राज्यक्षेत्र में विधि का बल रखने वाला कोई अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम, विनियम, अधिसूचना, रूढ़ि या प्रथा है,

(ख) ''प्रवृत्त विधि'' के अंतर्गत भारत के राज्यक्षेत्र में किसी विधान मंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा इस संविधान के प्रारम्भ से पहले पारित या बनाई गयी विधि है जो पहले ही निरसित नहीं कर दी गई है, चाहे ऐसी कोई विधि या उसका कोई भाग उस समय पूर्णतया या विशिष्ट क्षेत्रों में प्रवर्तन में नहीं हैं।

4. इस अनुच्छेद की कोई बात अनुच्छेद 368 के अधीन किए गए इस संविधान के किसी संशोधन को लागू नहीं होगी।

भारत में सदियों से असमानता, भेदभाव, शोषण व अन्याय पर टिकी धर्म आधारित हिन्दू समाज व्यवस्था को मौलिक अधिकारों ने ध्वस्त करने का मार्ग प्रशस्त किया है आर्टिकल 13 में यह स्पष्ट उल्लेख है कि इस संविधान के प्रारम्भ से पूर्व वे तमाम नियम, परम्पराएं व रूढ़ियां असंगत व शून्य (void) समझी जायेंगी जो नागरिकों के मौलिक अधिकारों में अवरोध का काम करती हैं यह भी स्पष्ट किया गया है कि देश का कानून सभी के लिए समान होगा और किसी

नागरिक को विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं किया जा सकेगा। धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग जन्म स्थान के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होगा। सरकारी सेवा व लोक नियोजन के मामले में सभी को अवसर की समानता होगी लेकिन शैक्षिक व सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों को सरकारी सेवा में उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करने हेतु राज्य उपाय करेगा अनुच्छेद 17 के जरिये अस्पृश्यता का अन्त करते हुए यह संकल्प लिया है कि अस्पृश्यता से उपजी किसी निर्योग्यता को मानना, मनवाना या थोपना एक दण्डनीय अपराध होगा।

भारत के सभी नागरिकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के साथ शांतिपूर्वक संघ बनाने, सम्मेलन आयोजित करने, भारत के किसी भी क्षेत्र में निवास करने, बसने अपनी मर्जी का वैध व्यवसाय व आजीविका का साधन अपनाने का अधिकार होगा। प्रत्येक व्यक्ति को जीने का अधिकार होगा। किसी भी नागरिक को एक ही अपराध के लिए एक से अधिक बार न तो अभियोजित किया जायेगा और नहीं दण्डित ही किया जायेगा साथ ही उसे अपने विरूद्ध साक्षी होने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकेगा। अकारण किसी नागरिक को गिरफ्तार नहीं किया जायेगा उसे अपनी प्रतिरक्षा व विधिक सहायता का अधिकार होगा। बिना सक्षम मजिस्ट्रेट की अनुमति के 24 घंटे से अधिक निरूद्ध नहीं किया जायेगा।

शोषण के विरूद्ध अधिकार हेतु ब्लात श्रम व बेगार को अवैध व दंडनीय अपराध करार दिया गया है। यह भी व्यवस्था करने का आदेश है कि 14 वर्ष से कम आयु के बालक को किसी कारखाने या खान में काम करने के लिए नियोजित नहीं किया जायेगा अथवा अन्य परिसंकटमय नियोजन में नहीं लगाया जायेगा। अप्रेल 2010 से 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा के अधिकार ने करोड़ों असहाय बच्चों को ज्ञान की रोशनी से रूबरू होने का अवसर प्रदान किया है।

प्रत्येक नागरिक को अन्तःकरण की स्वतंत्रता का, धर्म को अबाध रूप से मानने, आचरण करने व प्रचार करने का अधिकार होगा। धार्मिक प्रयोजन के लिए संस्थाओं की स्थापना, उनके प्रबंधन, सम्पत्तियों के अर्जन व स्वामित्व का अधिकार होगा।

भारत के राज्य क्षेत्र में अल्पसंख्यक समुदायों को अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाऐ रखने व भाषा या लिपी एवं शिक्षा की अभिवृद्धि के लिए कार्य करने का अधिकार होगा, धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रूचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना व प्रशासन का अधिकार होगा।

इस प्रकार मौलिक अधिकारों के जरिये भारत के सभी नागरिकों को फलने फूलने के समान अवसर के साथ–साथ अभिव्यक्ति का अधिकार भी प्रदान किया गया है, धर्म की आड़ में सदियों से बेजुवान, बेबस बनाकर अर्द्ध मानव का जीवन जीने को मजबूर किये जाने वाले इस देश के बहुसंख्यक वर्ग को भी इस सुनहरी दुनियां को अपने नजरिए से देखने व परखने का

अवसर प्राप्त हुआ है। **लोकतंत्र में वोट के जरिये शासक चुनने के अधिकार ने तुलसीदास के रामचरितमानस के जरिए यहां के मूल निवासियों को शास्वत गुलाम बनाएं रखने वाले इस कथन को "कोऊ नृप होऊ, हमें का हानि, चेरी छोड़ नहीं होवहूँ रानी" को एक धोखा, प्रपंच, कुटिल नीति व षड़यंत्र करार देने की मानसिकता के विकास का मार्ग प्रशस्त किया है।**

भारतीय संविधान के आर्टीकल्स 13 से 16 में समतामूलक समाज के निर्माण की अपेक्षा संविधान निर्माताओं ने की थी क्या हम मनुस्मृति अन्य स्मृतियों एवं धर्मशास्त्रों द्वारा थोपे गये वे अलंकार व पहचान के मानकों को बदलने में कामयाब हो पाये जो समतामूलक समाज के मार्ग में अवरोध का काम कर रहे हैं ? आजादी के बाद भी उच्चवर्ग में सुमार तथाकथित द्विज ब्राह्मण अपनी पहचान–शर्मा, पाण्डे, मिश्रा पाठक, चतुर्वेदी, द्विवेदी, उपाध्याय, झा, ओझा, व्यास, पारासर, सनाढय, गौड़ पुष्करणा आदि रूप में बनाये हुए हैं गर्व से उस लबादे को ओढ़कर ब्राह्मणों के लिए धर्म आधारित व्यवसाय पर एकाधिकार जमाकर अन्य वर्गों को अधम व नीच होने का अहसास कराने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ रहे हैं। इसी प्रकार वैश्य भी गुप्ता अग्रवाल, महेश्वरी, खण्डेलवाल, पोरवाल, गोयल के रूप में वर्ण आधारित पहचान को और पुख्ता कर देश की पूंजी व व्यवसायों पर कुण्डली मारकर बैठे हुए हैं आजादी के बाद सिंह या बलवान के रूप में क्षत्रियों की पहचान भी बरकरार है जो व्यक्ति–व्यक्ति के बीच भेदभाव पक्षपात शोसक व शोषित की पहचान को बरकरार रखे हुए हैं, इसी कारण भारतीय संविधान में अनुच्छेद 19 में प्रद्दत व्यवसायिक स्वतंत्रता, दलितो में सुमार जातियों व उपेक्षित वर्ग को प्राप्त नहीं हो सकी है। ब्राह्मण मन्दिर का पुजारी है, इसी कारण पूजा स्थलों के दरवाजे दलितों व अस्पृश्यों के लिए बंद है। क्या कोई वाल्मिकी गांव में परचूनी, मिठाई या चाय की थड़ी लगाने की हिमाकत कर सकता है? क्या समाज का धर्मशास्त्रों द्वारा अधिरोपित व पोषित उच्च वर्ग उसे ऐसा करने देगा ? या उसका उक्त व्यवसाय चल पायेगा ? आजादी के समय तक समाज की गंदगी साफ कर सिर पर रखकर–मैला ढोने वाला समाज आज भी उसी हेय व्यवसाय से चिपके रहने को इस कारण मजबूर है क्योंकि उसे जिन्दा रहने का कोई सम्मानजनक विकल्प ही आजादी के बाद सत्ता की बागडोर संभालने वाला शासक वर्ग उपलब्ध नहीं करा पाया है।

यह गहरी चिन्ता व दुख का विषय है कि ग्रामीण अंचल में दलित शोषण व उत्पीड़न का शिकार है। धार्मिक पूजा स्थल व सार्वजनिक पनघट उसकी पहुंच के बाहर हैं। उसे अपनी मर्जी का व्यवसाय चुनने व शुरू करने में भय लगता है। उसे पग–पग पर गांव की प्रभावशाली जातियों के कट्टर प्रतिरोध का सामना करना पड़ रहा है। उसके पक्ष में बने कानून निष्प्रभावी साबित हो रहे हैं वह न्याय से महरूम है, असहाय एवं बेबस है प्रतिकार की भावना का उसमें अभाव है, अन्याय के विरूद्ध उठ खड़े होने का जज्बा उसमें उत्पन्न नहीं हो पाया है, यह निर्विवाद रूप से स्थापित है कि इस देश का मूल निवासी दलित व पिछड़ा वर्ग हजारों जातियों

में विभाजित है, वे जातीय दायरे से बाहर नहीं निकल पाये हैं। ऐसा कर पाने की उनकी मानसिकता भी विकसित नहीं हो पाई है। दलितों में बहुत सी जातियां तो आजीविका के लिए जरायम पेशा व देह व्यापार में लगी होने को विवश हैं। वे भी अपनी जातीय पहचान समाप्त नहीं कर पा रही हैं। बस्ती की गन्दगी साफ कर जीवन निर्वाह करने वाली कोम भी जातीय पहचान को समाप्त नहीं करने को मजबूर है, अछूतों में ऐसी कई जातियां हैं जिन्हें बतलाने पर शर्म महसूस होती है तथा हिकारत व तिरस्कार का पात्र बनना पड़ता है वे भी जातीय बेड़ियों को नहीं तोड़ पा रहे हैं, ऐसा करना उन्हें आत्मघाती इसलिए लग रहा है क्योंकि जातीय पहचान के कारण हिकारत व नफरत की भावना उन्हें सम्मानजनक व लाभकारी व्यवसाय अपनाने में अवरोधक का काम करेगी। उक्त व्यवसाय के लिए आवश्यक पूंजी, तकनीक व व्यावसायिक वातावरण का भी उनके सामने एक विकट संकट है। देश के शासक वर्ग ने समता मूलक समाज के निर्माण की कोई पहल ही नहीं की ऐसा करने की इनकी मानसिकता भी नही है।

उपरोक्त सभी प्रकार के बंधनों, विवशताओं व निर्योग्यताओं से निजात दिलाने के लिए ही इन वर्गों को आरक्षण के जरिये बराबरी पर लाने की कवायद के लिए बाबा साहब भीम राव अम्बेडकर ने संविधान सभा में दबाव बनाया था तथा सामाजिक व शैक्षिक पिछड़ापन को आधार बनाकर शिक्षा, सरकारी सेवा के पदों व विधायिका में राजनैतिक आरक्षण को जायज करार देने के लिए संविधान सभा को मजबूर किया था। इसी कारण भारतीय संविधान में अनुच्छेद 14 से 17 के जरिये सदियों से पीड़ित व वंचित वर्ग को विशेष संरक्षण प्रदान किया गया।

समता के अधिकार के लिए विशेष प्रावधान

14. **विधि के समक्ष समता** – राज्य, भारत के राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।

15. **धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म–स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध** – 1. राज्य, किसी नागरिक के विरूद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म–स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

2. कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म–स्थान या इनमें से किसी के आधार पर –

(क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश, या

(ख) पूर्णतः या भागतः राज्य–निधि से पोषित या साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग के संबंध में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व, निर्बन्धन या शर्त के अधीन नहीं होगा।

3. इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य की स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

[1]4. इस अनुच्छेद की या अनुच्छेद 29 के खण्ड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

16. लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता – 1. राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी।

2. राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्‌भव, जन्म–स्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जाएगा।

3. इस अनुच्छेद की कोई बात संसद् को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो [1](किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार के या उसमें के किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन वाले किसी वर्ग या वर्गों के पद पर नियोजन या नियुक्ति के संबंध में ऐसे नियोजन या नियुक्ति से पहले उस राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के भीतर निवास विषयक कोई अपेक्षवा विहित करती है।)

4. इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को पिछड़े हुए नागरिकों के किसी वर्ग के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

[1](4–क) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है उनके लिए उचित प्रावधान की व्यवस्था करने से निवारित नहीं करेगी।

5. इस अनुच्छेद की कोई बात किसी ऐसी विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी जो यह उपबन्ध करती है कि किसी धार्मिक या सांप्रदायिक संस्था के कार्यकलाप से संबंधित कोई पदधारी या उसके शासी निकाय का कोई सदस्य किसी विशिष्ट धर्म का मानने वाला या विशिष्ट संप्रदाय का ही हो।

17. **अस्पृश्यता का अंत** – ''अस्पृश्यता'' का अंत किया जाता है और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध किया जाता है। ''अस्पृश्यता'' से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा।

भविष्य की लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था जनता के प्रति जवाबदेह, संवेदनशील व लोक कल्याणकारी बनी रहे इसके लिए निम्न नीति निर्देशक तत्वों की व्यवस्था भी की गई है।

भाग 4

राज्य की नीति के निदेशक तत्त्व

36. परिभाषा – इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, ''राज्य'' का वही अर्थ है जो भाग 3 में है।

37. इस भाग में अंतर्विष्ट तत्त्वों का लागू होना – इस भाग में अंतर्विष्ट उपबंध किसी न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं होंगे किन्तु फिर भी इनमें अधिकथित तत्त्व देश के शासन में मूलभूत हैं और विधि बनाने में इन तत्त्वों को लागू करना राज्य का कर्त्तव्य होगा।

38. राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा – [1](1) राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्रामाणित करे, प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करने और लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा।

[1]((2) राज्य, विशिष्टया, आय की असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा और न केवल व्यक्तियों के बीच बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच भी प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा।)

39. राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्त्व– राज्य अपनी नीति का, विशिष्टतया, इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से –

(क) पुरूष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो;

(ख) समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बँटा हो जिससे सामुहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो;

(ग) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले जिससे धन और उत्पादन–साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी संकेंद्रण न हो;

(घ) पुरूषों एवं स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो;

(ड़) पुरूष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरूपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हो

[2](च) बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं दी जाएं और बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाए।)

[3](**39–क समान न्याय और निःशुल्क विधिक सहायता–** राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक तंत्र इस प्रकार काम करे कि समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो और वह, विशिष्टतया, यह सुनिश्चित करने के लिए कि आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए, उपयुक्त विधान या स्कीम द्वारा या किसी अन्य रीति से निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा।)

40. ग्राम पंचायतों का संगठन – राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियाँ और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों।

41. कुछ दशाओं में काम, शिक्षा और लोक सहायता पाने का अधिकार – राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर, काम पाने के, शिक्षा पाने के और बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और निःशक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा।

42. काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबन्ध – राज्य काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए और प्रसूति सहायता के लिए उपबन्ध करेगा।

43. कर्मकारों के लिए निर्वाह मजदूरी आदि – राज्य, उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्य रीति से कृषि के, उद्योग के या अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों को काम, उद्योग के या अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों को काम, निर्वाह मजदूरी, शिष्ट जीवन स्तर और अवकाश का सम्पूर्ण उपभोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशाएं तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा और विशिष्टतया ग्रामों में कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक या सहकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करेगा।

[1](**43–क. उद्योगों के प्रबन्ध में कर्मकारों का भाग लेना–** राज्य किसी उद्योग में लगे हुए उपक्रमों, स्थापनों या अन्य संगठनों के प्रबन्ध में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त विधान द्वारा या किसी अन्य रीति से कदम उठाएगा।)

44. **नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता –** राज्य, भारत के समस्त राज्य क्षेत्र में नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता प्राप्त कराने का प्रयास करेगा।

[2]**(45– शैशव पूर्व देखभाल तथा छह वर्ष से नीचे की आयु को शिक्षा के लिए व्यवस्था–** राज्य शैशव पूर्व देखभाल तथा सभी बालकों के लिए उनके छह वर्ष की आयु पूरी कर लेने तक शिक्षा के लिए व्यवस्था करने का प्रयास करेगा।)

46– अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि– राज्य, जनता के दुर्बल वर्गों के, विशिष्टतया, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा।

47– पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने तथा लोक स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य– राज्य, अपने लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने और लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा और राज्य, विशिष्टतया, मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकर औषधियों के, औषधीय प्रयोजनों से भिन्न, उपभोग का प्रतिषेध करने का प्रयास करेगा।

48– कृषि और पशुपालन का संगठन– राज्य, कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा और विशिष्टतया गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहक पशुओं की नस्लों के परिरक्षण और सुधार के लिए और उनके वध का प्रतिषेध करने के लिए कदम उठाएगा।

[3]**(48–क. पर्यावरण का संरक्षण तथा संवर्धन और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा–** राज्य, देश के पर्यावरण के संरक्षण तथा संवर्धन का और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा।)

49. राष्ट्रीय महत्व के संस्मारकों, स्थानों और वस्तुओं का संरक्षण– [1](संसद द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन) राष्ट्रीय महत्व वाले [1](घोषित किए गए) कलात्मक या ऐतिहासिक अभिरूचि वाले प्रत्येक संस्मारक या स्थान या वस्तु का, यथास्थिति, लुंठन, विरूपण, विनाश, अपसारण, व्ययन या निर्यात से संरक्षण करना राज्य की बाध्यता होगी।

50. कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण– राज्य की लोक सेवाओं में, न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने के लिए राज्य कदम उठाएगा।

51. अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि– राज्य,

(क) अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि का,

(ख) राष्ट्रों के बीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण संबंधों को बनाए रखने का,

(ग) संगठित लोगों के एक दूसरे से व्यवहारों में अंतरराष्ट्रीय विधि और संधि–बाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का, और

(घ) अंतरराष्ट्रीय विवादों के मध्यस्थ द्वारा निपटारे के लिए प्रोत्साहन देने का, प्रयास करेगा।

भारतीय संविधान का भाग 4 जिसमें भविष्य की शासन व्यवस्था के लिए संविधान निर्माताओं ने जो दिशा निर्देश जारी किए हैं इनके क्रियान्वयन के लिए भारतीय नागरिक न्यायालय से अनुतोष हेतु गुहार तो लगा सकता है लेकिन न्यायालय को आज्ञापक आदेश जारी करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। परन्तु लोकतंत्र में दबाव समूहों को जनोपयोगी इन दिशा–निर्देशों को लागू करने के लए एक सशक्त हथियार तो उपलब्ध करा ही दिया है। इन दिशा–निर्देशों का ही चमत्कार है कि आजादी के बाद भारतीय संसद को समान काम के लिए समान वेतन, न्यूनतम पारिश्रमिक, बालश्रमिक निषेध अधिनियम, निःशुल्क विधिक सहायता के लिए विधि सेवा प्राधिकरण अधिनियम व 14 वर्ष तक के बालकों के लिए मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना जैसे लोक उपयोगी अधिनियम पारित करने पड़े। ''भोजन का अधिकार'' देश के कमजोर, अभावग्रस्त व गरीब लोगों को मिले इसके लिए स्वयंसेवी संगठनों को शीर्ष न्यायालय से हक प्राप्त करने में आंशिक कामयाबी प्राप्त हो गई है। इस प्रकार **''जनता की सरकार जनता द्वारा व जनता के लिए होने''** की मानसिकता व प्रतिबद्धता को इन नीति–निर्देशक तत्वों ने मजबूती प्रदान की है। सदियों से शिक्षा, आत्म सम्मान व आर्थिक स्वावलम्बन से वंचित वर्ग को आरक्षण के जरिये सक्षम बनाने का मार्ग भी इन नीति निर्देशक तत्वों ने ही प्रशस्त किया है।

संविधान में आरक्षण की पात्रता के बिन्दु

जैसा कि पूर्व में लिखा जा चुका है कि अंग्रेजों को शासन सत्ता के सुचारन संचालन के लिए पढ़े लिखे लोगों की आवश्यकता होने से उन्होंने सभी के लिए शिक्षा के द्वार खोले जिसके फलस्वरूप सदियो से शिक्षा व ज्ञान के अधिकार से वंचित शूद्र वर्ण की जातियों व अतिशूद्रों (अस्प्रस्यों) को भी शिक्षा प्राप्त करने के उपरान्त, ब्रिटिश सरकार की शासन व्यवस्था का हिस्सा बनाया गया। इस कारण इन उपेक्षित व वंचित वर्ग के पढ़े लिखे लोगों में आत्मसम्मान से जीने व समानता के लिए संघर्ष की प्रेरणा मिली।

हिन्दू वर्ण व्यवस्था के कारण उपेक्षित, पीड़ित व वंचित वर्ग के पढ़े लिखे लोगों ने सामाजिक गुलामी से मुक्ति के लिए दबाव बनाया। ब्रिटिश सरकार ने भी अपनी सकारात्मक सोच का परिचय देकर दक्षिण भारत में पेरियार इ.वी. रामास्वामी के ब्राह्माणवाद के विरूद्ध खड़े किये सशक्त आंदोलन से प्रभावित होकर मद्रास में सन् 1929 में पिछड़ो व दलितों को सरकारी

नौकरियों में इनकी जनसंख्या के अनुपात में आरक्षण बाबत् 27.12.1929 का राज्यादेश जारी किया। इससे भी पूर्व महात्मा ज्योतिबा राव फूले ने सन् 1869 में देश की मूल जातियों के लिए आरक्षण की मांग की। राजर्षि साहू महाराज ने 26 जुलाई, 1902 में जाति के आधार पर आरक्षण लागू किया और पिछड़े व वंचित वर्ग को सत्ता में भागीदारी प्रदान की। पश्चिमी बंगाल सरकार ने 1906 में तथा मेंसूर राज्य में 1921, में जाति आधारित आरक्षण लागू किया, इससे हिन्दू वर्ण व्यवस्था पर आधारित सामाजिक भेदभाव व असमानता को गहरी चोट पहुंची। विशेषकर दक्षिण में ब्राह्मणों के सभी स्तरों पर वर्चस्व को ठेस पहुँची।

आखिर 15 अगस्त, 1947 को भारत आजाद हुआ। शासन के सुचारू संचालन के लिए संविधान सभा का गठन हुआ। जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है, भारतीय संविधान निर्मात्री सभा में केवल स्वतंत्रता आन्दोलन में भाग लेने वाले अग्रणी नेता ही नहीं थे वरन् शिक्षाविद, अधिवक्ता एवं समाज व देश के प्रतिष्ठित नागरिक भी थे, कुछ अपवाद को छोड़कर सभी उच्च वर्ग से थे लेकिन विदेशों में शिक्षा ग्रहण करने के कारण उनमें समानता व स्वतंत्रता के प्रति प्रतिबद्धता थी, इसलिए उन्होंने हिन्दू समाज में धार्मिक आधार पर बहुसंख्यक शूद्रवर्ण पर थोपी गई निर्योग्यताओं को समाप्त कर उन्हें भी आजाद भारत में सम्मानीय नागरिक के रूप में जीने का मार्ग प्रशस्त किया है। हिन्दू समाज व्यवस्था के ऐसे वंचित वर्ग की भारतीय संविधान में 1. अनुसूचित जाति 2. अनुसूचित जनजाति एवं 3. अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में पहचान की गई है जो सभी यहां के मूल निवासी है, इनके इस प्रकार किए गये वर्गीकरण के कारणों का संक्षिप्त इतिहास जानना विषय की प्रासंगिकता के लिए समीचीन प्रतीत होता है।

1. **अनुसूचित जाति :** अनुसूचित जाति में वे जातियां शामिल की गई हैं, जो अछूत की श्रेणी में आती हैं जिनके साथ खानपान, रहन–सहन विनिषिद्ध है इनमें कुछ जातियां जैसे दक्षिण में परावा जाति है, जिसे देखने मात्र से ही व्यक्ति अपवित्र हो जाता है उन्हें केवल रात्रि में विचरण की आजादी थी। बाल्मिकी, मेहत्तर भंगी आदि जातियों से स्पर्श व्यक्ति को अपवित्र बना देता है और स्नान करने पर उक्त अपवित्रता समाप्त होती है। बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर ने ऐसी जातियों के लोगों को पंचम वर्ण की संज्ञा दी है, जो हिन्दू वर्ण व्यवस्था के चतुरवर्ण (ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य व शूद्र) से अलग हैं पंचम वर्ण का प्रादुर्भाव पुश्यमित्र सुंग द्वारा इस्वी सन् से लगभग 160 वर्ष पूर्व हियद्रत बौद्ध राजा का वध करने के उपरान्त वर्णव्यवस्था को कठोरता से लागू कर बोद्धों के कत्लेआम एवं बौद्ध संस्कृति के विनाश का परिणाम माना जा सकता है जिन शूद्रवर्ण से धर्म परिवर्तित कर बने बौद्धों ने जान बचाकर जंगलों में पलायन के उपरान्त वापिस बस्तियों में लौटने पर ब्राह्मणी समाज व्यवस्था को स्वीकार नहीं किया उन्हें गांव व कस्बों की बस्तियों के पास अलग बसा कर आजीविका के साधनों से वंचित किया। ब्राह्माणों ने शेष तीन वर्णों में सुमार क्षत्रियों, वैश्यों एवं शूद्र वर्ण की अन्य जातियों के लोगों को हिदायत दी कि इन्हें हिकारत व नफरत की निगाह से देखा जाये तथा कोई भी सम्मानजनक व्यवसाय अपनाने पर दंडित किया जाये। अच्छे रहन सहन व खानपान से वंचित रखा जाये, ब्राह्मणों ने इनसे छूआछूत

बरते जाने का भी आदेश दिया इनको हेय व्यवसाय जैसे मरे मवेशिों को उठाना, बस्तियों की गंदगी साफ कर मलमूत्र ढोना आदि में लगाया जिन्हें मजबूर होकर अन्य विकल्प के अभाव में मरे मवेशियों व गाय आदि का मांस खाकर व झूंठन से गुजारा करना पड़ा। उन्हें हर प्रकार से दीनहीन व बेबस बनाया। ऐसी अस्पृश्य जातियों को अनुसूचित जाति में सुमार किया। सन् 1931 की जनगणना के अनुसार इनकी जनसंख्या देश में पांच करोड़ थी।

अनुसूचित जनजाति :–

अनुसूचित जनजाति में उस जाति समूह को रखा जो आर्यों के आगमन के पश्चात् आर्यों से हुए युद्ध में पराजित होने के उपरान्त जंगलों में पलायन कर गये। वे कभी भी आर्य संस्कृति व वर्ण आधारित जाति व्यवस्था का हिस्सा नहीं बने और नहीं उन्होंने आर्य संस्कृति को ही अपनाया। उनकी अलग ही अपनी जीवन शैली रही जंगल व पहाड़ों में कठिन जीवन के आदि इन जनजातियों के लोगों को शिक्षा व विकास की प्रक्रिया से भी अलग–थलग ही रखा। जंगली जानवरों का मांस व जंगली पौधों के फल–फूल ही इनकी आजीविका के साधन रहे। पहनावे के नाम पर गुप्तांग ढकने तक की व्यवस्था ही अधिकतर के पास थी। अण्डमान निकोबार में तो शरीर ढकने लायक व्यवस्था भी इनके पास नहीं है। दरिद्रता के कारण न्यूनतम आवश्यकताओं में जीने की मजबूरी ने इन्हें अर्द्धमानव बना दिया। एक हजार से अधिक वर्ष तक की विदेशी गुलामी का भी इन्हें अहसास नहीं हुआ लेकिन अंग्रेजों ने आवागमन के लिए रेल व सड़क मार्गों तथा विकास के लिए नदियों पर बांध बनाने के लिए इनकी बस्तियों में जाने का प्रयास किया तो अंग्रेजों को भी इनके प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। अंग्रेजों ने भी इनके विकास की योजनाएं नहीं बनाई। इस कारण इनकी आर्थिक बदहाली में कोई खास परिवर्तन नहीं आया संविधान निर्माताओं ने इन्हें अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में रखा। सन् 1931 की जनगणना के अनुसार इनकी जनसंख्या दो करोड़ पचास लाख थी।

अन्य पिछड़ा वर्ग :–

अन्य पिछड़ा वर्ग में शूद्र वर्ण की उन जातियों को रखा जिन्होंने आर्यों का कोई प्रतिरोध नहीं किया था। इस वर्ग ने बौद्धों के कत्लेआम के समय भी तटस्थता अपनाई और किसी प्रकार का विरोध जाहिर नहीं किया था। इस समूह को आर्यों ने अपनी आवश्यकतानुसार कृषि, पशुपालन, दस्तकारी व चाकरी में लगाया लेकिन इन्हें भी शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा। इस वर्ग की जातियाँ आर्थिक व सामाजिक दृष्टि से सम्पन्न व विकसित नहीं बनें इस पर ब्राह्मणों ने विशेष ध्यान दिया। जाति व्यवस्था को मजबूत बनाकर इन्हें कई जातियों व उपजातियों में विभाजित कर इनके एकीकरण को रोका। श्रम आधारित व्यवसाय के कारण आजीविका के संकट का भी इनको सामना नहीं करना पड़ा। ब्राह्मणों की इच्छानुसार शूद्र के रूप में आर्य संस्कृति का हिस्सा बन जाने से इन्हें अधिक अपमानित व प्रताड़ित भी नहीं होना पड़ा लेकिन पढ़ना लिखना, अपनी मर्जी का व्यवसाय करना व शस्त्र धारण करना ब्रिटिश काल तक इनके लिए वर्जित था। इन

प्रतिबंधों का इन्होंने कभी विरोध किया हो ऐसा धर्मशास्त्रों में उल्लेख नहीं मिलता है। त्रेतायुग में राम द्वारा शूद्र के लिए निर्धारित व्यवसाय से हटकर तपस्या जैसे ब्राह्मण का काम करने वाले शूद्र वर्ण के शम्भूक ऋषि के वध व द्वापर युग में क्षत्रियों के लिए अधिकृत शस्त्र विद्या में पारंगत हो जाने वाले एकलव्य के अंगूठा को काट देने की विभत्स घटनाओं ने न तो उन युगों में इन्हें उद्वेलित किया था और नहीं वर्तमान में ही यह वर्ग उक्त कृत्यों की खुली भर्त्सना ही कर पा रहा है। यह कई जातियों में विभाजित बहुसंख्यक वर्ग तुलसीदास की इस उक्ति में अटल विश्वास रखता आया है कि **"कोऊ नृप होऊ हमें का हानि चेरि छोड़ी नहीं होवहूँ रानी"** शासक बनने व सत्ता में भागीदार बनने की मानसिकता का विकास इस वर्ग में नहीं हो पाया है यह ब्राह्मणवाद का पोषक और वाहक है, इसका पूर्ण हिन्दूकरण कर दिया गया है। यह आजादी के पूर्व तक सुप्त समाज था। ब्राह्मण ही इनका मार्गदाता रहा और आंशिक तौर पर अब भी है। ब्राह्मण ही इनकी सन्तान का नाम तय करता है शादी की तिथि व समय तय करता है मृत्यु पर ब्राह्मण ही आत्मा की शांति के लिए अनुष्ठान करता है। आवास व व्यवसाय की शुरूआत व जुगाड़ ब्राह्मण की सलाह से करने का यह वर्ग आदि है। ब्राह्मणों ने इस वर्ग के लोगों में निर्णय लेने की क्षमता का विकास ही नहीं होने दिया। ब्राह्मणों ने इस वर्ग को पूर्व में अस्पृश्यों (दलितों) के एवं अब मुसलमानों के विरूद्ध भी लाभबद्ध कर रखा है। दलित उत्पीड़न इन्हीं वर्गों द्वारा होता है जो ब्राह्मणों की साजिश का नतीजा है। देश में इस वर्ग की 52 प्रतिशत से भी अधिक की आबादी होने के बावजूद भी संविधान सभा के लिए कांग्रेस ने इनमें से किसी को भी टिकिट नहीं दिया इसलिए संविधान सभा में बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर को इनके शैक्षिक व सामाजिक पिछड़ेपन का पता लगाने व विकास के लिए भारतीय संविधान के अनुच्छेद 340 के जरिए प्रावधान हेतु जूझना पड़ा। मण्डल कमिश्न की सिफारिश के बाद अब चेतना का उदय थोड़ा हुआ है, लेकिन गति अधिक धीमी है और दलितों व आदिवासियों से इस वर्ग का पूरा जुड़ाव नहीं हो पाया है, इन्हें शूद्र होने का इस कारण भी एहसास नहीं है क्योंकि धर्मशास्त्रों में इनको जिस हिकारत व नफरत भरी निर्योग्यताओं से नवाजा गया है इसकी इन वर्गों के लोगों को जानकारी ही नहीं है। दलित उत्पीड़न की पुलिस या प्रशासन को प्रस्तुत शिकायत में जब इस वर्ग के लोगों को सवर्ण नाम से सम्बोधित किया जाता है तो इस पर ही ये गौरव महसूस करते हैं जबकि सवर्ण से तात्पर्य चतुर वर्णीय वर्ण व्यवस्था से है जिसमें इस वर्ग के लोग शूद्रों में सुमार किए गये हैं। इस वर्ग के लोग केवल अछूतों व दलितों का ही शूद्र मान बैठे हैं इस भ्रम को दूर नहीं किया गया है जिसे धर्मशास्त्रों के ज्ञान व माध्यम से ही दूर किया जा सकता है।

<u>जरायम पेशा जातियां</u> :–

बौद्ध संस्कृति व सभ्यता को तहस–नहश करते–करते चौथी शताब्दी के उत्तरार्द्ध में मनुस्मृति की रचना कर वर्ण व्यवस्था को कठोरता से लागू किया गया, जिन बौद्धों ने हिन्दू धर्म की वर्ण आधारित समाज व्यवस्था को नहीं अपनाया और विरोध जारी रखा ऐसे पलायन कर गये व छितराय लोगों के लिए यह व्यवस्था की गई कि वे स्थायी बस्ती बनाकर नहीं बसेंगे ओर

नहीं सम्मान जनक व्यवसाय अपनाएंगे, ऐसे समूहों के समक्ष आजीविका का संकट उत्पन्न होने पर उन्होंने कालान्तर में मजबूरन आजीविका के लिए आपराधिक पेशा अपनाया। ठगी, डाकाजनी, लूट खसोट, चोरी चकारी व अन्य असामाजिक गतिविधियों में लिप्त रहकर भरण पोषण की व्यवस्था की। ऐसे समूह की जातियों की जनसंख्या 1931 की जनगणना के अनुसार 4 करोड़ 15 लाख मानी गई थी। कालान्तर में इस समूह की कुछ जातियों ने गांवों व कस्बों की आबादी के नजदीक बसना शुरू कर दिया। कुछ ने कृषि व्यवसाय भी अपनाया लेकिन चोरी चकारी का व्यवसाय भी जारी रखा। इन जरायम पेशा जातियों के लिए अंग्रेजों ने क्रिमिनल ट्राईव्स एक्ट बनाकर इनकी दैनिक दिनचर्या पर गिनरानी का काम किया जैसे रोज एक बार पुलिस स्टेशन पर उपस्थिति दर्ज करना। अपनी गतिविधियों की जानकारी पुलिस को देना लेकिन इनके लिए सम्मानजनक व्यवसाय की व्यवस्था नहीं की गई। इन जातियों के लोगों को भयंकर शारीरिक व मानसिक यातनाओं का शिकार होना पड़ता था। इनमें में से कुछ जातियों को अत्यधिक घृणित देह व्यवसाय को भी मजबूरी में अपनाना पड़ा। जो स्थायी नहीं बस सके जैसे कालबेलिया, मोगिया व अन्य विभिन्न सैकड़ों घुमक्कड़ जातियों के लोग आज भी तम्बूओं में निवास कर आजीविका के लिए मारे–मारे फिर रहे हैं, इन्हें एक स्थान पर टिक कर गांवो एवं कस्बों के लोग रहने भी नहीं देते हैं। स्थानीय पुलिस भी इन्हें परेशान करती है ये बदनसीब बहादुर लोग अब अपना पुराना गौरवशाली इतिहास व सांस्कृतिक पहचान भी खो चुके हैं। जादू–टोनों व भूत प्रेतों में विश्वास रखने वाले ये बेबस लोग लोकतंत्र की बयार से कोसों दूर हैं इन्हें इनकी सामाजिक परिस्थिति व आर्थिक मजबूरी का बिना पता लगाये इन्हें सरकारों ने अनुसूचित जाति, जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग में डाल दिया। लेकिन इन्हें वास्तव में लाभ कहीं पर भी नहीं मिल पाया है। इनमें से अधिकतर आज भी जलालत भरी जिन्दगी जी रहे हैं।

संवैधानिक आरक्षण :–

भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति व अनुसूचित जनजाति की सत्ता में भागीदारी हेतु आरक्षण की दो प्रकार से व्यवस्था की गई है : – 1. सरकारी सेवा के पदों में आरक्षण 2. राजनैतिक आरक्षण ।

****

4.

सरकारी सेवा व पदों में आरक्षण

संविधान सभा में सरकारी सेवा व पदों के आरक्षण का मुद्दा : संविधान सभा ने सरकारी सेवा के पदों में पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण के प्रारूप को पारित कर दिया। इस प्रकार सरकारी सेवाओं में पिछड़े वर्ग को आरक्षण का प्रावधान मौलिक अधिकारों का हिस्सा बन गया जो अनुच्छेद 16 के रूप में निम्न प्रकार है :

16. **लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता –** (1) राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी।

(2) राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्‌भव, जन्म–स्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जाएगा।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात संसद् को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार के या उसमें के किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन वाले किसी वर्ग या वर्गों के पद पर नियोजन या नियुक्ति के संबंध में ऐसे नियोजन या नियुक्ति से पहले उस राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के भीतर निवास विषयक कोई अपेक्षा विहित करती है।)

(4) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को पिछड़े हुए नागरिकों के किसी वर्ग के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी।

अनुच्छेद 16 में सभी को सरकारी नौकरियों में बिना किसी लिंग, धर्म, मूलवंश, जाति उद्‌भव, जन्मस्थान या निवास के समान अवसर प्रदान किया गया है जो भी भारत का नागरिक है, बिना किसी भेदभाव के राज्य की सेवा में पात्रता रखता है, संसद अथवा राज्यों की विधायिकाओं को इस बाबत् नीतिगत निर्णय लेने तथा कानून व नियम बनाने के लिए अधिकृत किया गया है, विभिन्न प्रकार की सेवाओं के लिए उन सेवाओं की प्रकृति के अनुसार शैक्षिक योग्यता भी तय की गई है। इस प्रकार सरकारी सेवा में प्रवेश हेतु पद के लिए विहित शैक्षिक योग्यता का होना

अनिवार्य है एवं सेवा में प्रवेश एवं सेवानिवृति की भी अवधि तय की गई है जिसे बढ़ाने अथवा कम करने का अधिकार राज्य में निहित है।

सरकारी सेवा का आरक्षण किसी निश्चित अवधि के लिए नहीं है। यह स्थायी व्यवस्था है यह राज्य के विवेक पर छोड़ा गया है कि आरक्षण समाज के पिछड़े वर्ग को किस सीमा तक प्रदान किया जाना लाजमी है लेकिन सरकारी सेवा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व की बात कही गई है इससे संविधान निर्माताओं की मंशा का पता चलता है इसलिए केन्द्र एवं राज्यों की सरकारों ने अनुसूचित जाति व जनजाति को सरकारी सेवा में आरक्षण सामान्यतया इनकी जनसंख्या के अनुपात में ही देना तय किया है।

जैसा ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि सरकारी सेवा के लिए व्यक्ति का शिक्षित होना अनिवार्य है धर्म आधारित प्रतिबंधों एवं निर्योग्यताओं के कारण हिन्दू वर्ण व्यवस्था में चतुर्थ वर्ण अर्थात् शूद्र वर्ण का विशाल तबका सदियों से शिक्षा के अधिकार से वंचित रहा। अंग्रेजों को शासन व्यवस्था के सुचारू रूप से संचालन के लिए शिक्षित व्यक्तियों की आवश्यकता होने से देश में विधालय एवं महाविधालय स्थापित किए और सभी के लिए शिक्षा के द्वार खोले, लेकिन उक्त शिक्षण संस्थान शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित रहे इसलिए पिछड़ा वर्ग के लोग जो अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में ही निवास करते थे शिक्षा से वंचित ही रहे। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त केन्द्र एवं राज्य सरकारों ने शिक्षा के व्यापक प्रचार–प्रसार पर ध्यान देने से ग्रामीण क्षेत्रों में भी शिक्षण संस्थाओं की स्थापना हुई और इस प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त पिछड़े वर्गों को शिक्षा प्राप्ति का विधिवत अधिकार मिला। इस कारण सन् 1970 तक केन्द्र व राज्यों की अच्छी सेवाओं में आरक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व नगण्य ही रहा। सन् 70 तक उच्च वर्ग का विशेषकर ब्राह्मणों का सरकारी सेवाओं के सभी स्तरों पर एकाधिकार हो गया था। सन् 50 से 70 तक के दशक में नौकरियों में व्यापक पैमाने पर भर्तियां हुई, प्रचार माध्यमों के अभाव के कारण प्रत्येक विभाग का विभागाध्यक्ष नोटिस बोर्ड पर विज्ञापन चस्पा करवा देते थे, जिसकी अनु.जाति/जनजाति एवं पिछड़े वर्गों के पढ़े–लिखे लोगों को जानकारी भी नहीं हो पाती थी, जिसका भरपूर फायदा उच्चवर्ग विशेषकर ब्राह्मणों ने उठाया और आरक्षित पदों को भी सामान्य वर्ग से भरा जाता रहा। चुपचाप भी भर्तियां काफी हुई, ब्राह्मणों ने अपने वर्ग के हित में पक्षपात भी किया। केवल भर्ती के बाद यह नोट लगा दिया जाता रहा कि अनुसूचित जाति/जनजाति का कोई व्यक्ति उपलब्ध नहीं हुआ जब सन् 1970 के बाद अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के पात्र व योग्य व्यक्ति नौकरी के लिए फॉर्म भरने लगे तो उनको अपात्र (not found suitable) का बहाना बनाकर नौकरी से वंचित किए जाने का षडयंत्र रचा जाने लगा हमारे जनप्रतिनिधियों ने इन कुटिल चालों के विरूद्ध कोई आवाज नहीं उठाई। यह सिलसिला सन् 80 तक चला, मण्डल कमिश्न ने जो रिपोर्ट सिफारिश सहित पेश की है इसमें अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अन्य पिछड़े वर्ग के सरकारी सेवाओं के समय इनके साथ बरते गये भेदभाव व अन्याय का आंकलन किया जा सकता है।

सारणी संख्या 1

कर्मचारियों की श्रेणियां	कर्मचारियों की कुल संख्या	अनुसूचित जाति/ जनजाति का प्रतिशत	अन्य पिछड़े वर्ग का प्रतिशत
1	2	3	4
श्रेणी – 1	174043	5.68	4.69
श्रेणी – 2	912786	18.18	10.63
श्रेणी – 3 और 4	484646	24.40	24.40
सभी श्रेणियां	1571475	18.71	12.55

उपरोक्त सारणी से दो बातें स्पष्ट हो जाती हैं। पहली, अनुसूचित जाति/जनजाति के कर्मचारियों का प्रतिशत, और अन्य पिछड़ी जातियों के कर्मचारियों का प्रतिशत, देश में उनकी कुल जनसंख्या के प्रतिशत से बहुत कम है। अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का कुल रोजगार उनकी कुल 22.5% जनसंख्या के मुकाबले 18.71% बनता है, अन्य पिछड़ा वर्गों का कुल रोजगार प्रतिशत उनकी 52 प्रतिशत जनसंख्या की तुलना में 12.55% प्रतिशत बनता है। दूसरे, श्रेणी एक सेवाओं में अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़ा वर्ग के कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व बहुत कम है। उदाहरण के तौर पर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के कर्मचारियों के आंकड़े 5.68% है और अन्य पिछड़ा वर्गों के लिए यह आंकड़े केवल 4.69% हैं। दूसरे शब्दों में, भारत सरकार की श्रेणी–1 सेवाओं में अन्य पिछड़ा वर्ग के कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व उनकी कुल जनसंख्या का 1/10 वां भाग भी नहीं है।

सरकार में श्रेणी एक का बहुत अधिक महत्व है क्योंकि विधायिका द्वारा बनाए गये कानूनों एवं सरकार की लोक कल्याणकारी योजनाओं के लागू करने की जिम्मेदारी इन्हीं अधिकारियों की होती है, ये ही अन्य सेवाओं में भर्ती की प्रक्रिया में प्रभावी भूमिका निभाते हैं, श्रेणी एक की सेवाओं में उच्च वर्ग विशेषकर ब्राह्मणों का ही वर्चस्व होने के कारण सरकार की लोक कल्याणकारी योजनाओं का गरीबों, वंचितों एवं दलितों को लाभ नहीं मिल पाया। साथ ही अन्य सेवाओं में भी पिछड़े वर्गों को उपयुक्त नहीं होने (not found suitable) अथवा उपलब्ध नहीं (not available) होने का बहाना बनाकर आरक्षण नीति को ही फैल कर दिया।

कांसीराम जी ने सीमित राजनैतिक कार्यवाही के उद्देश्य से सन् 81–82 के आसपास ही डी.एस.4 का गठन किया था, उस वक्त देश में ब्राह्मणों की राजनैतिक एवं नौकरशाही पर मजबूत पकड़ के जो आंकड़े एकत्रित किए थे, जिसका उल्लेख उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक चमचा युग में किया है, की निम्न सारणी से चौंकाने वाले तथ्य उजागर होते हैं।

सारणी संख्या 2

भारत में सन् 1982 में ब्राह्मणों की राजनैतिक एवं नौकरशाही पर पकड़ को दर्शानेवाली सारणी :–

पद		कुल संख्या	केवल ब्राह्मणों की संख्या	केवल ब्राह्मणों का प्रतिशत
1.	केन्द्रीय केबिनेट मंत्री	19	10	53%
2.	मंत्रियों के निजी सचिव (केबिनेट, स्टेट एवं उपमंत्री)	49	34	70%
3.	केन्द्र में सचिव, अति.सचिव संयुक्त, सचिव या समकक्ष	500	310	62%
4.	राज्य सरकारों के मुख्य सचिव	26	14	54%
5.	राज्यपाल/लेफ्टि. गवर्नर	27	13	50%
6.	राज्यपालों/लेफ्टि. गर्वनर के सचिव	24	13	54%
7.	सर्वोच्च न्यायालय के जज	16	9	56%
8.	उच्च न्यायालय के जज एवं अतिरिक्त न्यायाधीश	330	166	50%
9.	राजदूत/उच्चायुक्त	140	58	41%
10.	डपकुलपति	98	50	51%
11.	'स्कोप' के अधीन आने वाले सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के मुख्य कार्यकारी (अ) केन्द्र (ब) राज्य	158 17	91 14	57% 82%
12.	आई.ए.एस.अधिकारी (ऊपर से नीचे तक)	3300	2000	61%

सारणी संख्या 3

संसद में ब्राह्मणों का प्रतिशत

लोकसभा	1952	1947	1962	1967	1971	1977	1980		
कुल सदस्यों में ब्राह्मणों का प्रतिशत	173/409	230/490	210/410	192/523	136/542	136/542	190/530		
(अ) कुल जनसंख्या का	35%	47%	41%	37%	34%	25%	36%		
राज्यसभा	1952	1957	1960	1964	1968	1970	1974	1978	1980
ब्राह्मणों का प्रतिशत	70/216	108/232	115/236	102/238	104/230	113/238	112/240	84/244	89/244
	27%	47%	49%	43%	45%	50%	47%	34%	34%

लोकसभा एवं राज्यसभा में ब्राह्मणों का सन् 1952 से 1980 तक रहे प्रभावी प्रतिनिधित्व का कारण राजनैतिक दलों पर ब्राह्मणों का एकाधिकार होने तथा मनोनयन पद्धति का जनप्रतिनिधित्व के लिए टिकिट वितरण में महत्वपूर्ण योगदान रहा है। ब्राह्मणों की देश में जनसंख्या लगभग 3.5 प्रतिशत है।

सन् 2007 में बामसेफ ने केन्द्र के विभिन्न मंत्रालयों, राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्रीमण्डल सचिवालयों एवं विभिन्न विभागों, स्वायत्त निकायों, सम्बन्ध एवं अधिनस्थ कार्यालयों में पदस्थापित कुल अधिकारियों/कर्मचारियों की संख्या तथा अनु0जाति, जनजाति एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के अधिकारियों व कर्मचारियों की संख्या व उनके संबंध सेवाओं में प्रतिशत के आंकड़े इकट्ठे किए हैं जिनका विवरण निम्न प्रकार हैः–

सारणी संख्या 4

केन्द्रीय सरकारी सेवाओं में अन्य पिछड़े वर्ग/अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का प्रतिनिधित्व

		कुल	श्रेणी–1 अनु. जाति/अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग	कुल	श्रेणी–2 अनु. जाति/अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग	कुल	श्रेणी–3 अनु. जाति/अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग
1.	मंत्रालय/विभाग	17707	840 (7.18)	303 (2.59)	43803	5985 (13.66)	1742 (3.98)	17829	5518 (30.45)	1500 (8.41)
2.	स्वागत निकाय संबद्ध और अधीनस्थ कार्यालय	81325	5399 (6.64)	4147 (5.09)	503337	91431 (18.16)	59079 (11.74)	322948	67118 (20.78)	67786 (20.98)
3.	सार्वजनिक उपक्रम	80994	3652 (4.51)	3719 (4.59)	365785	68566 (18.74)	36242 (9.91)	143910	45646 (31.72)	22.689 (15.77)
4.	जोड़	174026	9891 (5.68)	8169 (4.69)	912925	165982 (18.18)	97063 (10.63)	484687	118282 (24.40)	91975 (18.98)

नोट : कोष्ठकों के आंकड़े प्रतिशतता को दर्शाते हैं।

सारणी संख्या 5

केन्द्रीय सरकारी सेवाओं में अन्य पिछड़े वर्ग/अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का प्रतिनिधित्व मंत्रालय और विभाग

	मंत्रालय/विभाग	कुल	श्रेणी–1 अनु.जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग	कुल	श्रेणी–2 अनु. जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग	कुल	श्रेणी–3 अनु.जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग
		1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	राष्ट्रपति सचिवालय	49	4	-	162	24	-	96	19	-
2	उप राष्ट्रपति सचिवालय	7	-	-	16	1	1	11	4	-
3	प्रधानमंत्री	35	2	-	117	13	4	61	19	-
4	मंत्रिमण्डल सचिवालय	20	1	1	115	19	13	61	18	8
5	कृषि एवं सिंचाई	261	15	13	220	1	-	73	19	3
6	परमाणु ऊर्जा	34	-	-	82	1	-	214	42	4
7	वाणिज्य,नागरिक आपूर्ति तथा सहकारिता	61	11	-	211	32	-	63	20	3
8	संचार	52	5	-	130	6	-	43	7	1
9	रक्षा	1379	48	9	7752	803	187	2127	604	131
10	शिक्षा एवं समाज कल्याण	259	17	4	851	6	23	278	76	12
11	इलेक्ट्रॉनिक्स	92	1	2	198	46	5	55	29	2
12	ऊर्जा	641	39	20	2332	253	132	1449	335	276
13	विदेश मंत्रालय	649	60	1	1839	162	5	460	73	10
14	वित्त	1008	66	1	2724	306	11	821	202	13
15	स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण	240	19	-	1506	163	-	288	72	-
16	गृह मंत्रालय	141	19	13	1301	140	27	1164	272	33
17	उद्योग	169	16	3	510	42	8	252	103	11
18	सूचना तथा प्रसारण	2506	212	124	9416	1795	740	4583	1653	483
19	विधि, न्याय और कंपनी कार्य मामले									
	1. विधि कार्य	143	18	5	725	112	25	319	96	30
	2. विधायी कार्य	112	14	2	263	41	7	104	27	15
	3. कंपनी कार्य	247	23	6	1114	151	53	320	80	23
20.	श्रम	74	4	-	274	20	1	101	18	1
21.	संसदीय कार्य	18	1	-	68	11	1	26	8	1
22.	पेट्रोलियम और रसायन	121	9	-	97	9	-	36	16	-
23.	योजना	1262	137	72	4657	614	234	998	226	52
24	विज्ञान और प्रोद्योगिकी	101	5	1	175	21	9	55	28	7
25	जहाजरानी और परिवहन	103	6	1	426	66	3	143	43	1
26	आंतरिन्न	19	-	-	49	3	7	20	10	3
27	इस्पात और खान	128	11	3	370	31	-	131	49	4
28	पूर्ति ओर पुर्नवास	183	6	1	426	66	3	143	43	1
29	पर्यटन और सिविल विमानन	1187	61	20	4820	845	231	3178	1275	290
30	निर्माण और आवास	218	10	-	807	78	9	156	32	80
	योग	11519	840	302	43753	5881	1739	17829	5518	1498

सारणी संख्या 6

स्वायत्त निकाय, सम्बद्ध और अधीनस्थ कार्यालयों में पिछड़े वर्ग/अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का प्रतिनिधित्व

	मंत्रालय/विभाग	कुल	श्रेणी–1 अनु. जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग	कुल	श्रेणी–2 अनु. जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग	कुल	श्रेणी–3 और 4 अनु. जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग
		1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	महालेखापाल केन्द्रीय राजस्व	12457	-1330	-844	37967	9030	3288	7534	2236	831
2	कृषि और सिंचाई	4274	-353	173	8786	-1604	-773	7816	2399	1423
3	परमाणु ऊर्जा	658	4	11	228	2	11	1581	353	88
4	केन्द्रीय सतर्कता आयोग	75	8	13	40	6	16	34	17	15
5	वाणिज्य,नागरिक आपूर्ति एवं सहकारिता	702	80	6	3215	495	75	1697	339	38
6	संचार	470	39	6	2293	517	166	616	238	134
7	शिक्षा और समाज कल्याण	6722	283	218	16594	1399	1371	14676	4107	1838
8	इलैक्ट्रनिकी	101	1	2	137	25	4	15	6	-
9	भारत का निर्वाचन आयोग	26	-	1	134	21	1	54	21	-
10	ऊर्जा	589	24	10	708	73	20	173	33	12
11	विदेश मंत्रालय	90	3	4	799	143	37	187	73	37
12	वित्त	9155	754	371	55546	9309	3722	22858	5243	3805
13	स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण	3550	179	47	13820	1175	498	16693	3720	720
14	गृह मंत्रालय	5187	334	113	189250	-34407	20593	19538	7723	2650
15	उद्योग	7621	197	641	49332	16103	14718	120982	15862	36188
16	सूचना और प्रसारण	1745	212	124	6694	1358	746	3481	1346	491
17	श्रम	2373	214	118	9869	1363	1013	4553	1345	691
18	पेट्रोलियम और रसायन	802	23	7	1842	133	78	653	150	71
19	अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति आयोग	10	1	-	16	1	-	5	3	-
20	विज्ञान और प्रौद्योगिकी	7390	202	242	21805	-3117	1897	11445	3250	1928
21	जहाजरानी और परिवहन	4092	271	705	27295	2722	5918	56484	10126	12925
22	आंतरिक्ष	3193	14	184	5044	294	764	1336	363	183
23	इस्पात और खान	2495	121	73	9510	1299	434	5375	-783	455
24	पूर्ति एवं पुनर्वास	1238	99	42	9873	1371	544	4091	991	442
25	पर्यटन एवं सिविल विमान	1553	208	38	4136	705	442	1585	531	224
26	संघ लोक सेवा आयोग	163	-12	3	732	134	18	256	113	22
27	निर्माण और आवास	5490	423	143	27672	4625	1932	19230	5745	2575
	योग	**82221**	**1999**	**2451**	**50337**	**13175**	**57533**	**322948**	**65550**	**67786**

सारणी संख्या 7

सार्वजनिक उपक्रमों में अन्य पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का प्रतिनिधित्व

	मंत्रालय/विभाग	कुल	श्रेणी–1 अनु. जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग	कुल	श्रेणी–2 अनु. जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग	कुल	श्रेणी–3 और 4 अनु. जाति/ अनु. जनजाति	अन्य पिछड़े वर्ग
		1	2	3	4	5	6	7	8	9
1.	कृषि सिंचाई	1146	77	66	4258	521	428	3405	838	518
2	परमाणु ऊर्जा	58	2	-	107	-	1	2390	1059	171
3	वाणिज्य, नागरिक आपूर्ति तथा सहकारिता	1724	95	66	4375	536	558	1130	234	180
4	संचार	4474	260	373	12143	2223	2333	4806	179	419
5	शिक्षा और समाज कल्याण	707	12	125	1297	110	325	603	192	218
6	ऊर्जा	5070	178	41	13086	672	920	9258	1934	767
7	स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण	35	2	-	480	72	-	222	61	-
8	उद्योग	2041	161	88	6054	781	551	2709	781	371
9	पेट्रोलियम और रसायन	16217	785	323	41464	4307	3204	16326	4082	1856
10	विज्ञान और प्रौद्योगिकी	148	3	2	509	82	30	93	30	10
11	जहाजरानी और परिवहन	3044	142	116	11536	1365	1150	47516	6310	9228
12	इस्पात और खान	37877	1297	2451	250164	54843	26390	43403	2401	8714
13	पर्यटन एवं सिविल विमान	7923	605	59	18995	2801	341	11305	4084	237
14	निर्माण और आवास	530	33	9	1317	248	19	744	233	-
	योग	**80994**	**3652**	**3719**	**365785**	**68566**	**36250**	**143910**	**22418**	**22689**

उपरोक्त आंकड़े प्रदर्शित करते हैं कि श्रेणी–एक एवं श्रेणी–दो में अनुसूचित जाति/ जनजाति तथा अन्य पिछड़ा वर्ग का प्रतिनिधित्व इनकी जनसंख्या के अनुपात में काफी कम है, जबकि इन वर्गों की जनसंख्या देश में अल्पसंख्यकों को मिलाकर लगभग 85 प्रतिशत के आसपास बैठती है। 85 प्रतिशत जनसंख्या का लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था में कानून बनाने व उन कानूनों का क्रियान्वयन करने तथा केन्द्र व राज्यों द्वारा आमजन (अनुसूचित जाति/ जनजाति, पिछड़ा वर्ग व अल्पसंख्यकों) के लाभ व विकास के लिए बनाई गई योजनाओं को लागू करने का अधिकार होना चाहिए ऐसा नहीं हो पाया है।

अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए आरक्षित पदों के बैकलॉक को पूरा करने बाबत् बार–बार केन्द्र सरकार के कार्मिक विभाग द्वारा कई बार परिपत्र भी जारी किए गये, यहां तक कि आर.के. सब्बरवाल एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य 1995 (1) एस.एल.आर. पृष्ठ 477 में उच्चतम न्यायालय की 5 जजों की संवैधानिक पीठ ने सरकारी सेवाओं का आरक्षण पद आधारित करते हुए यह तय किया है कि आरक्षित पद को किसी भी परिस्थिति में सामान्य वर्ग से नहीं भरा जा सकेगा। हालांकि उक्त संवैधानिक पीठ ने यह भी तय कर दिया था कि आरक्षण रिक्ति आधारित

नहीं होकर पद आधारित होगा तथा बैकलॉक के पद विज्ञापित रिक्त पदों के 50 प्रतिशत से अधिक नहीं भरे जा सकेंगे, उक्त अड़चन को भारतीय संसद ने 82वें संवैधानिक के जरिए समाप्त भी कर दिया है लेकिन फिर भी केन्द्र एवं राज्यों में अनुसूचित जाति/जनजाति का आरक्षित कोटा नहीं भरा गया है। बार–बार विशेष भर्ती अभियान चला कर अनुसूचित जाति–जनजाति का सरकारी नौकरियों में बैकलॉक पूरा करने की घोषणा केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है लेकिन प्रभावी अमल नहीं हो पाता है, इससे यह जाहिर होता है कि केन्द्र की सरकार वोट प्राप्त करने की नियत से ही ऐसी थोथी घोषणा करती है।

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति/जनजाति आयोग ने वर्ष 1996–97 एवं 1997–98 की वार्षिक रिपोर्टस के पृष्ठ संख्य 183–184 में केन्द्र सरकार की विभिन्न श्रेणी की सरकारी सेवाओं एवं राष्ट्रीय बैंको तथा सार्वजनिक उपक्रमों के वर्ष 1997 तक के बैकलॉक की स्थिति का जिक्र किया है जिसका विवरण निम्न सारणी से दर्शाया गया है, यह स्थिति तब है जब सर्वोच्च न्यायालय ने सब्बर लाल एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य के प्रकरण में यह तय कर दिया था कि अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए आरक्षित रिक्त पद किसी भी परिस्थिति में सामान्य वर्ग से नहीं भरे जा सकेंगे। कार्यपालिका शीर्ष न्यायालय के उन्हीं निर्णयों के अंशों को लागू करती है जो उच्च वर्ग के पक्ष में होते हैं।

केन्द्रीय सेवाओं बैकों एवं सार्वजनिक उपक्रमों में बैकलॉक की स्थिति :–

सर्विसेज	नंबर	प्रतिशत
1. Govt. of India Depts.		
श्रेणी ए	369	74.84
श्रेणी बी	438	51.34
श्रेणी सी	3133	55.87
श्रेणी डी	873	45.70
कुल योग	4813	54.30
2. बैंक	272	45.10
3. पब्लिक सेक्टर	2642	88.18

सन् 1980 तक शिक्षा के व्यापक प्रचार–प्रसार व शिक्षा के प्रति रूझान के कारण पिछड़े वर्गों (अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अन्य पिछड़े वर्गों) के काफी संख्या में इन नौकरियों के लिए निर्धारित पात्रताओं वाले पर्याप्त संख्या में पढ़े लिखे व शिक्षित युवकों की जमात खड़ी हो चुकी थी इन्हें सरकारी व अर्द्धसरकारी नौकरियों में आने से कैसे रोका जाय तथा उच्च वर्ग विशेषकर ब्राह्मणों का कार्यपालिका पर वर्चस्व कैसे बरकरार रखा जाये इसके लिए दूरगामी योजना निम्न तरीके अपनाकर उच्चवर्ग विशेषकर ब्राह्मणों ने तैयार कर अमली जामा पहनाया।

(1) **<u>नियुक्ति के अधिकार पर कब्जा</u>** : –

भारतीय संविधान के भाग 14 के अध्याय 1 एवं अध्याय 2 में केन्द्र के लिए संघ लोक सेवा आयोग एवं राज्यों के लिए राज्य लोक सेवा आयोगों को क्रमशः केन्द्र एवं राज्यों की सरकारी सेवाओं के लिए अधिकारियों एवं लोक सेवकों के चयन का अधिकार प्रदान किया गया है ऐसे चयनित अभ्यार्थियों की नियुक्ति राष्ट्रपति व राज्यों के मामलों में राज्यपाल द्वारा की जाती है आयोगों को आन्तरिक एवं बाह्य दबावों से मुक्त रखे जाने की माकूल व्यवस्था उनकी सेवा शर्तों को लेकर भी भारतीय संविधान में की गई है। बाबा साहब अम्बेडकर ने यह मांग की थी कि आयोगों में पिछड़े वर्गों को भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिले ताकि सरकारी सेवाओं में चयन के समय पिछड़े वर्गों के हितों की अनदेखी नहीं की जा सके। लेकिन संघ एवं राज्यों के लोक सेवा आयोगों पर सन् 2000 तक उच्च वर्ग का ही एकाधिकार रहा। आयोगों के कार्यों को सम्पादित करने वाले अधिकारी/कर्मचारी भी उच्च वर्ग के ही रहने से चयन प्रक्रिया में जमकर पक्षपात हुआ। गोपनीयता के नाम पर चयन की प्रक्रिया में अपनाये जाने वाले भेदभाव, पक्षपात का भी लोगों को पता नहीं चल पाया, राज्यों के लोक आयोगों में तो उच्च वर्ग को ही चयन में तरजीह प्रदान की गई, लिखित परीक्षा के बजाय मौखिक साक्षात्कार को चयन का आधार बनाया जाने लगा। इससे मेहनती व योग्य व्यक्ति विशेषकर पिछड़े वर्ग के अभ्यार्थी चयन से वंचित होते गये। राज्यों के लोक सेवा आयोगों में मौखिक साक्षात्कार में न्यूनतम अंक से कम प्राप्त करने पर अयोग्य करार दिए जाने की परिपाटी डाली गई, लिखित परीक्षा में अच्छे अंक लाने वाले भी मौखिक साक्षात्कार में न्यूनतम अंक से कम अंक दिए जाने के कारण चयनित नहीं हो सके। जनहित याचिका पेश होने पर सुप्रीम कोर्ट को यह आदेश देने पड़े कि मौखिक साक्षात्कार के कुल अंक लिखित परीक्षा के 13 प्रतिशत से अधिक नहीं होगे लेकिन यह निर्णय काफी देरी से आया। इस निर्णय में यह भी स्पष्ट किया गया है कि मौखिक साक्षात्कार की चयन प्रक्रिया में अहम भूमिका नहीं होनी चाहिए। उक्त निर्णय से चयन में मौखिक साक्षात्कार की भूमिका प्रभावकारी नहीं रहने से योग्य व पात्र व्यक्तियों के साथ बरते जाने वाले भेदभाव व पक्षपात से आशातीत राहत मिल पाई है।

संघ व राज्य लोक सेवा आयोगों की विभागीय कर्मचारियों के चयन में पूर्ण भूमिका नहीं है। शिक्षा, रेल्वे, सेना चिकित्सा, सचिवालयों, न्यायपालिका, सार्वजनिक निगमों, उपक्रमों, राष्ट्रीयकृत बैंकों, केन्द्र एवं राज्य सरकार के विभागों में तृतीय व चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों, स्टेनो, पी.ए. तथा तकनीशियनों के चयन का काम संबंधित विभागों द्वारा ही किया जाता है, विभागाध्यक्ष तथा कार्यालयध्यक्ष को नियुक्ति अधिकारियों की शक्तियां प्रदान की गई हैं लगभग 70 प्रतिशत अधिकारी कर्मचारी उपरोक्त संबंधित विभागों द्वारा ही भर्ती किए जाते हैं जहां न तो आरक्षण नीति की पालना की जाती है और नहीं चयन के नियम कायदे ही अपनाए जाते हैं। गुपचुप

भर्तियां हो जाती हैं, फर्जी प्रमाण–पत्र के जरिये भी नियुक्ति पाने में कुपात्र सफलता प्राप्त कर लेते हैं। इसी कारण अनुसूचित जाति/जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग का बैकलॉक बढ़ा है जो कभी नहीं भरा जा सकेगा।

2. **चयन प्रक्रिया में दक्षता व तकनीकता का प्रभाव** :– संघ एवं राज्य आयोगों में चयन की प्रक्रिया को ज्यों–ज्यों अभ्यार्थियों की संख्या बढ़ती गई, अधिक जटिल व तकनीकता की दृष्टि से कठिन बनाया गया, दक्षता को महत्व प्रदान किये जाने से कोचिंग की उपयोगिता बढ़ती गई, ग्रामीण अंचल के अभ्यार्थियों के लिए चयन कठिन होने लगा अनुसूचित जाति/ जनजाति व अन्य पिछड़ा वर्ग की 90 प्रतिशत आबादी गांवों में ही बसती है, आर्थिक अभाव के कारण कोचिंग लेना प्रत्येक के बस की बात नहीं रही। सम्पन्न व मध्यम आय वर्ग के लोग ही कोचिंग ले सकते थे व दक्षता प्राप्त कर सकते हैं इसलिए केन्द्र व राज्यों को प्रथम श्रेणी सेवाओं में उच्च वर्ग का आर्थिक मजबूती व कोचिंग के कारण दबदबा बना हुआ है। 52 प्रतिशत विशेष पिछड़ा वर्ग जागरूकता व दक्षता के अभाव में आज भी इन सेवाओं में नगण्य उपस्थिति ही दे पा रहा है। अनु0जाति व जनजाति के लोग आरक्षण के कारण 90 के दशक तक इन सेवाओं में कुछ उपस्थिति दे पाये इसलिए पद के लिए न्यूनतम योग्यता का कोई महत्व नहीं रहा। बाबा साहब का आग्रह था कि आरक्षित पदों पर चयन के लिए न्यूनतम योग्यता ही मापदण्ड होना चाहिए ताकि पिछड़े वर्गों को भी कार्यपालिका में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिल सके लेकिन उच्च वर्ग विशेषकर ब्राह्माणों ने पिछड़े वर्गों को सरकारी पदों से वंचित रखने क लिए यह कुटिल नीति अपनाई।

विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों एवं उच्च माध्यमिक शिक्षा के लिए भी पात्रता में पी.एच.डी. , नेट, बी.एड़, एम.एड़ व एस.टी.सी. जैसी दक्षता प्राप्त करना अनिवार्य कर दिया गया जिसके अभाव में पिछड़े वर्गों का शिक्षा क्षेत्र में प्रतिनिधित्व नगण्य ही है। पाठ्यक्रम क्या होगा? शिक्षा नीति कैसी होगी ? यह सब आज भी ब्राह्मण वर्ग ही तय करता है इसलिए सामाजिक सेाच में कोई परिवर्तन नहीं हो पाया है।

3. **सरकारी शिक्षा को अनुपयोगी व रोजगार हीन बनाने की साजिश** :–

देश में स्वतंत्रता के पूर्व हिन्दू वर्ण व्यवस्था में सबसे नीचे के पायदान पर स्थित दलितों, आदिवासियों व अति पिछड़े वर्ग के लोगों में शिक्षा का नितान्त अभाव था क्योंकि शिक्षा के द्वार उनके लिए बन्दप्रायः थे। अंग्रेजों ने निचले स्तर पर शासन व्यवस्था के संचालन के लिए छोटे कर्मचारियों की आवश्यकता पड़ने पर दलितों, आदिवासियों व पिछड़े वर्ग के लोगों के लिए भी शिक्षा के द्वार खोले। इस कारण इन वर्गों के कुछ लोगों के पढ़ लिख जाने से इन्होंने शिक्षा के महत्व को समझा और आजादी के बाद शिक्षा की तरफ इस विशाल समुदाय का रूझान बढ़ा। जनंतत्र में संख्या बल के आधार पर राजनैतिक हैसियत भी इन वर्गों की बनी। धीरे–धीरे शासक वर्ग के लोगों को अपने हाथ से सत्ता की चाबी खिसकती नजर आई। उन्हें यह भय सताने लगा कि सदियों से धर्म के नाम पर गुलाम बनाए गये लोगों को अब सत्ता से दूर रखे बिना शासक

बने रहना संभव नहीं है और यह तब ही होना संभव है जब पिछड़े, दलित व आदिवासियों को शिक्षा के लाभ से वंचित किया जये। 80 के दशक तक वंचित व उपेक्षित वर्ग के शिक्षार्थियों का प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा में बहुमत हो गया था।

सन् 1980 के बाद से शासक वर्ग ने सरकारी शिक्षा को अनुपयोगी बनाने का सिलसिला शुरू किया। सभी स्तर पर जितने भी उच्च वर्ग के शिक्षक थे उन्हें खासतौर पर यह संदेश दिया गया कि सरकारी शिक्षा को रोजगार के लिए अनुपयुक्त व अनावश्यक करार दिया जाकर शिक्षण संस्थाओं में शिक्षा का माहौल समाप्त किया जाये, साथ ही निजी क्षेत्र में शिक्षण संस्थान खोले गये और निजी शिक्षण संस्थाओं में शिक्षा का स्तर बढ़ाकर सरकारी शिक्षा को स्तरहीन बनाया गया। निजी शिक्षण संस्थाओं में शिक्षा को महंगा किया गया ताकि वंचित व पिछड़े वर्ग के छात्र अच्छी शिक्षा ही ग्रहण नहीं कर सकें। दुर्भाग्य से देश में केन्द्र व राज्यों में शिक्षा विभाग पर उच्च वर्ग का ही नियंत्रण रहा है इसलिए वे इस साजिश को अंजाम देने में सफल हो गया। इनकी यह मान्यता रही है कि इस देश का विशाल शोषित व वंचित वर्ग अच्छी व उच्च शिक्षा प्राप्त करने में सफल हो गया तो धर्म आधारित जातीय समाज रचना के फलस्वरूप उन्हें सहजता से प्राप्त हुई शासक बने रहने की पदवी व व्यूह रचना तहसनहश हो जाएगी इसलिए सरकार द्वारा खड़े किये गये प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा के विशाल ढांचे को धीरे–धीरे कमजोर व अन्दर से खोखला करने का कार्य योजनाबद्ध तरीके से शुरू किया।

प्राथमिक शिक्षा विधार्थी के लिए नींव का पत्थर होती है यदि प्राथमिक शिक्षा कमजोर होगी तो विधार्थियों के आगे बढ़ने व उच्च वर्ग के साथ प्रतिस्पर्द्धा करने का सपना ही समाप्त हो जायेगा, इस नियत से ही सरकार द्वारा संचालित प्राथमिक एवं माध्यमिक स्कूलों को सुविधाहीन व शिक्षा के माहौल से दूर किया गया। सरकारी स्कूलों के रख–रखाव व नवनिर्माण के लिए अलग से बजट नहीं रखा। सभी सरकारी भवनों के रख–रखाव व नवनिर्माण के पूरे बजट को केवल सरकारी आवासों एवं प्रशासनिक भवनों के रंग रोगन, साज सज्जा व मरम्मत के नाम पर नवनिर्माण में खर्च किया जाने लगा। विधार्थियों की बढ़ती संख्या के अनुपात में नये सरकारी स्कूल जानबूझकर नहीं बनाए गए और हालत यहां तक बना दी गई कि सरकारी स्कूलों की प्राथमिक शिक्षा के छात्र पेड़ों के नीचे अथवा खुले आसमान के नीचे पढ़ने को मजबूर हो गये। माध्यमिक व प्राथमिक शिक्षा के शिक्षकों की छात्रों की संख्या के अनुसार भर्ती नहीं की गई क्योंकि यदि शिक्षकों की संख्या बढ़ती है तो वंचितों में शिक्षा के हुए प्रसार के कारण इनको भी आरक्षण नीति के तहत नियुक्ति देनी पड़ेगी। जो थोड़े बहुत शिक्षक थे उनको अन्य कार्यों जैसे पल्स पोलियो, जनगणना व अन्य फालतू की योजनाओं में लगा दिया गया, इसलिए देश की प्राथमिक यहां तक कि माध्यमिक शिक्षा सरकारी स्कूलों की चौपट हो गई। इसके विपरीत उच्च वर्ग के लोगों ने जो निजी स्कूल खोले उनकी ऊँची फीस व अन्य मांगों के कारण वंचित वर्ग के छात्र निजी स्कूलों में शिक्षा ग्रहण करने से महरूम हो गये। उच्च वर्ग के शिक्षार्थी निजी

शिक्षण संस्थाओं से अच्छी व गुणकारी शिक्षा प्राप्त कर नौकरियों पर कब्जा बनाए रखने में सफल हो गये।

राष्ट्रीय विश्वविद्यालय शिक्षा योजना एवं प्रशासन (ने.यू.इ.पी.ए.) द्वारा वर्ष 2005–06 में प्रकाशित रिपोर्ट के अनुसार देश में लगभग 32000 स्कूलों में कोई छात्र नहीं होने का सनसनीखेज तथ्य सामने आया है और इन 32000 स्कूलों में छात्रों के नहीं होने का कारण स्कूलों के लिए आवश्यक मूलभूत ढांचा व अध्यापकों की व्यवस्था नहीं हो पाना माना है और यह दुर्दशा ग्रामीण अंचल में होना जाहिर किया है। भारत गांवों का देश है। देश का बहुसंख्यक पिछड़ा, दलित व आदिवासी वर्ग आज भी गांवों में ही निवास करता है। उच्च वर्ग के अधिकतर लोग अच्छे व सुखी जीवन की प्राप्ति हेतु कभी के गांव छोड़ चुके हैं। देश की सत्ता व सम्पत्ति पर काबिज जमात अब शहरों व बड़े कस्बों में निवास करती है एवं शोषित व शाषित जमात का बसेरा आज भी गांव ही है। कृषि एवं श्रम आधारित जीवन के अभ्यस्त होने व हर प्रकार की सुविधाओं एवं विकास की प्रक्रिया से कोसों दूर ग्रामीण जीवन उनकी मजबूरी है। वे शहर की रोजगार विहीन व मौलिक सुविधाओं से वंचित कच्ची बस्तियों की अपेक्षा गांव को अधिक सुरक्षित महसूस करते हैं। केवल जागरूक दलित ही उत्पीड़न व अन्याय का मुकाबला नहीं कर पाने के कारण शहरों व कस्बों की मलिन बस्तियों में पनाह लेने को मजबूर हुए हैं।

स्वतंत्र भारत के संविधान में मौलिक अधिकारों के अनुच्छेद 15 (4) में ''सरकार से अनुसूचित जाति/जनजाति व पिछड़े वर्ग के शैक्षिक पिछड़ेपन को समाप्त करने की बाध्यता तय की है'' लेकिन राज्यों व केन्द्र सरकार ने संविधान के उक्त आदेश की जानबूझकर अवहेलना की है। भारतीय संविधान के ही अनुच्छेद 46 में स्पष्ट निर्देश है कि ''राज्य जनता के दुर्बल वर्गों के विशिष्ट तथा अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा व अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा। सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा।'' भारतीय संविधान के ही अनुच्छेद 45 में यह स्पष्ट निर्देश राज्य को दिया गया है कि ''राज्य संविधान के प्रारम्भ होने से 10 वर्ष की अवधि के भीतर सभी बालकों को 14 वर्ष की आयु पूरी होने तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के लिए उपबन्ध करेगा।'' लेकिन दुर्भाग्य है कि संविधान के स्पष्ट आदेश व निर्देश के बावजूद स्वतंत्रता के बाद शिक्षा का बुनियादी ढांचा जानबूझकर 80 के दसक के बाद ध्वस्त किया गया इसका कारण जहां तक मैं जान पाया हूँ वह कार्यपालिका व न्यायपालिका में उच्च वर्ग का एक छत्र वर्चस्व है, संविधान की मंशा की अभिव्यक्ति व कार्यान्विति न्यायपालिका व कार्यपालिका की है। राजनैतिक दलों पर उच्च वर्ण का नियंत्रण होने से अनु.जाति/ जनजाति व पिछड़े वर्ग में से ऐसे लोगों को विधायक व सांसदों के रूप में निर्वाचित नहीं करवाया जो वंचित वर्ग के हित के लिए आवाज उठा सकें। इसी कारण सरकारी शिक्षा की हालत दयनीय हो गई है तथा देश का विशाल तबका आज भी बुनियादी व अच्छी शिक्षा से वंचित है। इसी कारण प्रथम व द्वितीय श्रेणी की नौकरियों से महरूम है।

मेरे विचार में शिक्षा जीवन को संवारती है, व्यक्ति में स्वाभिमान व आत्म गरिमा का संचार करती है। शिक्षा ही मानवता के लिए संघर्ष की प्रेरणा देती है। प्राकृतिक व मानवकृत विपदाओं से लड़ने की क्षमता व मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है एवं सामाजिक सोच को विकसित करती है। लोकतंत्र में लोकहित के प्रति प्रतिबद्धता की भावना को मजबूती प्रदान करती है। समानता व भ्रातृत्व एवं सह–अस्तित्व के सामाजिक गुणों का व्यक्ति में सृजन करती है। इसलिए देश हित में यह नितान्त आवश्यक है कि शिक्षा निःशुल्क व अनिवार्य हो ताकि अवसर की समानता के मौलिक अधिकार को अमली जामा पहनाया जा सके तथा सभी को फलने–फूलने का अवसर मिल सके।

(4) विशाल अन्य पिछड़ा वर्ग के शैक्षिक व सामाजिक पिछड़ेपन को बनाए रखकर इनके एकीकरण व सरकारी सेवा में प्रतिनिधित्व विहीन रखने की साजिश :–

अन्य पिछड़ा वर्ग में वे जातियां है जो कृषि, पशुपालन, दस्तकारी व चाकरी से अपनी आजीविका चलाती हैं जिनको भी संविधान निर्माताओं ने शैक्षिक व सामाजिक तौर पर पिछड़ों की श्रेणी में रखा है और भारतीय संविधान के अनुच्छेद 340 में भारत के राष्ट्रपति को यह अधिकार प्रदान किया है कि वह इन जातियों के सामाजिक व शैक्षिक पिछड़ेपन का पता लगाने के लिए कमीशन नियुक्त करे और उक्त कमीशन शैक्षिक व सामाजिक पिछड़ेपन का पता लगाकर उन्हें चिन्हित करे तथा इस वर्ग के लोगों का सामाजिक व शैक्षिक विकास कैसे संभव हो सकता है, इस बाबत् सुझाव भी पेश करे ताकि राष्ट्रपति भारतीय संसद में उचित कानून हेतु रिपोर्ट पेश कर सकें।

<u>प्रथम पिछड़ा वर्ग आयोग</u> :–

प्रथम पिछड़ा वर्ग आयोग स्वर्गीय काका कालेलकर की अध्यक्ष में 29 जनवरी, 1953 को भारत के संविधान के अनुच्छेद 340 के अन्तर्गत राष्ट्रपति आदेश द्वारा गठित किया गया था इसने 30 मार्च, 1955 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की थी।

आयोग ने अपनी जांच के विभिन्न पहलुओं पर विभिन्न राज्य सरकारों से तथा जन साधारण के विचार प्राप्त करने के लिए 182 प्रश्नों की एक प्रश्नावली जारी की। इसने मौके पर ही साक्ष्य एकत्र करने के लिए देश का व्यापक दौरा भी किया। समूचे देश के लिए 2399 पिछड़ी जातियों या समुदायों की भी एक सूची तैयार की तथा उनमें से 837 जातियों को सर्वाधिक पिछड़े के रूप में वर्गीकृत किया। भारत के महा पंजीयक तथा जनगणना आयुक्त ने 930 पिछड़ी जातियों या समुदायों के जनसंख्या संबंधी आंकड़े निकालने में आयोग की मदद की।

पिछडे वर्गों की उन्नति के लिए आयोग की सिफारिशें विभिन्न प्रकार की तथा अत्यन्त व्यापक हैं उनमें ऐसे विस्तृत क्षेत्र आते हैं जैसे व्यापक भूमि सुधार, ग्रामीण अर्थव्यवस्था का पुनर्गठन, भूदान आन्दोलन, पशुधन विकास, डेयरी फार्मिंग, पशु बीमा, मधुमक्खी पालन, सुअर

बाड़ा, मत्स्य पालन, ग्रामीण तथा कुटीर उद्योग का विकास, ग्रामीण आवास, जन स्वास्थ्य तथा ग्रामीण जल आपूर्ति, प्रौढ़ साक्षरता, विश्वविद्यालय शिक्षा, सरकारी सेवा में पिछड़े वर्गों का प्रतिनिधित्व, आदि आदि। आयोग की कुछ उल्लेखनीय सिफारिशें निम्नलिखित थी : –

1. 1961 की जनगणना में जनसंख्या की जातिवार गणना का ज्ञान ।
2. हिन्दू समाज की पारम्परिक जाति व्यवस्था में निम्न स्तर के एक वर्ग के सामाजिक पिछड़ेपन के कारण निम्न स्थिति ।
3. सभी महिलाओं को 'पिछड़े' वर्ग में मानना।
4. पिछड़े वर्गों के योग्य विद्यार्थियों के लिए तकनीकी तथा व्यावसायिक संस्थाओं में 70 प्रतिशत स्थानों का आरक्षण ।
5. निम्नलिखित पैमाने पर अन्य पिछड़े वर्गों के लिए सभी सरकारी सेवाओं तथा स्थानीय निकाओं की नियुक्ति में न्यूनतम आरक्षण :

   श्रेणी 1 – 25 प्रतिशत

   श्रेणी 2 – $33\frac{1}{2}$ प्रतिशत

   श्रेणी 3 तथा 4–40 प्रतिशत

काका कालेकर आयोग की रिपोर्ट विस्तृत जांच के उपरान्त 3 सितम्बर, 1956 को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष प्रस्तुत की गई लेकिन आयोग की रिपोर्ट पर जानबूझकर संसद में चर्चा नहीं होने दी गई। संसद में ज्ञापन प्रस्तुत करने के बाद, सरकार ने जाति के अलावा कुछ अन्य मानदण्ड खोजने के प्रयास किए, जो पिछड़े वर्गों का निर्धारण करने में व्यावहारिक रूप से लागू हो सकें। उपमहापंजीयक से यह कहा गया कि वह यह देखने के लिए पायलट सर्वेक्षण करें कि क्या पिछड़ेपन को जाति के बदले व्यावसायिक समुदाये से जोड़ा जा सकता है, किन्तु आर्थिक कसौटियों को जाति के स्थान पर रखने का मतलब है भारतीय समाज में सामाजिक पिछड़ेपन के आदि ग्रन्थ की अवहेलना करना। अन्ततः केन्द्रीय सरकार ने निर्णय लिया कि पिछड़े वर्गों की कोई अखिल भारतीय सूची नहीं बनायी जानी चाहिए और अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के अलावा पिछड़े वर्गों के लिए केन्द्रीय सेवाओं में कोई आरक्षण नहीं किया जाना चाहिए। इस प्रकार काका कालेलकर रिपोर्ट को सरकार ने लागू नहीं किया।

मण्डल कमीशन

सन् 1977 में हुए लोकसभा चुनाव में नवगठित जनता पार्टी ने चुनाव घोषणा पत्र में जाहिर किया था कि यदि जनता पार्टी को बहुमत मिला तो काका कालेलकर कमीशन की रिपोर्ट को लागू किया जायेगा । चुनाव में जनता पार्टी को बहुमत मिला, जब प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई को पिछड़ा वर्ग के सांसदों ने काका कालेलकर कमीशन की रिपोर्ट लागू करने बाबत् ज्ञापन

दिया तेा मोरारजी देसाई ने पुनः सन् 1977 में बी.पी. मण्डल की अध्यक्षता में एक ओर कमीशन का गठन कर दिया । मण्डल कमिशन ने सन् 1981 में अपनी रिपोर्ट प्रेषित की तब तक श्रीमती इन्दिरा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस की सरकार केन्द्र में बन चुकी थी । इसलिए 1989 तक मण्डल कमीशन की रिपोर्ट पर कोई ध्यान नहीं दिया गया , सन् 1989 में वी.पी. सिंह की सरकार सत्ता में आई और सत्ता में बने रहने का संकट उत्पन्न होने पर वी.पी. सिंह ने मण्डल कमीशन की रिपोर्ट को स्वीकार किया तो देश में मण्डल कमीशन की रिपोर्ट के विरूद्ध जारी आन्दोलन ने उग्र व हिंसक रूप ले लिया । कई याचिकाएं सुप्रीम कोर्ट में पेश की गई। सुप्रीम कोर्ट की नो जजों की संवैधानिक पीठ ने ए.आई.आर. 1993 सुप्रीम कोर्ट पृष्ठ संख्या 477 इन्दिरा साहनी व अन्य बनाम भारत संघ के प्रकरण मे मण्डल कमीशन की रिपोर्ट को स्वीकार किए जाने के विरूद्ध विचाराधीन याचिकाओं को निरस्त करते हुए सन् 1992 में पारित निर्णय से यह प्रतिपादित किया कि अन्य पिछड़ा वर्ग को शिक्षा व सरकारी सेवाओं में स्वीकार किया गया आरक्षण वैध है लेकिन सरकारी सेवाओं में आरक्षण की सीमा 50 प्रतिशत से अधिक नहीं होने की पाबन्दी भी लगा दी, और यह भी आदेश प्रदान किया कि शेष 50 प्रतिशत सरकारी सेवा की सीटें योग्यता के आधार पर भरी जाएंगी जिनपर आरक्षित व अनारक्षित दोनों ही वर्गों के व्यक्ति योग्यता के आधार पर चयनित हो सकेगें। इस प्रकार सन् 1993 में अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए देश में 27 प्रतिशत आरक्षण लागू हुआ।

अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए सरकारी नौकरियों में आरक्षण के अलावा इन्हें शैक्षिक व व्यावसायिक क्षेत्र में भी 27 प्रतिशत आरक्षण की सिफारिश मण्डल कमीशन ने की थी, जिसे वी. पी.सिंह की सरकार ने मंजूर कर शिक्षा के क्षेत्र में भी 27 प्रतिशत आरक्षण की आज्ञा जारी की थी लेकिन उच्च वर्ग ने अन्य पिछड़ा वर्ग (ओ.बी.सी.) को शैक्षणिक क्षेत्र में आरक्षण नहीं मिले इसलिए ही पग–पग पर विरोध जारी रखा हुआ है, उच्च न्यायालयों एवं सुप्रीम कोर्ट में कई याचिकाएं भी पेश की हैं, सुप्रीम कोर्ट ने कतिपय निर्णयों से भी आदेश प्रदान किए हैं कि उच्च तकनीकी शिक्षा में अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए आरक्षण वैद्य नहीं है उच्च शिक्षण संस्थाओं में भी अन्य पिछड़ा वर्ग को शैक्षिक आरक्षण के अधिकार से न्यायिक प्रक्रिया का सहारा लेकर वंचित कर रखा है। देश का विशाल अन्य पिछड़ा वर्ग सैकड़ों जातियों में विभाजित होने के कारण संगठित नहीं है, इनका राजनैतिक नेतृत्व काफी मजबूत है, प्रदेशों में इन वर्गों के ही मुख्यमंत्री हैं लेकिन राजनैतिक दलों में विभाजित होने के कारण इनकी तरफ से संगठित प्रयास नहीं किया जा रहा है। बिना उच्च व तकनीकी शिक्षा के सरकारी सेवा का आरक्षण प्राप्त करना आसान नहीं है इसलिए अन्य पिछड़ा वर्ग के पढ़े लिखे बुद्धिजीवियों व राजनीतिज्ञों को उच्च वर्ग की इस षड़यंत्रकारी मुहिम के विरूद्ध गंभीर मनन व चिन्तन कर कारगर कदम उठाना चाहिए। कोर्ट के आदेश के मध्यनजर मण्डल कमीशन ने ओ.बी.सी. को 27 प्रतिशत आरक्षण प्रदान करने की सिफारिश की थी, जो इन वर्गों के लिए न्यायसंगत नहीं मानी जा सकती। दुर्भाग्य इस बात का है कि ओ.बी.सी. की 52 प्रतिशत जनसंख्या के अनुंपात में केवल 27 प्रतिशत

प्रदान किए गये आरक्षण को भी उच्च वर्ग नहीं पचा पा रहा है। न्यायालयों के माध्यम से ओ. बी.सी. के उच्च व तकनीकी शिक्षा के आरक्षण के मार्ग में रोड़े अटका रखे हैं। इन वर्गों के मलाईदार तबके को पूर्व से ही सुप्रीम कोर्ट ने आरक्षण के हक से वंचित कर दिया है। यह वर्ग हजारों जातियों में विभाजित होने से ओ.बी.सी. के नाम से न तो अपनी पहचान बना पाया है और नहीं इस प्रकार की मानसिकता ही विकसित कर पाया है। उच्च वर्ग विशेषकर ब्राह्मणों का यह सतत् प्रयास रहा है कि ओ.बी.सी. की जातियां आरक्षण के मुद्दे पर लाभबद्ध नहीं हों इसलिए जातियों को आपस में लड़ाने भिड़ाने व एक दूसरी जाति के विरूद्ध अविश्वास, मनमुटाव व टकराव पैदा करने का षडयंत्र अनवरत जारी है जिसे अन्य पिछड़ा वर्ग का राजनैतिक नेतृत्व भी नहीं समझ पा रहा है।

अन्य पिछड़ा वर्ग हिन्दू समाज व्यवस्था की रीढ़ है। संख्या बल के आधार पर इस वर्ग के प्रतिनिधि राजनैतिक दलों की मार्फत संसद व विधानसभाओं में काफी संख्या में पहुंच बनाए हुए हैं लेकिन ओ.बी.सी. का सामाजिक, शैक्षिक व आर्थिक पिछडापन कैसे समाप्त किया जाये। इस बाबत सोचने व पहल करने की भावना इन वर्गों के नेताओं में नहीं पनप पाई है। इन वर्गों की प्रभावशाली जातियों ने संख्या बल के आधार पर अपना अलग प्रभाव स्थापित कर लिया है वे ओ.बी.सी. की छोटी–छोटी जातियों को साथ लेकर चलने की मानसिकता विकसित नहीं कर पाई हैं , इसलिए छोटी–छोटी जातियों में इनके प्रति गहरा असंतोष है उच्च वर्ग भी इस असंतोष को बढ़ाने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ रहा है। दस्तकारी, चाकरी व छोटे–छोटे जातीय व्यवसायों में लगी जातियो में तो शिक्षा का नितांत अभाव है, आर्थिक दृष्टि से कमजोर होने के कारण उन्हें राजनैतिक लाभ भी नहीं मिल पा रहा है, गाडूलिया लुहार व बंजारा एवं इसी प्रकार की अन्य घुम्मकड़ जातियां तो लोकतंत्र का मतलब भी नहीं समझ पाई हैं , मेरे विचार में अन्य पिछड़ा वर्ग के रूप में इनकी पहचान बने बिना यह वर्ग अपना संवैधानिक अधिकार प्राप्त करने में असफल ही रहेगा। इन वर्गों को किसने आर्थिक, शैक्षिक व सामाजिक रूप से पंगु व असहाय बनाया , इसकी जानकारी के अभाव में एकजुटता संभव नहीं है। इस वर्ग की छोटी–छोटी जातियों को भी जातीय बाड़े से बाहर निकलकर राजनैतिक व सामाजिक हित के लिए एक जुट होकर दबाव समूह की भूमिका में आना लाजमी है। तब ही लोकतंत्र का मौलिक स्वरूप **जनता का राज जनता द्वारा जनता के लिए** सही आकार ले सकेगा और धर्म के नाम पर थोपी व पोषित की गई निर्योग्यताओं के कारण विकसित हुई मानसिक गुलामी से भी मुक्ति मिल सकेगी।

5. <u>सरकारी सेवा के संवैधानिक आरक्षण पर न्यायालय का असंवैधानिक दखल</u> : –

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 16 (4) में राज्य को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वह पिछड़े वर्गों को राज्य सेवाओं में उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करे। अनुसूचित जाति/जनजाति में कौनसी जातियां होंगी इसका निर्धारण राष्ट्रपति राज्य के राज्यपाल से परामर्श के उपरांत संविधान के अनुच्छेद 341 एवं 342 के अनुसार तय करते हैं। संसद को उक्त सूची में किसी

अन्य जाति को शामिल करने अथवा सूची से बाहर करने का अधिकार है। जाति ही हिन्दू समाज व्यवस्था में व्यक्ति की पहचान का आधार है बिना जाति के कोई हिन्दू हो ही नहीं सकता।

सर्वोच्च न्यायालय ने इन्दिरा साहनी एवं अन्य बनाम भारत संघ के प्रकरण में अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए पदोन्नति में आरक्षण का मुद्दा विवाद का विषय नहीं होते हुए भी यह तय कर दिया था कि अनुसूचित जाति/जनजाति के लिए सरकारी सेवाओं में पदोन्नति में आरक्षण का संविधान में कोई प्रावधान नहीं है इसलिए 5 वर्ष में पदोन्नति में आरक्षण की व्यवस्था को समाप्त किया जाये सर्वोच्च न्यायालय के उक्त आदेश को निष्प्रभावी करने के लिए संसद को जनहित में 77वां संवैधानिक संशोधन करना पड़ा। इसी प्रकार आर.के. सब्बरवाल बनाम पंजाब राज्य के प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सरकारी पदों में अनुसूचित जाति/जनजाति का बेकलॉग पूरा करने में डाली गई अड़चन तथा भारत संघ बनाम वीरपाल सिंह चौहान एवं अजीत सिंह जानुजा एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य के प्रकरणों में अनुसूचित जाति/जनजाति के कर्मचारियों एवं अधिकारियों को पदोन्नति वाले संवर्ग में प्राप्त वरिष्ठता को समाप्त करने के लिए केचअप (Catch up) और रिगेनिंग (Regaining) के फॉर्मूले ईजाद कर पदोन्नति की दिनांक से इन वर्गों के कर्मचारियों/अधिकारियों को वरिष्ठता नहीं दिए जाने बाबत् व्यवधान उत्पन्न किया गया जिन्हें भी निष्प्रभावी करने के लिए संसद को संवैधानिक संशोधन 85 करना पड़ा।

एम.नागराज बनाम भारत संघ के प्रकरण में उच्च वर्ग के याचिकाकर्ताओं ने भारतीय संसद द्वारा किए गये संवैधानिक संशोधन संख्या 77,81,82 एवं 85 को इस आधार पर चुनौती दी थी कि संसद को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इन्दिरा साहनी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य 1992 एस.सी.सी. 3 पृष्ट 217, भारत संघ एवं अन्य बनाम वीरपाल सिंह चौहान एवं अन्य 1995 एस.सी.सी. 6 पृष्ट 684, अजीत सिंह जानुजा बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य 1996 एस.सी. सी. 2 पृष्ट 715 अजीत सिंह द्वितीय एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य 1999 एस.सी.सी. 7 पृष्ट 209 के निर्णयों में दिए गये आदेशों एवं निर्देशों को निष्प्रभावी करने का क्षेत्राधिकार नहीं है। यह भी आक्षेप लगाया था कि संसद ने अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर शीर्ष न्यायपालिका के अधिकारों में बेजा हस्तक्षेप किया है जो दुर्भावनापूर्ण व अवैध है। यही मुद्दा विवाद का विषय था और एम.नागराज एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य के मामलों में दायर सभी याचिकाओं को निरस्त करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक पीठ ने जरिये निर्णय दिनांक 19. 10.2006 को यह प्रतिपादित किया था कि संसद द्वारा किए गये संवैधानिक संशोधन संख्या 77,81,82 एवं 85 वैध हैं। संसद ने उक्त संवैधानिक संशोधन के जरिये शीर्ष न्यायपालिका के क्षेत्राधिकार का न तो उल्लंघन किया है और न ही संसद ने अपने अधिकार क्षेत्र के बाहर जाकर उक्त संवैधानिक संशोधन ही किए हैं यह भी तय किया था कि संसद को संविधान में संशोधन करने व कानून बनाने का अधिकार है।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इन्दिरा साहनी एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य के प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी आदेश दिया था कि सरकारी सेवा के 50 प्रतिशत पद आरक्षण से तथा शेष 50 प्रतिशत पद योग्यता से भरे जायेगें। योग्यता वाले 50 प्रतिशत पद आरक्षित एवं अनारक्षित वर्ग दोनों के लिए खुले होगें। यदि आरक्षित वर्ग का अभ्यर्थी योग्यता के आधार पर चयनित होता है तो उसे आरक्षित वर्ग की श्रेणी में नहीं गिना जायेगा। इस प्रकार इन्दिरा साहनी एवं अन्य बनाम भारत संघ के प्रकरण 1992 एस.सी.सी. 3 पृष्ट 217 में आरक्षित वर्ग (Reserved category) एवं योग्यता संवर्ग (Merit category) ही रखे गये है सामान्य वर्ग (general category) की श्रेणी समाप्त कर दी गई है इसी नीति के तहत ही माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आरक्षण 50 प्रतिशत से अधिक नहीं रखे जाने की सीमा निर्धारित की थी, लेकिन उच्च वर्ग की यह मानसिकता बनी हुई है कि आरक्षित (अनु.जाति /जनजाति एवं अन्य पिछड़ा) वर्ग के लिए आरक्षण केवल 50 प्रतिशत ही है और शेष 50 प्रतिशत पद केवल उच्च वर्ग के लिए ही निर्धारित हैं। इसी मानसिकता का परिलक्षण माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एम.नागराज एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य तथा अभी हाल ही में माननीय सर्वोच्च न्यायालय की दो जजों की बेंच द्वारा पारित निर्णय दिनांक 07.12.10 व राजस्थान उच्च न्यायालय के निर्णय दिनांक 05.02.2010 से होता है जो न केवल अनुचित है बल्कि इन्दिरा साहनी बनाम अन्य एवं भारत संघ एवं अन्य के प्रकरणों में नो जजों की संवैधानिक पीठ के नीतिगत निर्णय व भावना के भी विपरीत है।

संसद द्वारा किए गए संवैधानिक संशोधन संख्या 85 के जरिये भारतीय संविधान के अनुच्छेद 16 (4) (क) जोड़कर संसद ने यह कानून बना दिया है कि अनुसूचित जाति/जनजाति का अधिकारी/कर्मचारी पदोन्नति की दिनांक से ही पदोन्नति वाले संवर्ग में वरिष्ठता प्राप्त करेगा। लोकतंत्र में कानून बनाने का क्षेत्राधिकार केवल विधायिका को ही है। यह गहरे दुःख का विषय है कि शीर्ष न्यायपालिका ने उपरोक्त निर्णयों के माध्यम से संविधान एवं संसद को दरकिनार करते हुए कानून बनाकर देश पर थोपने का काम भी कर दिया है जो न केवल असंवैधानिक है वरन् लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था को गड़बड़ाने का प्रयास भी है ऐसा कारिया मुंडा संसदीय समिति ने सन् 2002 में प्रेषित अपनी रिपोर्ट में जाहिर किया है।

उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश व अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति भारतीय संविधान के अनुच्छेद 124 के अनुसार राष्ट्रपति द्वारा की जाती है लेकिन मुख्य न्यायाधीश एवं अन्य न्यायाधीशों पर प्रशासनिक नियंत्रण किसी का भी नहीं है, मुख्य न्यायाधीश केवल कार्यों का बंटवारा भर ही कर सकते हैं परन्तु उच्चतम न्यायालय के न्यायाधिपतिगण मुख्य न्यायाधीश के प्रति जवाबदेह नहीं हैं। न्यायिक समीक्षा के असीमित अधिकार के कारण पिछले 63 वर्षों में शीर्ष न्यायपालिका ने अपने अधिकार क्षेत्र में असीमित विस्तार कर लिया, यही स्थिति राज्यों के उच्च न्यायालयों की रही है, जनहित याचिकाओं के माध्यम से सरकार के दिन प्रतिदिन के प्रशासनिक कार्यों में हस्तक्षेप ने सरकारों को पंगु बना दिया, कार्यपालिका को प्रशासन कैसे चलाये जाये

इस बाबत् भी फरमान जारी करने शुरू कर दिये। शीर्ष न्यायपालिका ने 1982 में एस.पी.गुप्ता बनाम भारत संघ, 1993 सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स आन रेकॉर्ड बनाम भारत संघ एवं भारत के महामहिम राष्ट्रपति श्री के.आर.नारायण द्वारा मांगी गई सलाह पर 1998 में पारित निर्णयों के जरिये उच्च व उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्ति का अधिकार भी कॉलेजियम की स्थापना कर अपने पास ले लिया न्यायिक निर्णय के जरिये राष्ट्रपति की नियुक्ति की शक्ति को केवल ओपचारिकता में बदल दिया और बहाना यह बनाया गया कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 124 एवं 217 में सर्वोच्च एवं उच्च न्यायालयों में न्यायाधिपति राजनैतिक आधार पर नियुक्त हो जाते हैं उनमें योग्यता का भी अभाव होता है, इसलिए न्यायाधीशों की नियुक्ति में उच्च न्यायालय व सर्वोच्च न्यायालय में मुख्य न्यायाधीश व वरिष्ठ न्यायाधीशों के कोलेजियम की सिफारिश को बाध्यकारी बना दिया और न्यायाधीशों की नियुक्ति का अधिकार न्यायपालिका ने अपने हाथ में ले लिया।

विश्व के किसी भी राष्ट्र में न्यायपालिका को न्यायाधीश नियुक्त करने का अधिकार नहीं है इस नई व्यवस्था से स्थिति और भी भयावह हो गई, सर्वोच्च न्यायालय व उच्च न्यायालय के ब्रीफलेस, खुशामदी, चापलूस अवसरवादी अधिवक्ता कोलेजियम के माध्यम से न्यायाधीश बनने लग गये जिनकी सामाजिक व व्यक्तिक पृष्टभूमि जानने का कालेजियम के पास कोई जरिया ही नहीं है, कालेजियम के सदस्य न्यायाधीशों ने अपनी–अपनी जाति व वर्ग के अधिवक्ताओं को न्यायाधीश बनाने का सिलसिला शुरू कर दिया, पंजाब हरियाणा उच्च न्यायालय की न्यायाधीश श्रीमती निर्मला यादव, कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री सोमित्र सेन, राजस्थान उच्च न्यायालय के तत्कालीन न्यायाधीश श्री अरूण मदान इसी कालेजियम व्यवस्था की देन हैं, इसलिए ही प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह ने दिनांक 11.9.2008 को एक सेमिनार में कहा था कि न्यायाधीशों की नियुक्ति में पारदर्शिता व उच्च स्तरीय मापदण्डों को अपनाने का समय आ गया है विधि मंत्री श्री एच.एल. भारद्वाज ने भी उच्च न्यायालयों में बढ़ते भ्रष्टाचार का कारण न्यायाधीशों की नियुक्ति में आई खामी व पारदर्शिता के अभाव को बतलाया है।

।।कार्यपालिका की आरक्षित वर्ग के प्रति ुर्भावना की मिशाल।।

अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों के कल्याण संबंधी कारिया मुंडा समिति ने वर्ष 2001–2002 में अपनी रिपोर्ट पेश की है उसमें उल्लेखित तथ्यों से कार्यपालिका में पद स्थापित उच्च वर्ग के सचिवों एवं अन्य अधिकारियों की कारगुजारियों के चौंकाने वाले निम्न तथ्य सामने आये हैं।

''समिति यह नोट करके क्षुब्ध है कि स्वतंत्रता के पचास वर्ष बीत जाने के बाद भी भारत सरकार के विभिन्न विभागों तथा सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित

जनजातियों का प्रतिनिधित्व आरक्षण के निर्धारित स्तर अर्थात् अ0जा0 के लिए 15 प्रतिशत और अ0ज0जा0 के लिए 7.5 प्रतिशत तक नहीं पहुंच पाया है। समिति ने पाया कि भारत सरकार के विभिन्न विभागों तथा सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों में समूह 'क' तथा 'ख' श्रेणी में अनुसूचित जातियों तथा पदों की लगभग सभी श्रेणियों में अनुसूचित जनजातियों के कर्मचारियों की संख्या काफी कम है। उच्च पदों पर तो इन समुदायों का प्रतिनिधित्व अपेक्षित स्तर से बहुत कम हे। समिति नोट करती है कि सेवाओं में अ.जा. और अ.ज.जा. के लिए संवैधानिक सुरक्षोपाय समय–समय पर सक्षम मंत्रालय (वर्तमान में कार्मिक लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय, कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग) द्वारा जारी कार्यकारी आदेश के माध्यम से लागू किया जाता है। समिति यह नोट करके क्षुब्ध है कि जबकि लागू आरक्षण नीति का सभी सेवाओं में अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त करने में परिणाम देखना है, उच्चतम न्यायायालय के निर्णयों के आधार पर 1997 में कार्मिक तथा प्रशिक्षण विभाग द्वारा जारी पांच कार्यालय ज्ञापनों द्वारा कई सुविधाओं को वापस ले लिया गया है, जो अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों को प्राप्त थी और इस तरह आरक्षण नीति को बिल्कुल बदल दिया गया है। समिति की राय में ये कार्यालय ज्ञापन पूरी तरह से आरक्षण विरोधी और पूरी तरह असंवैधानिक हैं। समिति पुरजोर सिफारिश करती है कि सरकार को तुरन्त इन आरक्षण विरोधी कार्यालय ज्ञापनों को वापिस ले लेना चाहिए। समिति यह भी सिफारिश करती है कि ऐसी घटनाओं की पुनरावृति रोकने के लिए, सरकार को सभी ग्रेड़ों और संवर्गों में अ.जा. तथा अ.ज.जा. के लिए आरक्षण का निर्धारित प्रतिशत पूरा करने के लिए एक व्यापक विधान–आरक्षण विधेयक लाना चाहिए।''

''समिति नोट करती है कि भारत संघ बनाम वीरपाल सिंह चौहान आदि के मामले में उच्चतम न्याालय के निर्णय को प्रभावी करने के लिए कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग द्वारा दिनांक 30.01.1997 को जारी कार्यालय ज्ञापन के अनुसार, यदि अ.जा./अ.ज.जा. के किसी उम्मीदवार को उसके वरिष्ठ सामान्य उम्मीदवारों की तुलना में आरक्षण/रोस्टर के आधार पर पहले पदोन्नत किया जाता है और वरिष्ठ सामान्य उम्मीदवार को उक्त उच्च ग्रेड में बाद में पदोन्नत किया जाता है तो सामान्य उम्मीदवार इस प्रकार पहले पदोन्नत हुए अ.जा./ अ.ज.जा. के उम्मीदवार से वरिष्ठ ही रहता है। यह निर्णय केवल किसी विशेष विभाग के रेलवे गार्ड के लिए था और इसका अन्य विभागों से कुछ लेना–देना नहीं है जैसाकि निर्णय में स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है। समिति महसूस करती है कि यह कार्यालय ज्ञापन सभी विभागों पर लागू नहीं किया जाना चाहिए था इस कारण पहले पदोन्नत अ.जा./ अ.ज.जा. के उम्मीदवार की वरिष्ठता छिन गई। समिति पाती है कि कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग ने उस निर्णय के पैरा 45, 46 और 47 को जानबूझकर और गलत इरादे से उपेक्षा की है जिसमें उच्चतम न्यायालय ने यह निर्धारित किया है कि अ.जा./अ.ज.जा. के उम्मीदवारों की वरिष्ठता चयन पदों में प्रक्रिया/स्थिति के अनुसार विनियमित होगी और पिछले पैनल में चुने गये अ.जा./अ.ज.जा. के उम्मीदवार बाद के पैनल में चुने गए उम्मीदवारों से वरिष्ठ होगें।

समिति यह भी नोट करती है कि जगदीश लाल और अन्य बनाम हरियाणा राज्य तथा अन्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने 7.5.97 को यह टिप्पणी की थी कि उच्च ग्रेड में पदोन्नत होने पर आरक्षित श्रेणी के उम्मीदवार उच्च संवर्ग अथवा ग्रेड में सामान्य उम्मीदवारों से पहले पहुंच जाते हैं। इसलिए सामान्य उम्मीदवारों की वरिष्ठता को उनके उच्च संवर्ग अथवा ग्रेड में पदोन्नत होने के पश्चात् बहाल नहीं किया जा सकता, हालांकि वह फीडर संवर्ग/ग्रेड में पहले वरिष्ठ था। हरभजन सिंह बनाम भारत संघ के मामले में केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण की प्रधान खंडपीठ ने भी उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णय का समर्थन किया और उसे स्वीकार किया। संविधान के अनुच्छेद 338 के अंतर्गत भारत संघ और प्रत्येक राज्य सरकार के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को प्रभावित करने वाले सभी महत्वपूर्ण नीतिगत विषयों पर राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जाति आयोग से परामर्श करना आवश्यक होता है। समिति नोट करती है कि कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग ने दिनांक 30.1.97 को का.ज्ञा. जारी करने से पहले, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग से परामर्श करने की बजाय विधि मंत्रालय (विधि कार्य विभाग) की सलाह मांगी जिसने यह सलाह दी कि ''इस तरह के मामलों में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग से परामर्श करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि इस तरह के परामर्श से कोई उपयोगी प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा। समिति अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए संवैधानिक रक्षोपायां पर विचार किए बिना क.ज्ञा. जारी करने में कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग की बदनीयत देखकर क्षुब्ध हुई है। इसलिए समिति पुरजोर सिफारिश करती है कि कार्मिक, लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय (कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग) को दिनांक 30.1.97 का अपना कार्यालय ज्ञापन वास लेना चाहिए और जगदीश लाल मामले के निर्णय के आधार पर एक नया कार्यालय ज्ञापन जारी करना चाहिए।

समिति अनु.जा. और अनु.ज.जा. आयोग को संविधान (छियासठवां संशोधन) अधिनियम, 1990 के द्वारा दी गई शक्तियों का अवलोकन करने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंची है कि आयोग अनु.जा./अनु.ज.जा. से संबंधित मामलों की जांच करने के लिए भारत सरकार, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों या भारत सरकार की समेकित निधि से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निधि प्राप्त करने वाली संस्था के अधिकारियों को बुलाने में पूर्णतः सक्षम है। आयोग विचार विमर्श करना चाहता है जैसा कि तत्कालीन चेयरमैन के विशेष प्रतिवेदन से स्पष्ट है किन्तु कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग में उच्च पदों पर बैठे नौकरशाहों यथा तत्कालीन सचिव, संयुक्त सचिव ने आयोग की उपेक्षा की। इस प्रकार उनके विरूद्ध, आयोग के प्रति अपने कर्तव्यों का निर्वहन न करने के कारण कार्रवाई की जाए तथा अनु.जा. और अनु.ज.जा. (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के अध्याय -II की धारा 4 के तहत अभियोग चलाया जाए। समिति को यह भी बताया गया था कि तत्कालीन रेल मंत्री (श्री नितीश कुमार) ने 1998 की आई.ए.सं. 10 से 12 में उच्चतम न्यायालय के समक्ष रेलवे की ओर से पैरवी करने के लिए श्री वी.आर.रेड्डी, वरिष्ठ अधिवक्ता तथा भारत

के पूर्व अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल को नियुक्त करने का अनुमोदन किया था। लेकिन उन्हें रेलवे की ओर से पैरवी नहीं करने दी गई क्योंकि कार्मिक प्रशिक्षण विभाग के सचिव ने रेलवे बोर्ड के अध्यक्ष से इस संबंध में बात की और इस मामले में आई.ए. दायर करने के रेलवे के अधिकार के बारे में प्रश्नचिन्ह लगाया। उन्होंने श्री वी.आर. रेड्डी की नियुक्ति पर भी आपत्ति की और इसके परिणामस्वरूप रेलवे बोर्ड के सदस्य श्री के.बालकेसरी द्वारा श्री वी.आर. रेड्डी को दूरभाष पर किए गए अनुरोध के आधार पर उन्हें पैरवी करने में मना कर दिया गया और यह बात रिकॉर्ड में नहीं लाई गई। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि न्यायालय में आरक्षण नीतियों का समर्थन कितनी असावधानीपूर्वक किया जाता है। अतः समिति की राय में यह स्पष्ट है कि उच्चाधिकारियों द्वारा आरक्षण नीति को चुनौती देने के लिए लोगों को न्यायालय के समक्ष मामले दायर करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। उसके बाद उत्तरों के प्रति शपथ–पत्र असावधानीपूर्वक दायर किए जाते हैं और ऐसे अधिवक्ताओं को प्रस्तुत किया जाता है जिन्हें या तो मामले की पूर्ण जानकारी नहीं होती है या जिन्हें आरक्षण नियमों के संबंध में विशेषज्ञता प्राप्त नहीं होती है। रूचि न होने और उन्हें वित्तीय प्रोत्साहन न मिलने के कारण वे मामलों का बचाव करने में कम ध्यान देते हैं और जब भी ऐसे मामलों में हार होती है तो पक्षपातपूर्ण नौकरशाही द्वारा यह कहते हुए निर्णय को कार्यान्वित किया जाता है कि यदि निर्णय कार्यान्वित नहीं किया गया तो उनके विरूद्ध अवमानना का मामला बन सकता है। यह दुष्चक्र चलता रहता है और जब तक व्यवस्था में सुधार नहीं किया जाता यह भविष्य में भी जारी रहेगा। समिति यह टिप्पणी करती है कि 4.8.1998 को लोकसभा में हुई चर्चा कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग की कार्यशैली पर प्रकाश डालती है। प्रधानमंत्री श्री देवगौड़ा जी और श्री इन्द्र कुमार गुजराल जी के मंत्रिमण्डल में रेल मंत्री रह चुके श्री रामविलास पासवान ने 4.8.98 को लोकसभा में कहा था कि उन्हें सरकार में रहते समय यह बात मालूम थी कि स्थायी नौकरशाही किस प्रकार किसी बात को तोड़–मरोड़ देती है तथा सरकार के कमजोर हो जाने पर नौकरशाही मजबूत हो जाती है और सरकार द्वारा उठाए जाने वाले किसी कदम पर अनिर्णय की स्थिति बनी रहती है। उन्होंने विशेष रूप से कहा था कि तत्कालीन कैबिनेट सचिव अनु.जा. और अनु.ज.जा. के खिलाफ हैं। समिति को ज्ञात है कि तत्कालीन कैबिनेट सचिव श्री सुब्रह्मण्यम उत्तर प्रदेश कैडर के आई.ए.एस. थे। तत्कालीन मुख्यमंत्री सुश्री मायावती ने उन्हें उत्तरप्रदेश के मुख्य सचिव के रूप में वरीयता नहीं दी थी तथा उन्होंने अनु.जा. के एक अधिकारी श्री माता प्रसाद को मुख्य सचिव बनाया था। इसलिए उन्हें पूरे दलित समुदाय से शिकायत थी। यही बात श्री रामविलास पासवान द्वारा की गई टिप्पणी से स्पष्ट है कि उन्होंने लोक सभा में अपने दिए गए भाषण में कही थी जिसे ऊपर सविस्तार उदृत किया गया है।

समिति महसूस करती है कि भविष्य में ऐसे अवसर आयेंगे जबकि पक्षपातपूर्ण नौकरशाही दलितों और जनजातियों को सुरक्षा के लिए किए गए संवैधानिक उपायों में कटौती करने के लिए जानबूझकर विचार–विमर्श नहीं करेगी। इसलिए समिति पुरजोर सिफारिश करती है कि

इस प्रकार का विचार–विमर्श अनिवार्य किया जाए, भले ही मामले न्यायालय से संबंधित हों तथा जिन मामलों में न्यायालय के निर्णयों के क्रियान्वयन से अनु.जा./अनु.ज.जा. के कल्याण के लिए बनाई गई नीतियों और कार्यक्रमों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हो। विचार–विमर्श न करने वालों के विरूद्ध आयोग के प्रति निर्धारित उनके कर्त्तव्यों एवं उत्तरदायित्व की जानबूझकर अवहेलना करने के लिए अनु.जा./अनु.ज.जा. (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के संगत प्रावधानों के अधीन अभियोग चलाया जाए ताकि अनु.जा./अनु.ज.जा. राष्ट्रीय आयोग नामक संस्था अधिकार विहीन दिखावे की वस्तु बनकर न रह जाए। राष्ट्रीय आयोग की शक्तियां और कार्यकरण को और अधिक प्रभावी बनाया जाना चाहिए ताकि वह संविधान के प्रावधानों के अनुरूप अनु.जा. /अनु.ज.जा. के हितों की रक्षा कर सके।

अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लोग और उनकी वित्तीय स्थिति इतनी अच्छी नहीं है कि वे इन मुकदमों को लड़ सकें और प्रख्यात अधिवक्ताओं की फीस वहन कर सकें जिनकी फीस अत्यधिक है और उनकी पहुंच से बाहर है जो प्रतिदिन प्रत्येक बार प्रस्तुत होने के लिए फीस 10,000 रूपए से 1,00,000 रूपए तक है। सर्वोत्तम विधिक प्रतिभाओं की सेवाओं के अभाव में दलितों को न्याय नहीं मिल पाता है। समिति पुरजोर सिफारिश करती है कि जब कभी भी अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के लिए लाभकारी आरक्षण सिद्धान्तों को चुनौती दी जाए तो उच्चतम न्यायालय/उच्च न्यायालय में मामलों का प्रतिवाद करने के लिए सुनवाई के प्रत्येक चरण में महान्यायवादी, महाधिवक्ता या प्रख्यात निजी वकीलों की सेवाएं ली जानी चाहिए।

अतः समिति सिफारिश करती है कि जब कभी माननीय उच्चतम न्यायालय के किसी निर्णय के कारण अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के विद्यमान आरक्षण नियमों में संशोधन करना पड़े जिसके परिणामस्वरूप उन्हें प्राप्त प्रसुविधाएं वापस लेनी पड़ें तो संबंधित अधिकारी के ये कर्त्तव्य होने चाहिए।

1. निर्णय के बारे में राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग की राय जानने के लिए आयोग से परामर्श करें,

2. मंत्री/मंत्रिमंडल को स्पष्टतः बतायें कि निर्णय अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों को प्राप्त सेवा प्रसुविधाओं को समाप्त करता है, और

3. मंत्रिमण्डल को सुझाव दे कि क्या निर्णय के प्रभाव को संविधान में संशोधन द्वारा निष्प्रभावी किया जा सकता है।

यह देखा गया है कि न्यायालय द्वारा निर्धारित 50 प्रतिशत सीमा का उल्लंघन किए बिना आरक्षण हेतु आवश्यक पदों की संख्या प्राप्त करने के लिए आरक्षित श्रेणियों के लिए रोस्टर के

अंत में स्क्वीजिंग की गई है। रोस्टर तैयार करते समय संवर्ग प्राधिकारियों को चाहिए कि वे इसी तरह रोस्टर के अन्तिम बिन्दुओं को स्क्वीज करें। परन्तु ऐसा वहां नहीं किया जाना चाहिए जहां इससे 50 प्रतिशत की सीमा नियम का उल्लंघन होता हो। समिति का मत है कि उपरोक्त निर्देश बहुत अस्पष्ट है और उसे सामान्य बुद्धि वाला व्यक्ति नहीं समझ सकता है। फिर इन निर्देशों का अर्थ और उनकी संभावना क्या है ? इसका शब्दकोष में अर्थ 'दबाना', 'निचोड़ना', 'बल प्रयोग करना' अर्थात् 'निचोड़कर कम करना' है। शब्दकोष में दिए गए उपरोक्त अर्थ के आधार पर समिति इन निर्देशों का अर्थ एवं संभावना समझने में असमर्थ है।

समिति चिंता के साथ नोट करती है इस रोस्टर में केवल एक पद को रखकर अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण 15 प्रतिशत से कम करके 7.5 प्रतिशत कर दिया गया है। इसी प्रकार अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण 27 प्रतिशत से कम करके 23.76 प्रतिशत कर दिया गया है जिससे गैर–आरक्षित श्रेणियों के लिए दो और पद सुनिश्चित किये गये है। अनुसूचित जातियों के लिए 14 चक्रानुक्रम में आरक्षण पूर्ण संख्या अर्थात् 2 बनती है। अतः आरक्षण नियमों को लागू किए जाने के कारण यह कमी समझ में नहीं आ सकती है। समिति का यह विचार है आरक्षण की गुंजाइश कम करने तथा आरक्षण प्रणाली को इतना जटिल बनाने के लिए रोस्टरों का प्रचालन बहुत कठिन हो जाए, यह बाजीगरी की गई है। समिति यह पहले ही कह चुकी है कि 14 चक्रानुक्रम रोस्टर को इस प्रकार से तैयार किया जा सकता था कि आरक्षण के 50 प्रतिशत की ऊपरी सीमा का उल्लंघन किए बिना आरक्षण तथा गैर आरक्षण प्वाइंट तैयार हो जाते।

यह आदर्श रोस्टर इस प्रकार होता :

1. अन्य समुदाय
2. अनुसूचित जाति
3. अन्य समुदाय
4. अन्य पिछड़ा वर्ग
5. अन्य समुदाय
6. अन्य पिछड़ा वर्ग
7. अन्य समुदाय
8. अन्य पिछड़ा वर्ग
9. अन्य समुदाय

10. अनुसूचित जाति

11. अन्य समुदाय

12. अन्य पिछड़ा वर्ग

यह चक्रानुक्रम आरक्षण एवं गैर आरक्षण प्वाइंटो के बीच अधिक तार्किक एवं संतुलित है। अतः समिति सिफारिश करती है कि सरकार को तत्काल चक्रानुक्रम रोस्टर संशोधित कर तथा विशेषकर अनुसूचित जातियों के लिए निर्धारित आरक्षण को बहाल करे जिसे अफसरशाही ने कम कर दिया है तथा रोस्टर प्रणाली को सरल तथा उपभोक्ता अनुकूल बनाए। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि आरक्षित पदों की पर्याप्त संख्या लगभग प्रत्येक विभाग में सभी श्रेणियों में रिक्त पड़ी हुई है, समिति का विचार है कि 50 प्रतिशत की इस सीमा ने सेवाओं में अ.जा. और अ.ज. जा. के प्रवेश को प्रतिबंधित कर दिया है, जिसके कारण रिक्तियों का यह बैकलॉग पूरा नहीं किया जा सका। तथापि समिति नोट करती है कि संविधान संशोधन के अनुसरण में सरकार ने संख्या 36012/15/97/स्था. (आर.) खंड दो दिनांक 20.7.2000 द्वारा 50 प्रतिशत की इस सीमा को दूर करने हेतु आवश्यक निर्देश जारी किए है। समिति अनुरोध करती है कि इन निर्देशों का अक्षरशः कार्यान्वयन किया जाए। समिति पाती है कि संवैधानिक रूप से स्वीकृत किन्तु उच्चतम न्यायालय के बार–बार और अनावश्यक हस्तक्षेप के कारण सेवाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण हास्यपद बन गया है। अतः समिति सिफारिश करती है कि संविधान में आवश्यक संशोधन किये जायें, तथा ताकि आरक्षण अधिनियम बनाया जाये और उसे संविधान की नौवीं अनुसूची में रखा जाये, ताकि न्यायिक हस्तक्षेप से बचा जा सके।

अनुसूचित जातियों/जनजातियों के कल्याण के लिए गठित कारिया मुण्डा संसदीय समिति की रिपोर्ट से यह स्थापित है कि कार्यपालिका में बैठे उच्चवर्ग विशेषकर ब्राह्मण अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का आरक्षित कोटा कभी पूरा नहीं भरा जाये इसके लिए कटिबद्ध हैं आरक्षण को पूरा करने के लिए सत्ता में बैठे राजनैतिक नेतृत्व की वे बिल्कुल भी परवाह नहीं करते हैं यदि उनपर किसी प्रकार का दबाव पड़ता है तो भ्रमित कर आरक्षण के मामलों को ठंडे बस्ते में डाल देते हैं या फिर न्यायपालिका में उक्त मुद्दे को ले जाते हैं न्यायपालिका में पैरवी की पुख्ता व्यवस्था नहीं करते हैं पूरा रेकॉर्ड पेश नहीं करते हैं और न्यायालय से अच्छी पैरवी व पर्याप्त रेकॉर्ड के अभाव में आरक्षण के विपरीत निर्णय आने पर उन्हें आरक्षण को लागू नहीं करने का बहाना मिल जाता है, उच्च व शीर्ष न्यायालयों में उच्च वर्ग का एक छत्र अधिकार होने के कारण आरक्षित वर्ग को किसी प्रकार की राहत भी नहीं मिल पाती है। 1995 में आर. के. सब्बरवाल बनाम पंजाब राज्य के प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय ने पदोन्नति में रोस्टर इस प्रकार का बना दिया है कि उच्च पदों पर आरक्षित वर्ग का अधिकारी पहुँच ही नहीं पाये। हमारे

जनप्रतिनिधियों एवं आरक्षण के जरिये सरकारी सेवा में प्रवेश पा चुके आरक्षित वर्ग के अधिकारियों ने भी इस बारे में कोई दबाव नहीं बनाया। कारिया मुण्डर संसदीय समिति की रिपोर्ट पर संसद में बहस के लिए आरक्षित वर्ग के सांसदों ने कोई दबाव नहीं बनाया। दलीय अनुशासन के भय ने उन्हें ऐसा साहस दिखाने से रोका जिन वर्गों के हित साधन के लिए राजनैतिक आरक्षण की व्यवस्था की गई थी उनके हितों को भूल गये, इसमें उनके स्वयं के भी हित निहित थे पूना पेक्ट ने उन्हे आरक्षित वर्ग के प्रति लापरवाह बना दिया। बाबा साहब का पूना पेक्ट के बारे में यह सोच सही निकली कि आरक्षित वर्ग के प्रतिनिधि उच्च वर्ग के पिछलग्गू व औजार ही साबित होगें। कांसीराम जी ने इसलिए ही आजादी के बाद के युग को चमचा युग की संज्ञा दी है।

बाबा साहब को पढ़ लिखकर सरकारी नौकरी में आने वाले आरक्षित वर्ग के अधिकारियों से बड़ी आशाएं थी उनको विश्वास था कि सरकारी सेवा में आने के उपरान्त ये कर्मचारी/अधिकारी आर्थिक सम्बल मिल जाने से सामाजिक व सांस्कृति परिवर्तन के लिए संघर्ष कर सदियों से शोषित व पीड़ित वर्ग को आत्मसम्मान से जीने की राह दिखायेंगे उनका नेतृत्व कर ब्राह्मणवाद द्वारा पोषित व पल्लवित सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक गैर बराबरी व अन्याय से लड़ने के लिए सक्षम नेतृत्व देंगे। इसी आशा एवं विश्वास पर उन्होंने सन् 1954 में यह घोषणा की थी कि यदि अनुसूचित जाति में 10 वकील 20 डॉक्टर व 30 इंजीनियर भी पैदा हो गये तो अनुसूचित जाति/जनजाति के आम लोगों की धर्म आधारित सामाजिक, सांस्कृतिक व आर्थिक गुलामी से मुक्ति की राह आसान हो जायेगी लेकिन दो वर्ष के अन्दर ही पढ़े लिखकर सरकारी सेवा के उच्च पदों पर आरक्षण के कारण आये अधिकारियों की बदली जीवन शैली व उनकी समाज के प्रति बेरूखी को भांपकर 18 मार्च, 1956 को आगरा की एक आमसभा में यहां तक कह दिया कि उनको पढ़े लिखे लोगों ने धोखा दिया, उनके ये पीड़ादायक विचार आकस्मिक नहीं थे बल्कि दूरगामी परिणाम के परिचायक थे। बाबा साहब के परिनिर्वाण के उपरान्त आरक्षण के कारण अनुसूचित जाति/जनजाति के अधिकारियों की संख्या लाखों में पहुंच गई लेकिन आगामी 25–26 साल तक बाबा साहब का समाज परिवर्तन का मिशन जहां वे छोड़कर गये थे उससे भी नीचे फिसलता चला गया।

अम्बेड़करवादी आन्दोलन की विफलता के कारण बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्थापित सभी संगठनों में विभाजन–विखण्डन हो गया है। राजनैतिक रूप से भारतीय रिपब्लिकन पार्टी (आर.पी.आई.) आपस में लड़ने वाले लगभग एक दर्जन विभक्त अलग–अलग गुटों में हो गई। दलित पैंथर्स आया और आर.पी.आई.से भी अधिक तेजी से बिखर गया। 1952 से 1967 तक चाहे शेड्यूल्ड कास्ट्स फैडरेशन हो अथवा भारतीय रिपब्लिकन पार्टी महाराष्ट्र और पंजाब दोनों जगह एक राजनैतिक दल के रूप में मान्यता प्राप्त थे। उनको आगे बढ़ाकर अखिल भारतीय स्तर की पार्टी बनाने के बजाय उसे संकुचित बना दिया गया।

कांसीराम जी ने इस दयनीय स्थिति को भांपकर सरकारी सेवा से त्याग–पत्र देकर अम्बेड़करवादी आन्दोलन को आगे बढ़ाने का संकल्प लिया। शुरू–शुरू में उन्होंने राजनैतिक आन्दोलन में हाथ डालना उचित नहीं समझा उन्होंने अपना कार्यक्षेत्र पढ़ लिखकर सरकारी नौकरी में आय अनुसुचित जाति/जनजाति के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को बाबा साहब के मिशन से जोड़ने में लगाया आरक्षण के कारण सरकारी पदों पर बैठा यह वर्ग एक अभिजात्य वर्ग में बदल गया था जिसका लगाव उनके अपने वर्ग से ब्राह्मणों ने काट दिया था।

अभिजात्य व्यक्ति को विमुख करता है

कांसीराम जी के अनुसार शूद्रों और अतिशूद्रों को सदियों से प्रताड़ित, शोषित और बेइज्जत किया जाता रहा है। अपनी पृथक पहचान और कुछ अधिकारों को प्राप्त करने के पश्चात् अनुसूचित जातियों/जनजातियों ने बड़ी संख्या में शिक्षा प्राप्त की। ये शिक्षित लोग बड़ी संख्या में सरकारी सेवा में पहुंच गए। आज इन शिक्षित नौकरीयाफ्ता लोगों की विभिन्न प्रकार की सरकारी सेवाओं में तादाद लगभग 20 लाख है। कुछ शिक्षित और अर्द्धशिक्षित लोगों को राजनैतिक दलों ने अनुसूचित जातियों और जनजातियां के वोट बैंक में अपनी पकड़ मजबूत करने के लिए अपना लिया और इस प्रकार पीड़ित–दलित भारतीयों के बीच अभिजात्य वर्ग उभरा।

इस अभिजात्य वर्ग की प्रकृति को देखते हुए कांसीराम जी ने इसे पीड़ित अभिजात्य की संज्ञा से अभिहीत किया है। किसी अभिजात्य व्यक्ति को शासक अभिजात्य द्वारा अथवा विरोधी अभिजात्य द्वारा समाहित–अंगीकृत नहीं किया जाता है बल्कि इनके द्वारा उसका चमचों के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। ऐसे पीड़ित अभिजात्यों के राजनैतिक भाग को मात्र चमचे के रूप में ही जाना जाता है किन्तु उसके नौकरशाही वाले भाग को हम चमचों का चमचा मानते हैं।

कांसीराम जी की रूचि इस बात पर जोर देने की रही कि पीड़ित अभिजात्यों की ये दोनों किस्में पीड़ित भारतीयों के जनसाधारण समुदाय से बड़ी तेजी से कटती जा रही थी। ये पीड़ित अभिजात्य सकारात्मक–विभेदीकरण (अर्थात् आरक्षण) की अवधारणा की पैदाइश है। इसीलिए ऐसे अभिजात्य केवल अपने निजी अभिजात्य–हितों की रक्षा के लिए 'सकारात्मक–विभेद' से जुड़े मामलों पर ज्यादा जोर देने में व्यस्त रहते हैं। 'सकारात्मक– विभेद' में निहित स्वार्थ विकसित हो चुका है और जाति व्यवस्था की समाप्ति का संघर्ष पीड़ित अभिजात्यों को अधिक से अधिक 'कन्सेशन' की मांगों में विकृत हो गया। इस किस्म के चमचों को पैदा करने वालों को अर्थात् शासक जातियों को इसमें आम लोगों से उनके कटाव को प्रोत्साहित करना अपने हित में लगता है क्योंकि अनुसूचित जातियों/जनजातियों के स्तर में कोई वास्तविक बदलाव मौजूदा यथास्थिति को भंग कर देगा इस प्रकार सकारात्मक विभेद एक ऐसा खेल बन गया है

जिसे शासक जातियां और उनके चमचे दोनों ही खेल रहे हैं जहां पिछड़ापन बनाये रखना प्रत्येक पक्ष का स्वार्थ बन गया है।

पीड़ित अभिजात्य के विमुखीकरण अर्थात् कटाव के इस खेल में पीड़ित जातियों के बीच सभी पार्टियों ने अपने–अपने चमचे कायम कर रखे हैं। इस छोटे से समूह को कायम किए जाने से पीड़ित जातियों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। पिछले 35 वर्षों से जहां एक ओर अनुसूचित जाति/जनजाति के आम लोगों की हालत में बाकी सामान्य लोगों के मुकाबले बड़ी तेजी से गिरावट आई है वहीं दूसरी ओर चमचों (पीड़ित अभिजात्यों) की दशा में उत्तरोत्तर और वह भी देश के शेष लोगों की सामान्य दशा के मुकाबले तीव्रतर गति से प्रगति हुई है। इस प्रकार सवर्ण जातीय हिन्दूओं ने पीड़ित अभिजात्यों को उनके जनसाधारण भाइयों से अलग करने के खेल में अपना निजी स्वार्थ विकसित कर लिया है। पीड़ित अभिजात्यों के इस विमुखीकरण (कटाव) ने अनुसूचित जाति/जनजाति तथा अन्य पीड़ित भारतीयों के आम लोगों को बंधुआ गुलामों के स्तर पर सीमित कर डाला है। इसमें से 90 प्रतिशत लोग सम्मानपूर्ण जीवन जीने के लिए तरस रहे हैं। उनकी जीवन–स्थितियों में व्यापक स्तर पर सामान्य गिरावट के अलावा उनके ऊपर होने वाले अत्याचारों के मामले भी दिन–ब–दिन और साल–दर–साल बढ़ते ही जा रहे हैं।

अपने अस्तित्व के लिए ग्रामीण भारत में दुःखी भारतीयों का बहुत बड़ा भाग बुरी तरह भू–स्वामियों पर निर्भर है। उनके लिए यह संभव नहीं है कि वे उत्पीड़न का सामना कर सकें क्योंकि उनके पास भूखमरी ही एकमात्र विकल्प है। थोड़ी सी भी आजादी अख्तियार करना उनको बेरोजगारी में धकेल सकती है जिससे वे बहुत भयभीत रहते हैं। जहां कहीं भी मजदूर संगठित हुए हैं वहां भू–स्वामियों ने उनकी झोंपड़ियां जलाकर मार डालने के लिए भीषण और जघन्यतम अत्याचार किए। शोषणकारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था के बदलाव से ही उनकी मुक्ति संभव है और ऐसे बदलाव में शासक जातियों की एवं सरकार की कोई रूचि नहीं है। स्वयं परेशान ग्रामीणजन यह परिवर्तन कर नहीं सकते हैं और जो परेशान अभिजात्य लोग कुछ करने की स्थिति में हैं भी, वे आम आदमी के विशाल समुदाय से कट चुके हैं।

शहरी क्षेत्रों में मलिन बस्तियां बढ़ रही हैं और फुटपाथ पर रहने वाले भी बढ़ रहे हैं। वहां कौन लोग रहते हैं ? अनुसूचित जातियों/जनजातियां और पिछड़े वर्ग के लोगों का बहुगुणित होता यह जन–सैलाब गांवों के सामन्तों भू–स्वामियों द्वारा परेशान किए जाने पर शहरी मलिन बस्तियों के स्वामियों की गोद में जा गिरता है। वैश्यालयों में भी इन समुदायों की वैश्याओं की भीड़ होती जा रही है, जो न केवल सड़कों पर बल्कि मुंबई जैसे शहरों के रेलमार्गों पर खुले रूप में आ गई हैं। किन्तु इन सबसे चमचे (पीड़ित अभिजात्य) बिल्कुल लापरवाह और बेफिक्र बने हुए हैं।

कांसीराम जी ने अम्बेडकरवादी विचारकों के सहयोग से इन पढ़े लिखे अभिजात्यों में से मझौले व छोटे कर्मचारियों को साथ लेकर बामसेफ की स्थापना की छोटे व मझौले अधिकारी कर्मचारी उच्च वर्ग के भेदभाव व अत्याचार से अधिक पीड़ित थे वे मजबूत संगठन का सहारा चाहते थे इसलिए ऐसे कर्मचारी आत्म सम्मान व सामाजिक सुरक्षा के लिए बामसेफ से जुड़े जिसका उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। इन कर्मचारियों ने तन–मन–धन से कांसीराम जी के आन्दोलन को सहयोग प्रदान कर व्यापक आधार प्रदान किया एक बड़ा दबाव समूह देश में बाबा साहब के मिशन को पूरा करने के लिए उभरा लेकिन कांसीराम जी द्वारा राजनैतिक दल (बहुजन समाज पार्टी) के गठन के कारण कुछ कर्मठ लोगों ने अपने आपको अलग कर लिया कांसीराम जी का मानना था कि सत्ता की चाबी से सभी समस्याओं का निदान संभव है लेकिन बिना धार्मिक व सामाजिक बदलाव के दलित मुक्ति संभव नहीं है, यह बाबा साहब का मानना था इसलिए अलग हुए विचारकों ने बामसेफ को समाज परिवर्तन की मुहिम हेतु आगे बढ़ाया और अपना अभियान जारी रखा। लेकिन बामसेफ भी कई टुकड़ों में विभाजित हो जाने से कथा–वाचकों में बदल गया और स्वयंभू अध्यक्षों ने इसे अपनी आजिविका से जोड़ दिया।

उच्च वर्ग विशेषकर ब्राह्मण बनिया गठजोड़ सरकारी सेवा के आरक्षण को समाप्त करने हेतु हर स्तर पर प्रयासरत है। इस मुहिम में मिडिया उनके साथ है सरकारी सेवा के आरक्षण को 1950 में ही संविधान लागू होने के एक साल के अन्दर अवसर की समानता के उल्लंघन का बहाना बनाकर मद्रास के एक ब्राह्मण ने मद्रास हाईकोर्ट में याचिका दायर कर दी थी। मद्रास हाईकोर्ट ने सन् 1951 में अनुसूचित जाति के सरकारी सेवामें प्रवेश के आरक्षण को इस आधार पर अवैध घोषित कर दिया था कि इससे अवसर की समानता के अधिकार का हनन होता है जिसे निष्प्रभावी करने के लिए अनुसूचित जाति/जनजाति के सरकारी सेवा के आरक्षण बाबत् केन्द्र सरकार को दखल देना पड़ा। उस समय बाबा साहब हमारे बीच मौजूद थे इसलिए उनके द्वारा उठाये गये प्रभावी कदम के कारण न्यायपालिका ने सन् 1990 तक आरक्षण बाबत् कोई विपरीत निर्णय नहीं दिया लेकिन मण्डल के बाद शीर्ष व उच्च न्यायालयों मे बैठे उच्च वर्ग के न्यायाधीश समानता मंच को अपरोक्ष सहयोग प्रदान कर रहे हैं। कार्यपालिका भी इस मुहिम में पीछे नहीं है।

आरक्षण के क्रियान्वयन में कार्यपालिका की कार गुजारी :–

मेरे विचार में उच्च वर्ग से सराबोर कार्यपालिका ने आरक्षण नीति के क्रियान्वयन में लगातार न केवल अड़चन डाली है बल्कि आरक्षण नीति को विफल करने का भरसक प्रयत्न भी किया है।

आरक्षण नीति को फैल करने के लिए सन् 2000 के बाद से चार प्रकार की व्यूह रचना जारी है। अब कर्मचारियों को प्रारम्भिक स्टेज पर ही अनुबंध पर लिया जा रहा है, जिनमें आरक्षण

का प्रावधान नहीं मानकर उक्त पद सामान्य वर्ग से ही भरे जा रहें हैं। संविधान में सरकारी सेवाओं में आरक्षण का प्रावधान रखा है, चाहे सेवा अनुबंध पर हो या अस्थायी अथवा स्थाई अनु. जाति व जनजाति के व्यक्ति को सरकारी सेवा में लिया जाना चाहिए लेकिन एक साजिश के तहत ही अनुबंध से सामान्य वर्ग के लोगों की भर्ती का सिलसिला शुरू किया है ऐसे अनुबंध पर लिए जाने वाले कर्मचारी न्यायालय के माध्यम से अथवा राजनैतिक नेतृत्व पर दबाव डालकर नियमित अथवा स्थाई सेवा के पात्र बन जाएंगे। इस नीति से आरक्षण स्वतः ही समाप्त हो जायेगा।

दूसरी प्रकार की व्यूह रचना के तहत उक्त पदों पर सेवानिवृति की स्टेज पर ही सामान्य वर्ग के अधिकारियों, कर्मचारियों का कार्यकाल बढ़ाकर अथवा पुनः नियुक्ति देकर चलाया जा रहा है ताकि आरक्षित वर्ग का अधिकारी/कर्मचारी शीर्ष पद पर या उच्च पद पर पदोन्नति के जरिये नहीं पहुंच सके। आर्थिक तंगी का बहाना बनाकर कार्यरत कर्मचारियों की सेवानिवृति की आयु बढ़ाई जा रही है क्योंकि वर्तमान में कार्यरत सभी स्तरों में 80 प्रतिशत कर्मचारी उच्च वर्ग के ही हैं तथा आर्थिक तंगी के बहाने सरकारी पदों को भी समाप्त किया जा रहा है।

तृतीय व्यूह रचना के तहत ब्राह्मणों ने अखिल भारतीय स्तर पर अन्य उच्च वर्गों को साथ लेकर समानता मंच का गठन किया है, जिसका उद्देश्य आरक्षण को जातीय आधार के स्थान पर आर्थिक आधार पर करने व जातीय आरक्षण की वजह से योग्यता का हनन होने का दुष्प्रचार करना शुरू कर दिया है, उन्होने उच्च वर्ग से सराबोर न्यायपालिका का इस्तेमाल आरक्षित वर्ग को आरक्षण के लाभ से वंचित करने के लिए विस्तृत रूप से प्रारम्भ भी कर दिया है, प्रचार माध्यमों के जरिये आरक्षण नीति के विरूद्ध लोगों को बरगलाने का प्रयास अनवरत रूप से जारी है।

उच्च पदों पर अनुसूचित जाति/जनजाति के अधिकारी/कर्मचारी नहीं पहुँच पा रहे थे इसलिए पदौन्नति में भी आरक्षण की व्यवस्था की गई। पदौन्नति के लिए अच्छे सेवा अभिलेख का होना अनिवार्य है प्रत्येक अधिकारी/कर्मचारी का कार्य मूल्यांकन प्रतिवेदन प्रशासनिक व कार्यालयध्यक्ष, विभागाध्यक्ष को गोपनीय रूप से अग्रेसित करता है, उच्च पदों पर उच्च वर्ग का एकाधिकार होने से आरक्षित वर्ग के अधिकारी/कर्मचारी के कार्य का मूल्यांकन पूर्वाग्रह के कारण निष्पक्ष व सही तरीके से नहीं किया जाता है विपरीत टिप्पणियां अंकित कर दी ती हैं जिसके कारण पदौन्नति का लाभ अनु.जाति/जनजाति के अधिकारी/ कर्मचारी को नहीं मिल पाता है सेवा अभिलेख खराब कर दिए जाने के कारण बहुत से अनुसूचित जाति/जनजाति के अधिकारी/कर्मचारी अनिवार्य सेवानिवृति के शिकार ओर हो रहे हैं इस प्रकार पदौन्नति में आरक्षण का प्रावधान जातीय कटुता के कारण जबरन सेवा समाप्ति का कारगर हथियार साबित हो रहा है।

हिन्दू समाज व्यवस्था के फलस्वरूप सामाजिक व शैक्षिक रूप से वंचित वर्ग को विगत अन्याय, पक्षपात, शोषण व उत्पीड़न को देखते हुए भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त आरक्षण नगण्य राहत है, जिसके मार्ग में अवरोध प्रतिक्रान्ति को खुला निमंत्रण देने जैसा है।

संविधान निर्माताओं को कतिपय वंचित वर्गों के लिए सरकारी सेवा व पदों में आरक्षण क्यों रखना पड़ा ? ओर क्या वे कारण समाप्त हो गये ? इस पर सरकार द्वारा गंभीर मनन व चिन्तन करना आवश्यक है, अनु.जाति, जनजाति का आरक्षित कोटा अभी तक भी पूरा नहीं भरा गया है, राजस्थान में सन् 2005 में ही 83 हजार से अधिक पदों का बैकलॉग था। केन्द्र सरकार व अन्य राज्यों की स्थिति इससे भिन्न नहीं है। आरक्षण नीति की प्रभावी क्रियान्विति का कभी भी गंभीर प्रयास नहीं किया गया।

हमारे जन प्रतिनिधियों ने संसद अथवा राज्यों की विधानसभाओं में सरकारी सेवा के आरक्षण की समस्या को कभी भी प्रभावी रूप से उठाने का प्रयास नहीं किया। सरकारी पदों के आरक्षण के कारण लाखों की संख्या में इन वर्गों के कर्मचारी/अधिकारी सेवारत हैं प्रत्येक विभाग में सगठन भी बना रखे हैं लेकिन उन्होंने कभी भी संगठित प्रयास नहीं किया केवल अपनी सुविधानुसार पदस्थापन की जुगाड़ तक ही उनके प्रयास रहे हैं उनका अपने समाज से भी कटाव है अनुसूचित जाति/जनजाति के जनप्रतिनिधियों से भी स्वार्थवश ही सम्पर्क करते हैं बाबा साहब को इन बेहद स्वार्थी व मतलब परस्त कार्मिकों से अपने जीवन काल में ही गहरी निराशा हो गई थी।

****

5.

राजनैतिक आरक्षण व आरक्षित वर्ग की त्रासदी

1. <u>राजनैतिक आरक्षण</u> : भारतीय संविधान के अनुच्छेद 330 एवं 332 के जरिये लोकसभा एवं राज्यों की विधानसभाओं में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए इनकी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की है जो निम्न प्रकार है :–

भाग 16

कुछ वर्गों के संबंध में विशेष उपबन्ध

330. लोक सभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण :– लोक सभा में –

(क) अनुसूचित जातियों के लिए,

[1]((ख) असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों को छोड़कर अन्य अनुसूचित जनजातियों के लिए, और)

(ग) असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों के लिए, स्थान आरक्षित रहेंगें।

2. खण्ड (1) के अधीन किसी राज्य (या संघ राज्यक्षेत्र) में अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, लोक सभा में उस राज्य (या संघ राज्यक्षेत्र) को आवंटित स्थानों की कुल यथाशक्य वही होगा जो, यथास्थिति, उस राज्य (या संघ राज्यक्षेत्र) की अनुसूचित जातियों की अथवा उस राज्य (या संघ राज्यक्षेत्र) की या उस राज्य (या संघ राज्यक्षेत्र) के भाग की अनुसूचित जनजातियों की, जिनके संबंध में स्थान इस प्रकार आरक्षित हैं, जनसंख्या का अनुपात उस राज्य [2](या संघ राज्यक्षेत्र) की कुल जनसंख्या से है।

(3) खण्ड (2) में किसी बात के होते हुए भी, लोक सभा में असम में स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, उस राज्य को आवंटित स्थानों की कुल संख्या के उस अनुपात से कम नहीं होगा जो उक्त स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की कुल जनसंख्या से है।)

[4](स्पष्टीकरण – इस अनुच्छेद में और अनुच्छेद 332 में, ''जनसंख्या'' पद से ऐसी अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना में अभिनिश्चित की गई जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो गए हैं :

परन्तु इस स्पष्टीकरण में अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना के प्रति जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो गए हैं, निर्देश का, जब तक सन् (1996) के पश्चात् की गई पहली जनगणना के सुसंगत आंकड़े प्रकाशित नहीं हो जाते हैं, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह (2001) की जनगणना के प्रति निर्देश हैं।)

332. राज्यों की विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण – (1.) (* * *) प्रत्येक राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जातियों के लिए और (असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों को छोड़कर) अन्य अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे।

1. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 द्वारा (21.7.1972 से) कुछ शब्दों का लोप किया गया ।

संविधान (नब्बेवां संशोधन) अधिनियम, 2003 की धारा 2 द्वारा (28.9.2003 से) अन्तःस्थापित

2. असम राज्य की विधानसभा में स्वशासी जिलों के लिए भी स्थान आरक्षित रहेंगे।

3. खण्ड (1) के अधीन किसी राज्य की विधानसभा में अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, उस विधान सभा में स्थानों की कुल संख्या से यथाशक्य वही होगा जो, यथास्थिति, उस राज्य की अनुसूचित जातियों की अथवा उस राज्य की या उस राज्य के भाग की अनुसूचित जनजातियों की, जिनके संबंध में स्थान इस प्रकार आरक्षित हैं, जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की कुल जनसंख्या से है।

((3–क) खण्ड (3) में किसी बात के होते हुए भी, सन् (1962) के पश्चात् की गई पहली जनगणना के आधार पर, अरूणांचल प्रदेश, मेघालय, मिजोरम और नागालैंड राज्यों की विधानसभाओं में स्थानों की संख्या के, अनुच्छेद 170 के अधीन, पुनः समायोजन के प्रभावी होने तक, जो स्थान ऐसे किसी राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षत किए जाएंगे, वे –

(क) यदि संविधान (सत्तावनवां संशोधन) अधिनियम, 1987 के प्रवृत्त होने की तारीख को ऐसे राज्य की विद्यमान विधानसभा में (जिसे इस खण्ड में इसके पश्चात् विद्यमान विधानसभा कहा गया है) सभी स्थान अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों द्वारा धारित हैं तो, एक स्थान को छोड़कर सभी स्थान होंगे; और

(ख) किसी अन्य दशा में, उतने स्थान होंगे, जिनकी संख्या का अनुपात, स्थानों की कुल संख्या के उस अनुपात से कम नहीं होगा जो विद्यमान विधानसभा में अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की (उक्त तारीख को यथाविद्यमान) संख्या का अनुपात विद्यमान विधानसभा में स्थानों की कुल संख्या से है।)

((3–ख) खण्ड (3) में किसी बात के होते हुए भी, सन् (1962) के पश्चात की गई पहली जनगणना के आधार पर, त्रिपुरा राज्य की विधान सभा में स्थानों की संख्या के, अनुच्छेद 170 के अधीन, पुनः समायोजन के प्रभावी होने तक, जो स्थान उस विधान सभा में अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित किए जाएंगे वे उतने स्थान होंगे जिनकी संख्या का अनुपात, स्थानों की कुल संख्या के उस अनुपात से कम नहीं होगा जो विद्यमान विधान सभा में अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की, संविधान (बहत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1992 के प्रवृत्त होने की तारीख को यथाविद्यमान संख्या का अनुपात उक्त तारीख को उस विधानसभा में स्थानों की कुल संख्या से है।)

4. असम राज्य की विधान सभा में किसी स्वशासी जिले के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, उस विधान सभा में स्थानों की कुल संख्या के उस अनुपात से कम नहीं होगा जो उस जिले की जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की कुल जनसंख्या से है :

5. (* * *) असम के किसी स्वशासी जिले के लिए आरक्षित स्थानों के निर्वाचन–क्षेत्रों में उस जिले के बाहर का कोई क्षेत्र समाविष्ट नहीं होगा।

6. कोई व्यक्ति जो असम राज्य के किसी स्वशासी जिले की अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं है, उस राज्य की विधान सभा के लिए (* * *) उस जिले के किसी निर्वाचन–क्षेत्र से निर्वाचित होने का पात्र नहीं होगा :

(प्रतिबंध यह है कि असम राज्य की* विधान सभा के निर्वाचन के लिए, बोडोलैण्ड प्रादेशिक जिला क्षेत्र में सम्मिलित निर्वाचन क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों और गैर अनुसूचित जनजातियों का प्रतिनिधित्व, इस प्रकार अधिसूचित, और बोडोलैण्ड प्रादेशिक जिला क्षेत्र के गठन पूर्व, बनाए रखा जाएगा।)

पूना पेक्ट के दुष्परिणाम :

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 330 एवं 332 में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति को विधायिका में इनकी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है लेकिन पूना पेक्ट के समझौते के अनुसार अनुसूचित जाति व जनजाति के लिए विधायिका की आरक्षित सीटों पर मताधिकार केवल अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के मतदाताओं को ही नहीं होगा, बल्कि आरक्षित क्षेत्र में निवास करने वाले उच्चवर्ग व अन्य वर्गों के मतदाता भी आरक्षित वर्ग के उम्मीदवार को अपना मत देगें। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप आरक्षित सीट पर अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति का वही उम्मीदवार जीत कर जाता है जिसे हिन्दू समाज व्यवस्था में सबसे ऊँचे पायदान पर बैठा उच्च वर्ग चाहता है।

बाबा साहब ने पूना पेक्ट (1932) के पूर्व श्री गांधी एवं कांग्रेस द्वारा बनाए गये दबाव एवं प्रचार माध्यमों के जरिए उत्पन्न की गई विध्वंशकारी परिस्थिति के वशीभूत एवं अपने लोगों के जानमाल की भारी तबाही की आशंका को ध्यान में रखते हुए पूना पेक्ट पर 24.9.1932 को बेमन से हस्ताक्षर तो कर दिए लेकिन इस बात का उन्हें जीवन पर्यन्त मलाल रहा कि कम्यूनल अवार्ड से दलितों को मिलने वाले सुदृढ़ व जवाबदेह राजनैतिक नेतृत्व के अवसर को खो दिया गया जिसका खुलासा उन्होंने अपनी पुस्तकों 1. ''कांग्रेस एवं महात्मा गांधी ने अछूतों के लिए क्या किया'' एवं 2. ''राज्य एवं अल्पसंख्यक'' में किया है जिनका यहाँ उल्लेख करना प्रासंगिक है।

पूना–पैक्ट धोखाधड़ी और विसंगतियों से भरा पड़ा है। इसे महात्मा गांधी के दबावपूर्ण अनशन और उस समय के उच्चवर्गीय हिन्दुओं द्वारा यह आश्वासन, कि अनुसूचित जातियों के चुनाव में सवर्ण हिन्दू लोग किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप नहीं करेंगे, दिए जाने पर मंजूर किया गया था।''

विगत 66 वर्षीय लोकतंत्रीय इतिहास में बाबा साहब की भविष्यवाणी सही सिद्ध हो रही है। उच्च वर्ग के हिन्दूओं ने पूना–पैक्ट को गांधी जी के जीवन की रक्षा के कारण बेमन से स्वीकार किया था इसलिए उन्होंने पूना पेक्ट के समय दिए गये इस वचन को कभी नहीं निभाया कि वे ''अनुसूचित जातियों के चुनाव में किसी प्रकार का कोई हस्तक्षेप नहीं करेंगे, वास्तव में उच्च वर्ग ने कांग्रेस पर एकाधिकार कर अनुसूचित जाति वर्ग से उन्हीं को समाज पर नेता बनाकर थोपा जो बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा को कुन्द कर सकें। कांग्रेस ने जगजीवन राम जी को बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के समानांतर राजनीति में उतारा था। वे बाबा साहब अम्बेडकर के विरोधी भी थे और गांधी–समर्थक भी। वे कांग्रेस में दलित राजनीतिक मामलों के प्रभारी माने जाते थे। जगजीवन राम जी ने कई अवसरों पर बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर की मुखर आलोचना ही नहीं की, वरन दलितों में उनके प्रभामंडल को समाप्त करने की कोशिशों में भी वे आगे रहते थे।

बाबा साहब ने इस षडयंत्र को समझ लिया था, इसलिए उन्होंने 1955 में (शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन) के नेताओं से कहा था कि अब समय आ गया है कि वे दलितों के लिए सुरक्षित सीटों को समाप्त करने की मांग करें। वे चुनावों में अपने अनुभवों से इस नतीजे पर पहुंचे थे कि दलितों के लिए सुरक्षित सीटों का उद्देश्य निरर्थक हो गया है। इसी समय उन्होंने एक नई राजनीतिक पार्टी की जरूरत महसूस की थी, जो कुछ समय बाद उन्होंने ''रिपब्लिक पार्टी ऑफ इंडिया'' नाम से गठित की। वे चाहते थे कि समानता व स्वतंत्रता के साथ–साथ सामाजिक गैर बराबरी व आर्थिक विषमता के निराकरण के लिए अन्य पिछड़ा वर्ग को भी साथ लिया जाये। डॉ. राम मनोहर लोहिया एवं श्री अशोक मेहता से भी सम्पर्क किया था जो समाजवादी विचाराधारा को आगे बढ़ा रहे थे। डॉ. लोहिया के दो सहयोगी विमल मेहरोत्रा और धर्मवीर गोस्वामी भी बाबा

साहब डॉ. अम्बेडकर से मिले थे। वे चाहते थे कि दलित फेडरेशन का विलय सोशलिस्ट पार्टी में हो जाये और बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर समस्त भारत को अपना नेतृत्व दें। लेकिन यह सपना पूरा नहीं हो सका और कुछ ही दिन बाद दिसंबर 1956 में ही छह तारीख को बाबा साहब डॉ. अम्बेड़कर का निधन हो गया। इसलिए डॉ. राम मनोहर लोहिया के राजनैतिक दल से रिपब्लिकन पार्टी का तालमेल नहीं बैठ पाया और राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक जनाधार का लाभ इस पार्टी को नहीं मिल सका। लेकिन भारतीय रिपब्लिकन पार्टी ने महाराष्ट्र, दिल्ली और उत्तर भारत में दलितों, पिछड़ों और अल्पसंख्यक समुदायों में अपना क्रांतिकारी जनाधार बनाया। एक वैकल्पिक दलित राजनीति का उदय हुआ। 1960 में ही इसने महाराष्ट्र में एक विशाल भूमि सत्याग्रह किया था जिसके कारण महाराष्ट्र सरकार को कई लाख एकड़ भूमि देने का निर्णय लेना पड़ा था। महाराष्ट्र में सफलता के बाद 1964 में पूरे देश में और खास तौर से उत्तर प्रदेश में रिपब्लिकन पार्टी ने भूमि सत्याग्रह किया, जो दो महीने तक चला। केंद्र सरकार ने सभी राज्य सरकारों को यह आदेश दिया कि वे राज्य की बेकार पड़ी भूमि भूमिहीन किसानों को दें। रिपब्लिकन पार्टी ने ही अपने आंदोलनों में भूमि के राष्ट्रीयकरण की मांग उठाई थी। रिपब्लिकन पार्टी के बढ़ते जनाधार को समाप्त करने के लिए कांग्रेस ने इसके बड़े नेताओं को पद का लालाच देकर तोड़ना शुरू कर दिया इससे पार्टी में फूट पड़ गई, इसके कई टुकड़ों में विभाजित हो जाने से यह न केवल महाराष्ट्र में कमजोर हुई वरन् उत्तर भारत में रिपब्लिकन पार्टी का जनाधार ही समाप्त हो गया। सशक्त एवं सर्वमान्य नेतृत्व के अभाव में यह बिखराव दलित आन्दोलन के लिए घातक सिद्ध हुआ और बाबा साहब के निधन के बाद 70 के दशक तक दलित समाज नेतृत्वविहीन सा हो गया।

कांसीराम एवं पिछड़े वर्ग का राजनैतिक समीकरण :–

कांसीराम जी ने सरकारी नौकरी से त्याग पत्र देकर बाबा साहब के समाज परिवर्तन के कार्य को आगे बढ़ाने के लिए कुछ कर्मठ व जागरूक अम्बेड़कर वादियों के सहयेाग से दलित, पिछड़े और अल्प संख्यक कर्मचारियों के फेडरेशन (वामसेफ) का गठन किया। कांसीराम जी रिपब्लिकन पार्टी से जुड़े हुए थे इसलिए दलित उनके पीछे भारी संख्या में लाभबद्ध हुए सन् 1980 आते–आते इसका देश में व्यापक असर दिखाई देने लगा। नई दिल्ली, चंडीगढ़ व नागपुर में वामसेफ के विशाल अधिवेशन हुए। उन्होंने हिन्दी में ''बहुजन संगठक एवं अंग्रेजी में अप्रेस्ड इण्डिया'' मासिक पत्र निकाले। दो लाख के लगभग कर्मचारियों को नियमित सदस्य बनाकर बाबा साहब के Pay back to society के सिद्धांत को अमली जामा पहनाया दलित कर्मचारियों ने आर्थिक संसाधन जुटाने में भरपूर मदद की। कांसीराम जी ने हिन्दी बेल्ट खासकर उत्तरप्रदेश, पंजाब व म0प्र0 को अपनी कर्मस्थली बनाया। कांसीराम जी ने दलित व पिछड़ों को बहुजन तथा उच्च वर्ण को मनुवाद के रूप में नई पहचान देकर नया ध्रुवीकरण बनाया। इस नये नामकरण

ने द्विज जातियों को अल्पसंख्यक करार देकर बहुजन समाज को सत्ता की चाबी का वास्तविक हकदार होने की मान्यता को बल प्रदान किया। राष्ट्रीय स्तर की सभी राजनैतिक पार्टियों का नेतृत्व उच्च वर्ग खासकर ब्राह्मणों के हाथों में होने से उन्हें उच्च वर्ग के हितों की पोषक व ब्राह्मणवाद की वाहक करार दिया।

बामसेफ कर्मचारियों का संगठन होने से जन आन्दोलन में सक्रिय हिस्सेदार नहीं बन सकता था इसलिए उन्होंने सन् 81 में डी.एस.4 (दलित समाज शोषित संघर्ष समिति) के जरिए जन आन्दोलन का धरातल तैयार किया जिसने आगे चलकर राजनैतिक संघर्ष के लिए वातावरण बनाया। समता और आत्मसम्मान के नारे के साथ डी.एस. 4 के बैनर तले कन्याकुमारी से कारगिल और कोहिमा से पोरबन्दर (गुजराज) तक साईकिल मार्च किया जो 100 दिन बाद दिल्ली में समाप्त हुआ। जहाँ कांसीराम जी ने लगभग 3 लाख लोगों के विशाल जनसमूह को सम्बोधित कर उच्च वर्ग की सत्ता को ललकारा। सन् 1982 में पूना–पैक्ट के 50 वर्ष पूरे होने पर सारे देश में धिक्कार रैली निकाली जिसको व्यापक समर्थन मिला।

कांसीराम जी ने सन् 1982 में हिरायणा विधानसभा व सन् 1983 में जम्मू कश्मीर में राज्य विधानसभा के चुनाव डी.एस.4 बैनर से लड़े, यद्यपि उक्त चुनावों में कांसीराम जी को कोई सफलता नहीं मिली लेकिन डी.एस.4 को मिले मत उत्साहवर्धक थे, इससे उत्साहित होकर सन् 1984 में बहुजन समाज पार्टी की स्थापना की, बामसेफ के अधिकतर संस्थापक सदस्यों ने कांसीराम जी के इस कदम का विरोध किया तथा कांसीराम जी को वामसेफ से निकाल दिया। कांसीराम जी ने मायावती के साथ मिलकर अलग वामसेफ का गठन कर लिया। इस कारण बाबा साहब के समाज परिवर्तन के कार्यक्रम को धक्का भी लगा।

ब.स.पा. को अपने प्रभाव वाले इलाकों में दलित समाज के उन हिस्सों का निर्विवाद समर्थन मिला जो आरक्षण और सरकारी नौकरियों के माध्यम से अपेक्षाकृत साधन संपन्न हो गये थे। कासीराम जी के प्रयास से ब.स.पा. ने पिछड़े वर्गों में अतिपिछड़ी जातियों का उल्लेखनीय समर्थन जीतने में कामयाबी हासिल की और मुसलमानों में भी उसके प्रति पर्याप्त आर्कषण देखा गया। सिर्फ बहुजन समाज के एक हिस्से आदिवासियों तक ब.स.पा. की पहुँच के प्रमाण अभी तक नहीं मिले हैं। कासीराम जी के प्रयास से ब.स.पा. के उभार ने दलित मतदाताओं को काँग्रेस के वोट बैंक की मातहत हैसियत से निकाल कर एक स्वतंत्र राजनीतिक शक्ति के रूप में स्थापित कर दिया। ब.स.पा. ने दलितों को यकीन दिलाया कि काँग्रेस उनका वोट तो लेती है, लेकिन बदले में उन्हें संगठन और सत्ता में आनुपातिक नुमाइंदगी नहीं देती।

अपने गठन के दस वर्ष के अंदर–अंदर ब.स.पा. ने उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी के साथ मिली–जुली सरकारी बनायी और फिर इस गठजोड़ को तोड़कर भारतीय जनता पार्टी की मदद से दो बार फिर सरकार बनाने में सफलता हासिल की। ब.स.पा. को चुनाव आयोग से सन् 1999 में राष्ट्रीय पार्टी की मान्यता मिली। राष्ट्रीय मतदान में ब.स.पा. का हिस्सा 1996 में चार,

1998 में 4.7 और 1999 में 4.3 प्रतिशत रहा, जबकि 1991 में उसे केवल 1.6 प्रतिशत वोट ही मिले थे।

उपरोक्त आँकड़ों और तथ्यों के आधार पर ब.स.पा. को एक सफल राजनीतिक दल कहा गया। उसका विकास–क्रम काफी तेज रहा है। उसके नेताओं, (कांशीराम जी और मायावती) ने गठजोड़ राजनीति पर खासी महारत हासिल कर ली। यह माना जा सकता है कि बाबा साहब डॉ0 अम्बेड़कर द्वारा बनायी गयी इंडियन लेबर पार्टी, शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन और रिपब्लिकन पार्टी को कभी इस तरह की राजनीतिक सफलता नहीं मिल पाई।

बामसेफ के सदस्य सामने आये बिना प्रशासन में अपनी हैसियत का कुशलतापूर्वक इस्तेमाल करते हुए ब.स.पा. के लिए बीज डालने का काम करते रहे और संसाधन जुटाते रहे। बामसेफ अपने–आप में एकदम नये तरह का विचार था। शुरू में बड़े दलित अफसरों ने हमदर्दी होते हुए भी इस संगठन को कोई तव्वज़ो नहीं दी लेकिन सवर्ण अफसरों की जातिवादी ज्यादतियों के खिलाफ संघर्ष चलाते मँझोले और निचले दलित कर्मचारियों की यूनियन के रूप में सीमित हो जाना इनका लक्ष्य नहीं था। कांशीराम जी चाहते थे कि यह शिक्षित कर्मचारियों का संगठन तो बने लेकिन शिक्षित कर्मचारियों के लिए ही काम न करता रहे। इस संगठन के शिक्षित कर्मचारियों से अपेक्षा की जाती थी कि वे उत्पीड़ित समाज के अन्य सदस्यों की मदद करें और इस तरह बहुजन समाज आंदोलन के लिए 'ब्रेन बैंक', 'टैलेंट बैंक' और 'फाइनेंशियल बैंक' बन कर शोषित वर्ग को सम्बल प्रदान करें।

कांसीराम जी का यह भी मानना था कि जाति–चेतना का राजनीतिकरण किए बिना न तो जाति के पंरपरागत रूप टूट सकते हैं और न ही जाति की बीमारी का इलाज हो सकता है। यद्यपि उनके बहुजन समाज में दलित, आदिवासी, पिछड़े और धार्मिक अल्पसंख्यक शामिल थे, लेकिन प्राथमिकता के लिहाज से उनका पहला जोर दलितों पर, दूसरा पिछड़ों पर और तीसरा धर्म परिवर्तन किए हुए अल्पसंख्यकों पर दिखाई देता था। बाबा साहब अम्बेडकर ने भी अपनी जनवादी क्रांति की प्राथमिकताएँ इसी प्रकार निर्धारित की थीं। राजनीति में ब.स.पा. के प्रवेश के समय उन्होंने इसके लिए तीन प्रमुख कार्यभार निर्धारित किए थे– दलितों और पिछड़ों के लिए संविधान में बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रदत्त विशेष सुविधाओं को वास्तव में लागू करने के लिए संघर्ष, चुनाव सुधारों के लिए दबाव बनाना ताकि कमजोर वर्ग के लिए मतदान करने लायक माहौल की गारंटी हो सके : नमूने के तौर पर कम कीमत में चुनाव लड़ने की जनाधारित शैली विकसित करना,

15 अगस्त 1988 से 15 अगस्त 1989 के बीच कांशीराम जी ने पाँचसूत्रीय सामाजिक रूपांतरण आंदोलन चलाया। ये पाँच सूत्र थे : आत्मसम्मान के लिए संघर्ष, मुक्ति के लिए संघर्ष, समता के लिए संघर्ष, जाति उन्मूलन के लिए संघर्ष और विभाजित समाज को भाई–चारे से जोड़ने के लिए संघर्ष एवं 85 प्रतिशत भारतीय जनता के ऊपर अस्पृश्यता, अन्याय, अत्याचार

और आतंक थोपने के खिलाफ संघर्ष। काशीराम जी ने इसके लिए साईकिल–यात्राओं की अनूठी विधि निकाली और देश के पाँच क्षेत्रों से पाँच साइकिल–यात्राएँ निकालीं।

1992 के नवंबर में इटावा संसदीय सीट पर उपचुनाव हुआ। काशीराम जी ने बसपा उम्मीदवार के रूप में वहाँ से परचा भरा। मुलायम सिंह यादव ने अपने घरेलू क्षेत्र से निवर्तमान सांसद राम सिंह शाक्य को खड़ा किया। काँग्रेस और भाजपा के उम्मीदवार भी मैदान में उतरे। अब निर्णय मुलायम सिंह के हाथ में था। मुलायम सिंह ने शाक्य मतदाताओं को नाराज करने का जोखिम उठाया और उनके समर्थकों ने ऐन मौके पर पिछड़े वर्ग के वोट कांशीराम जी की तरफ स्थानांतरित कर दिये। इस तरह दलित (मुख्यतः जाटव) और यादव वोटों की एकता पहली बार बनी। मुसलमान भी उसके साथ जुड़े। प्रतिक्रिया में भाजपा और काँग्रेस, इन पर ब्राह्मणों का एकाधिकार होने के कारण अंदर ही अंदर एकताबद्ध हो गयी। कड़ा संघर्ष हुआ लेकिन कांशीराम जी 11 हजार वोटों से जीत कर संसद में पहुँच गये। इटावा का यह संसदीय चुनाव कई दृष्टियों से मील का पत्थर साबित हुआ और कांशीराम जी इस प्रकार अपने पार्टीजनों को खुले गठजोड़ के प्रति आश्वस्त कर सके। मुलायम सिंह ने परख लिया कि बसपा के साथ उनके और मुसलमानों के वोट मिल जाने से जो ताकत बनती है उसमें चुनाव जीतने की क्षमता है। इटावा का चुनाव इस मायने में नमूना बन गया कि पिछड़े और दलित वोट एक–दूसरे के उम्मीदवारों को जिताने के लिए गोलबंद हो सकते हैं। समाजवादी पार्टी और बसपा का गठजोड़ कई मायनों में ऐतिहासिक था क्योंकि इसका महत्वपूर्ण उद्देश्य हिंदुत्व की तेजी से उभरती हुई बढ़त रोकने से सबंधित था।

सपा–बसपा सरकार ने शुरूआत अच्छे ढंग से की। सत्ता में आते ही उसने परीक्षाओं में नकल रोकने के लिए लाया गया दंडात्मक कानून वायदे के मुताबिक रद्द कर दिया। सरकार ने एलान किया कि वह किसानों और मजदूरों के कल्याण को प्राथमिकता देगी। गाँव और खेती का विकास किया जाएगा। खासतौर से दलितों को शोषण के शिकंजे से मुक्त करने पर खास जोर दिया जाएगा।

कांशीराम जी ने दक्षिण भारत के दौरों का कार्यक्रम बना लिया और उत्तर प्रदेश की बागडोर मायावती को सौंप दी। कांशीराम जी ने राजबहादुर जैसे वरिष्ठ साथी के होते हुए मायावती को उत्तरप्रदेश का उत्तरदायित्व देने पर सभी को आश्चर्य हुआ। मायावती की कार्य–शैली कांशीराम से भिन्न नहीं है। वे अफसरां के मनचाहे तबादले करवातीं, हो चुके तबादलों को रूकवातीं, पुलिस वालों को सजा दिलवातीं, बिना सूचना दिये या मुलाकात का वक्त लिये मुख्यमंत्री के दफ्तर में जा पहुँचतीं और अपने लखनऊ प्रवास के दौरान बसपा के सभी मंत्रियों द्वारा अपने दरबार में हाजिरी बजाने की अपेक्षा रखतीं।

मुलायम सिंह को मायावती की कार्यशैली से बहुत दिक्कत आ रही थी और वे हर तरह से मायावती से छुटकारा चाहते थे। राजबहादुर और मसूद के कार्यकलापों को सपा द्वारा दिया

गया समर्थन मायावती का विरोध करने की तरफ ज्यादा केंद्रित था, न कि कांशीराम जी या बसपा का विरोध करने पर। संभवतः मसूद और राजबहादुर की तरह मुलायम सिंह बसपा में मायावती के पर कतरे जाने को अपने हित में मानते रहे होंगे। लेकिन, इन तमाम विवादों में कांशीराम जी ने मायावती का ही पक्ष लिया।

मायावती के दबाव में आकर कांशीराम जी ने राज्यपाल मोतीलाल वोरा को पत्र लिख कर मुलायम सरकार से समर्थन वापस ले लिया। प्रदेश का राजनीतिक माहौल तनाव में डूब गया। मुलायम सिंह ने सदन में बहुमत साबित करने की इजाजत माँगी लेकिन उन्हें बहुमत साबित करने का अवसर नहीं मिला। भा.ज.पा. ने उक्त अवसर का भरपूर लाभ उठाया। मायावती को मुख्यमंत्री बनाने में हर प्रकार का सहयोग प्रदान कर दिया। मायावती के भा.ज.पा. के सहयोग से उत्तर प्रदेश की पहली दलित महिला मुख्यमंत्री बनने की इस घटना ने बहुजन की सत्ता के सपने को गहरा झटका दिया, और उच्चवर्ग इस सत्ता समीकरण को बिगाड़ने में सफल हो गया।

पिछड़ों एवं अतिपिछड़ों की राजनैतिक त्रासदी

समाजवादी पार्टी व बहुजन समाजपार्टी के गठबंधन से देश की राजनीति पर दूरगामी परिणाम की संभावना थी। उच्च वर्ग को खतरा लगा कि यदि यही समीकरण देश के अन्य भागों में दलित–पिछड़ों के रूप में कामयाब हो गया तो केन्द्र की सत्ता से भी उच्च वर्ग को हाथ धोना पड़ सकता है। बड़ी संख्या में ब्राह्मणों ने मुलायम सिंह के दल में प्रवेश किया। नौकरशाही जिस पर ब्राह्मणों का ही वर्चस्व था उसने भी पिछड़ा–दलित (बहुजन) गठजोड़ को तोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, ब्राहमणी षड़यंत्र के कारण ग्रामीण स्तर पर यादवों एवं दलितों में संघर्ष की स्थिति बनी। दलित उत्पीड़न की घटनाओं में इजाफा हुआ। दोनों वर्गों में कटुता बढ़ती चली गई और अविश्वास की खाई गहरी होती चली गई। अन्ततः उच्चवर्ग बहुजन की सत्ता की संभावना को समाप्त करने की साजिश में सफल हो गया।

इस साजिश को सफल बनाने में सबसे ज्यादा भूमिका मायावती की राजनैतिक महत्वाकांक्षाओं ने निभाई। भाजपा के समर्थन से मायावती मुख्यमंत्री बन गई। बसपा अपने ही सिद्धांतो के खिलाफ चली गई। वह उसी ब्राह्मणवाद की समर्थक बन गई जिसके खिलाफ उसका संघर्ष था। यह बसपा का वैचारिक पतन तो था ही, सामाजिक परिवर्तन के आंदोलन का पतन भी था। इसके बाद फिर बसपा गिरती ही चली गई और वह भाजपा को जिताने वाली पार्टी बनकर रह गई। सपा–बसपा की 18 महीने की क्रांतिकारी सरकार के बाद जून 1995 में मायावती की जो ताजपोशी हुई, उससे यह तो हुआ ही कि इतिहास में पहली बार एक दलित महिला को मुख्यमंत्री का पद मिला, परंतु यह भी इतिहास याद रखेगा कि वह अम्बेडकर और मनुवाद का ऐसा गठजोड़ था जिसकी भारी कीमत दलित आंदोलन को इस रूप में चुकानी पड़ी

कि ब्राह्मणवाद पुनः विजयी मुद्रा में स्थापित हेा गया और 1932 के पूना–पैक्ट के बाद दलित अपनी मुक्ति की जीती हुई लड़ाई फिर हार गए।

कांशीराम जी की विचारधारा और राजनीति कई मायनों में अन्तर्विरोधों की शिकार रही है। जहाँ तक दलित राजनीति और उभार का प्रश्न है, निश्चित रूप से कांशीराम जी ने महात्मा फुले और बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर के चिंतन और कार्यक्रम को आगे बढ़ाया। उनकी आक्रामक शैली ने दलित चेतना का विस्तार किया है और कांग्रेस और भाजपा जैसे दल, जिन्हें स्वयं कांशीराम जी ने ब्राह्मणवाद की 'ए' और 'बी' टीम कहा था उन्होंने दलितों को कांग्रेस से अलग करने का प्रयास भी किया उन्हें इस मुहिम में सफलता भी मिली लेकिन उनकी विचारधारा में समग्रता व मौलिकता का अभाव था उनकी राजनीति में ब्राह्मणवादी व्यवस्था का निषेध तो है, लेकिन बहुजन समाज के अपने सामाजिक अंतविरोधों को हल करने की स्पष्टता नहीं मिलती। दलित समाज में व्याप्त अंधविश्वासों और कुरीतियों को दूर करने, विभिन्न दलित एवं पिछड़ी जातियों के बीच व्याप्त जातिवाद, परस्पर भेदभाव को दूर करने और आपस में तालमेल बैठाने, वैवाहिक संबंध आदि के लिए उन्होंने कोई व्यापक सामाजिक सुधार अभियान भी नहीं चलाया। बहुजन समाज के राजनैतिक एकीकरण के लिए तो उनके प्रयास रहे लेकिन जमीनी धरातल में स्थित समाज के जातीय ढांचे को तोड़ने का उन्होंने कोई प्रयास नहीं किया। बिना लोगों की सामाजिक सोच में बदलाव लाये राजनैतिक सत्ता दलितों को शोषण एवं उत्पीड़न से निजात नहीं दिला सकती। यह समझने में उन्होंने भूल की।

बामसेफ के माध्यम से कांशीराम जी ने कार्यकर्ताओं की फौज और आर्थिक संसाधन तो जुटा लिये, लेकिन देश को एक ऐसे जन संगठन की जरूरत थी, जो बहुजन समाज पर होने वाले अत्याचारों के खिलाफ मुखर प्रतिरोध कर सके और सदियों से दबे–कुचले, मानसिक हीनता से ग्रस्त लोगों को अपनी सामाजिक हैसियत बदलने के लिए खड़ा कर सके, इस कार्य को कांशीराम जी ने कभी प्राथमिकता प्रदान नहीं की।

कांशीराम जी की विचारधारा में आर्थिक चिंतन का भी अभाव था। वह भारत के मौजूदा सामाजिक–आर्थिक ढाँचे के विरूद्ध तो थे लेकिन उनकी अपनी आर्थिक योजना नहीं थी उन्होंने कोई आर्थिक नीति नहीं बनाई। वे यह तो बार–बार दोहराते थे कि देश के आर्थिक संसाधनों व पूंजी पर उच्च वर्ग का एकाधिार है लेकिन उक्त एकाधिकार को कैसे समाप्त किया जाये तथा दलितों व पिछड़ों का आर्थिक सुदृढ़ीकरण कैसे संभव है ? इस बाबत् उनकी कोई योजना नहीं थी, ब.स.पा. का कोई आर्थिक एजेण्डा भी नहीं है। कांशीराम जी की कार्यशैली अधिनायकवादी थी संगठन को उन्होंने अकेले ने ही चलाया लोकतंत्रीय पद्दति का संगठन में प्रवेश ही नहीं होने दिया। वे मनोनयन में विश्वास रखते थे, बामसेफ डी.एस.4 तथा बहुजन समाज पार्टी में भी आन्तरिक लोकतंत्र नहीं पनपने दिया, अन्य राजनैतिक दलों में दिखावे के लिए लोकतंत्र तो है लेकिन ब.स.पा. ने कभी भी अपने दल में चुनाव पद्धति को नहीं अपनाया सभी पदाधिकारी

मनोनीत होते हैं। मनोनयन में योग्यता के स्थान पर व्यक्तिगत निष्ठा व स्वामीभक्ति को महत्व दिया जाता है जो अधिनायक वाद, राजतंत्र व ब्राह्मणवाद का मौलिक सिद्धान्त है। लोकतंत्र में चयन का तरीका चुनाव (Election) है, चुना हुआ प्रतिनिधि उनके प्रति संवदेनशील व जवाबदेह होता है जो उसे चुनकर प्रतिनिधि बनाते हैं। कांसीराम जी ने तो अपने द्वारा खड़े किए गये राजनैतिक दल (बहुजन समाज पार्टी) को ही वसीयत के जरिये मायावती की झोली में डाल दिया वे अपने स्वभाव व आचरण से घोर अलोकतंत्री थे जिसका खामियाजा उन्हें अपने अन्तिम दिनों में भुगतना पड़ा। समाज परिवर्तन के बाबा साहब अम्बेडकर के आन्दोलन को उत्तर भारत में फैलाने वाले कांसीराम जी को मायावती ने दरकिनार कर दिया, स्वास्थ्य की दृष्टि से अपाहिज हो जाने के कारण वे कुछ कर सकने की स्थिति में भी नहीं रहे। आगे जाकर मायावती ने कांसीराम जी को किसी से मिलने भी नहीं दिया वे अपनी व्यथा किसी को बता भी नहीं सके। उनका अन्त दुखद ही माना जा सकता है।

मायावती ने कांसीराम जी की अधिनायकवादी शैली को ही अपनाया है उनकी कार्यशैली से ऐसा लगता है कि उन्हें ब्राह्मणवादी सामाजिक ढांचे का ज्ञान ही नहीं है, अथवा वे सत्ता के लालच में ऐसा ढोंग रच रही है। लेकिन यह सत्य है कि वे बाबा साहब के समाज परिवर्तन के मिशन से बिल्कुल ही अनभिज्ञ हैं।

मायावती ने सन् 2007 के उपरान्त ब्राह्मण गठजोड़ से सत्ता में आने के बाद मई 2007 को शासनादेश जारी कर दलित एक्ट (एससी/एसटी अत्याचार निवारण अधिनियम) को उ.प्र. में हत्या को छोड़कर हर अपराध के लिए निष्प्रभावित कर दिया। बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर का ''शिक्षित बनो'' पहला सूत्र था। मायावती ने स्वयं एक प्राइमरी स्कूल तक नहीं खुलवाया न किसी दलित को स्कूल कॉलेज खोलने के लिए आर्थिक ग्रान्ट दी जबकि मुलायम सिंह ने 161 इंटर कॉलेज, 153 डिग्री कॉलेज अनुदान देकर पिछड़ों से खुलवाए। 150 पुस्तकालय और वाचनालयों का एक करोड़ रूपया ग्रान्ट में दिया। मायावती ने अनुदान देकर एक भी इंटर कॉलेज नहीं खुलवाया उल्टा जो बाबा साहब के नाम से दलित को ग्रान्ट देकर कांग्रेस ने पुस्तकालय खुलवाए थे उनकी ग्रान्ट बंद कर दी और पुस्तकालय बंद हो गए। मायावती ने शिक्षा कोर्स में डॉ. अम्बेडकर का नाम सम्मिलित नहीं किया जबकि गांधी, नेहरू, लाजपतराय, चन्द्रशेखर, भगतसिंह और हैडगेवार तक का जीवन बच्चों को कोर्स में पढ़ाया जाता है। प्रदेश में दिया जाने वाला अम्बेडकर अवार्ड किसी दलित को नहीं दिया। प्रदेश में लगभग 10 साहित्य अवार्ड बांटे जाते हैं उत्तरप्रदेश में दर्जनों अच्छे दलित साहित्यकार हैं पर मायावती ने किसी दलित साहित्यकार को कोई अवार्ड नहीं दिया।

प्राइमरी, माध्यमिक और उच्च शिक्षा तीन मंत्रालयों में बंटी है और तीनों के मंत्री ब्राह्मण रहे। ब्राह्मण मंत्री ने स्कूलों के लिए एक शासनादेश जारी करवाया। इन शासनादेश में कहा गया कि स्कूलों में सुबह पहले प्रार्थना घंटा अनिवार्य होगा। इस प्रार्थना में अध्यापक बच्चों को

रामायण, महाभारत, वेद, गीता जैसे धर्म पुस्तकों के प्रसंग सुनाएंगे। बच्चों को पौराणिक प्रसंगों से ईश्वर, आत्मा, भागवत कथा के बारे में बताया जाएगा। मनु, दधिच, वशिष्ठ, अगस्त्य जैसे ऋषियों की महानता समझाई जायेगी। वर्ण व्यवस्था को कर्मानुसार उचित बताया जायेगा प्राचीन ब्राह्मण ऋषि मुनियों की गाथाएं कोर्स में सम्मिलित कर नैतिकता के नाम पर ब्राह्मण श्रेष्ठता को महिमा मंडित किया जाएगा। ये शासनादेश जारी होने पर शिक्षा का पूर्णरूपेण ब्राह्मणीकरण कर दिया गया है।

हम मूल निवासियों की पराजय का लम्बा इतिहास है। हम बराबर ब्राह्मणवादी छल के शिकार हुए और गुलाम बने हमारी अद्योगति हुई और घृणित जीवन जीने के लिए विवश हुए इसका सबसे बड़ा कारण हमारे नेताओं, रहनुमाओं की गद्दारी रही जो झूंठी प्रशंसा से गुमराह हो गए और अंत में स्वयं भी नष्ट हो गए।

(1) मायावती का यह कहना है कि बहुजन समाज पार्टी अम्बेडकर के सिद्धांतों को मूल आधार मानती है, किंतु इस बात का मायावती के पास क्या जवाब है, जिन तिलक, तराजू और तलवारी जातियों के गठजोड़ से उन्होंने सत्ता हासिल की है क्या जब बुद्ध अम्बेडकर के सिद्धांतों पर अमल करने की बात होगी, तो उनसे टकराव नहीं होगा ? क्या ये जातियां उन सिद्धांतों पर अमल करने देंगी जो उनकी आधारभूत नीति का उच्छेदन करेगी? कदापि नहीं।

तिलक, तराजू और तलवार इनको मारो जूता चार के नारे पर घोर प्रतिक्रिया व्यक्त करने वाला ब्राह्मण मायावती के साथ क्यों आया ? उसके विशेष दो कारण हैं – 1. पहला कारण यह है कि चतुर ब्राह्मण वर्ग यह जान गया था कि भाजपा सत्ता में नहीं आ सकती और आ भी गई तो नेतृत्व गैर ब्राह्मण का होगा इसलिए वह भाजपा से निराश था। उधर वह मुलायम सिंह को कठोर सिद्धांतवादी और अदंरखाने स्वर्ण विरोधी मान रहा था क्योंकि सत्ता में रहते उन्होंने ब्राह्मणों को उचित भागीदारी भी नहीं दी। वहां एक ब्राह्मण मंत्री से एक यादव ब्लॉक प्रमुख अधिक शक्तिवान था। इधर वह मायावती को नरम चारा समझ रहा था कि उनके साथ जाने से अधिक लाभ होगा।

ब्राह्मणों ने मायावती को मुख्यमंत्री बनाकर और स्वयं सत्ता के असली शासक बनकर शासन किया।

मायावती और ब्राह्मणों की उस दुरभि संधि को ब्राह्मणवादी मीडिया ने बड़े जोर–शोर से शोसल इंजीनियरिंग का नाम दे डाला। यह सरासर गलत और दलितों की आंखों में धूल झोंकने वाला कृत्य था। वास्तविकता यह थी कि यह फार्मूला सोशल इंजीनियरिंग का नहीं बल्कि दलित शोषण इंजीनियरिंग का था। मिशन विहीन सत्ता व्यर्थ है और जहां कोई दलित क्रांति के मिशन का गला घोंटकर सत्ता पर बैठ जाए वह दलित द्रोह है।

उत्तर प्रदेश का दलित पिछड़ों से पूर्णरूपेण कट चुका है। अपने सत्ता वंशजों को दूर कर दूसरे नृसंगियों को पलकों में बैठाना सोशल इंजीनियरिंग का प्रमाण नहीं, स्वार्थ का प्रतिक है। अपनों को बिखेरने वालों के सिर पर बहुत दिनों तक ताज नहीं रहता। मायावती ने पिछड़ों को ही नहीं दलितों में भी फूट डाली है – ये खटीक है, ये सांसी है, कहकर दलितों में आपसी घृणा पैदा की। मायावती ने कुर्सी की खातिर गैरों की पराधीनता स्वीकार की और अपनों को बिखेरने, दुत्कारने का नाटक किया। आज चमार उस स्थान पर खड़ा है जहां चारों तरफ खाई है, उसे सवर्णों, पिछड़ों और स्वयं अन्य दलितों से काट दिया गया है।

मायावती तो उनके लिए उद्यम है। ब्राह्मण का उद्देश्य कुर्सी नहीं लक्ष्य होता है। बाबा साहब का कहना था कि सामाजिक और सांस्कृतिक क्रांति के बाद ही राजनीतिक क्रांति स्थाई होती है वह राजनैतिक क्रांति स्थायी नहीं हो सकती जिसके पहले सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्रांति न हो। मायावती की राजनीति में सामाजिक सांस्कृतिक क्रांति का कोई कालम नहीं बल्कि ब्राह्मणवादी संस्कृति का महिमा मंडन है। मायावती का यह कथन कि राजनीति सब तालों की चाबी है महज धोखा देना है।

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर और डा. लोहिया ने सोशल इंजीनियरिंग और समाजवाद की बात करते समय कहा था कि दलित पिछड़ों को एक मंच पर लाने का काम होना चाहिए कांशीराम जी ने भी यहीं से राजनीति प्रारंभ की थी किंतु मायावती ने अपना लक्ष्य सत्ता बना लिया क्रांति नहीं।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ब्राह्मणवादी विचारधारा की नियंत्रक अथवा कश्टोडियन संस्था है। यह आज भारत का सबसे बड़ा ब्राह्मणवादी संगठन है और हर ब्राह्मण उससे नियंत्रित होता है। चाहे वह किसी भी राजनैतिक दल का सदस्य हो। चाहे किसी सामाजिक सांस्कृतिक संगठन का। संघ अपनी अनेक शाखाओं के माध्यम से अपने उद्देश्य का कार्यान्वयन करता हैं । इस संगठन का मूल काम भारत को हिन्दू राष्ट्र बनाना है। उस हिन्दू राष्ट्र का अर्थ ब्राह्मण नियंत्रित सत्ता स्थापित करना और अहिन्दूओं को उस सत्ता में गुलाम की स्थिति में रखना हैं। ब्राह्मणवादी सोच राजनीति का नहीं नीति का पोषक है। महात्मा फूले और बाबा साहब अम्बेडकर ने ब्राह्मणवाद का घोर विरोध किया और परिवर्तन की पताका लिए खड़े रहे। इन पिछड़े व दलित नायकों ने हर ब्राह्मणवादी सोच का विरोध किया और अंग्रेज सत्ता से इनके लिए अधिकार लड़कर लाए। बाबा साहब ने ब्राह्मणवादी व्यवस्था का उच्छेदन कर उनकी जड़ों को सुखाने का काम किया। मायावती निजी ऐश्वर्य के लिए उन जड़ों को पुनः सिंचित कर संजीवनी प्रदान कर दी। ब्राह्मण सत्ता का प्रमुख बनने में दिलचस्पी नहीं रखता है वह अपनी ब्राह्मणवादी नीति को जीवित रखने के लिए केवल सत्ता का कन्ट्रोलर (नियंत्रक) बने रहने में लगाव रखता है। उसका हिन्दू राष्ट्र भी महज 15 प्रतिशत का राष्ट्र है जिसमें ब्राह्मण प्रमुख होता है। ब्राह्मण के अपने निश्चित उद्देश्य हैं वह अपनी भाषा, धर्म, संस्कृति और रेस सुरक्षित बनाए रखना निर्धारित लक्ष्य

रखता है। ब्राह्मण अपनी भाषा संस्कृति, आर्य, धर्म हिन्दू और रेस आर्य माता है। वह इनको जीवित रखने के लिए किसी को भी शासक बनाकर नियंत्रक बना रहना पर्याप्त मानता है वह राजनीति को मास्टर चाबी नहीं मानता है।

कांसीराम जी ने डी.एस.4 एवं बहुजन समाज पार्टी के जरिए उत्तरप्रदेश के हुए सम्मेलनों में कहा था कि उत्तरप्रदेश ब्राह्मणवाद का पालना है इसलिए ब्राह्मणवाद को समाप्त करने के लिए उत्तरप्रदेश को ही उन्होंने चुना है, पंजाब के बाद उत्तरप्रदेश को ही उन्होंने अपनी कर्मभूमि बनाया। मुलायम सिंह की समाजवादी पार्टी के साथ सन् 1993 में गठजोड़ कर यह बेहद उत्तेजक नारा देकर कि **''तिलक, तराजू और तलवार, इनके मारो जूते चार''** ने देश की राजनीति में भूचाल ला दिया था उच्च वर्ग इस नारे की बुलन्द आवाज को सुनकर न केवल सन्न रह गया बल्कि बेहद विचलित हुए बिना नहीं रहा। उसे भय लगा कि वर्ण व्यवस्था में शिक्षा, सम्पत्ति व सत्ता से धर्म के नाम पर धकिया कर वंचित किए गये विशाल शूद्र वर्ण की जातियों ने उन्हें राजसत्ता से बाहर निकाल फेंकने का मानस बना लिया है। लेकिन मायावती सत्ता के लालच में उच्च वर्ग विशेषकर ब्राह्मणों के जाल में फंस चुकी हैं, बहुजन के स्थान पर सर्वजन का नारा देकर ''ब्राह्मणवाद के पालना की डोर को पकड़कर झूला झुला रही हैं, ब्राह्मणवाद की परवरिश में तन्मयता से लगी हुई हैं। ''जहां तक अन्य राजनीतिक पार्टियों के साथ शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन का संबंध है, इसे आसानी से परिभाषित किया जा सकता है। शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन किसी प्रतिक्रियावादी पार्टी जैसे हिन्दू महासभा तथा आरएसएस से किसी भी तरह का गठजोड़ नहीं करेगा।'' जाहिर है उस समय जनसंघ या भाजपा नहीं थी। अतः बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर का उक्त मंतव्य समाज परिवर्तन के लक्ष्य के प्रति एकदम साफ था।

आजादी तक कांग्रेस पार्टी का ही देश में व्यापक जनाधार था जिसके शीर्ष एवं मझौले स्तर पर ब्राह्मणों का ही पूर्ण नियंत्रण रहा। बाबा साहब अम्बेड़कर के द्वारा खड़े किए गये दलित पिछड़ा आन्दोलन को कुन्द करने के लिए कांग्रेस पार्टी ने आदिवासियों एवं दलितों में से ही जगजीवन राम जी के अलावा भोला पासवान शास्त्री बुद्धप्रिय मौर्य, चांदराम जगन्नाथ पहाड़िया, योगेन्द्र मकवाना, अमृतलाल यादव, सुशील कुमार सिन्दे, भीखा भाई भील, सुखदेव प्रसाद व सुरजभान अन्य अनगिनत नेताओं को राजनैतिक आरक्षण की मजबूरी के कारण आगे बढ़ाया कांग्रेस का दलितों एवं मुसलमानों पर व्यापक प्रभाव था। ब्राह्मण दलित आदिवासी व मुस्लिम समुदाय कांग्रेस की विचारधारा के अंग के रूप में पहचाने जाने लगे लेकिन ब्राह्मणों ने सत्ता की बागडोर अपने नियंत्रण में रखी तथा सत्ता के सभी श्रोतों पर ब्राह्मणों ने अपना वर्चस्व बनाए रखा। आजादी के बाद घोर दक्षिण पंथी एवं हिन्दू साम्प्रदायिक संगठनों के अग्रणी नेताओं ने जनसंघ नामक राजनैतिक पार्टी की स्थापना की जिसने अन्य पिछड़ा वर्ग में अपना जनाधार बढ़ाया। हिन्दू महासभा व राष्ट्रीय स्वयं संघ की पृष्ठभूमि के लोगों ने इस दल पर अपना नियंत्रण रखा। आजादी की लड़ाई के दौरान देश में हिन्दू मुसलामानों में धर्म के आधार पर विभाजन स्पष्ट तौर पर उभर चुका था। पाकिस्तान के गठन के उपरान्त बड़ी संख्या में मुसलमान गरीबी

एवं अन्य मजबूरी के कारण भारत में रह गये जिनके विरूद्ध वैमनस्यता फैलाकर जनसंघ पार्टी ने हिन्दू समाज के विशाल पिछड़ा वर्ग का हिन्दूकरण कर उन्हें अपना वोट बैंक बनाया। जो सन् 1980 के बाद भारतीय जनता पार्टी के रूप में राष्ट्रीय आकार ले पाई। राजनैतिक आरक्षण की मजबूरी के कारण दलितों एवं आदिवासियों में से भी कार्यकर्त्ता तैयार किए बंगारू लक्ष्मण, डॉ0 सत्य नारायण जटिया, कैलाश मेघवाल आदि को सत्ता में भागीदारी देकर यह संदेश देने का प्रयास किया कि सभी वर्गों का विकास करना उनका लक्ष्य है लेकिन स्पष्ट आर्थिक नीति इस दल ने नहीं अपनाई। हिन्दू, हिन्दी एवं हिन्दूस्तान का राष्ट्रीय नारा देकर साम्प्रदायिक उन्माद देश में पैदा किया जिसके कारण मुसलमान व अन्य अल्पसंख्यक समुदाय के लोग कांग्रेस के साथ रहने को मजबूर हुए। कम्यूनिष्ट पार्टियों व समाजवादी पार्टियों पर भी ब्राह्मणों एवं उच्च वर्ग का नियंत्रण होने के कारण दलितों एवं आदिवासियों का अधिक जुड़ाव इनसे नहीं हो पाया और नहीं समाजवाद का दंभ भरने वाले इन राजनैतिक दलों ने आर्थिक कारणों से मानव गरिमा व आर्थिक बदहाली का सदियों से डंक झेल रहे विशाल पिछड़े व अछूत वर्ग की सामाजिक स्थिति में परिवर्तन बाबत् ही कोई कारगर कदम उठाया।

दक्षिण भारत में विशेषकर तमिलनाडू में ब्राह्मण विरोधी आन्दोलन के फलस्वरूप डी.म.के. के जन्म के पूर्व जस्टिस पार्टी ने लम्बी अवधि तक सत्ता संभाली लेकिन उक्त पार्टी ने सत्ता में आने के उपरान्त सामाजिक व आर्थिक कार्यक्रम बाबत् कोई नीतिगत निर्णय नहीं लिया। समाज के उपेक्षित व वंचित वर्ग की सामाजिक व आर्थिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार नहीं हो पाने के कारण उक्त पार्टी अपना जनाधार खो बैठी। बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने उक्त गलती को अपने सम्बोधन में बतलाया भी था मद्रास के द्रविड़ आन्दोलन ने ब्राह्मणवाद को हांसिए पर तो ला दिया लेकिन दलितों की स्थिति में सारभूत परिवर्तन लाने में उक्त आन्दोलन कारगर साबित नहीं हो पाया है।

80 के बाद दलित चेतना में उल्लेखनीय सुधार हुआ है लेकिन दलित उत्पीड़न के विरूद्ध एक सशक्त आन्दोलन खड़ा करने का किसी ने प्रयास नहीं किया। रामविलास पासवान ने तो दलित मुक्ति की बजाय उच्च वर्ग के तथाकथित गरीबों की ज्यादा चिन्ता होने लगी है, उदितराज ने राज्यसेवा में रहते हुए दलित व पिछड़ा वर्ग के लोक सेवकों का शक्तिशाली संगठन बनाया था लेकिन उक्त संगठन उनकी राजनैतिक महत्वाकांक्षा का शिकार हो गया उनकी राजनैतिक पार्टी ''जस्टिस पार्टी ऑफ इन्डिया'' देश में कहीं से भी खाता खोलने में कामयाब नहीं हो पाई हैं। रामविलास पासवान की लोक जनशक्ति पार्टी उनके पारिवारिक मोह व स्पष्ट सामाजिक सोच एवं आर्थिक नीति के कारण बिहार में अपना जनाधार खो चुकी है। अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के देश में लगभग 119 सांसद एवं 1054 के लगभग राज्यों की विधानसभाओं में विधायक हैं कोई भी जनप्रतिनिधि दलितों के साथ हो रहे सामाजिक उत्पीड़न, अन्याय व शोषण के विरूद्ध आवाज नहीं उठा रहे हैं, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति/आयोग द्वारा वर्ष 1996–1997

एवं 1997–1998 को प्रेषित रिपोर्ट के निम्न आंकड़े पूना पेक्ट के दुष्परिणाम तथा दलित राजनैतिक नेतृत्व के पंगू व दीशाहीन हो जाने पूख्ता सबुत नजर आते हैं।

क्रमांक	राज्य	दलितों के विरूद्ध घटित अपराधों की संख्या	अपराधों का प्रतिशत	विशेष विवरण
1	उत्तरप्रदेश	10963	34.9	
2	राजस्थान	6623	21.1	
3	मध्यप्रदेश	4075	13.0	
4	तमिलनाडू	1812	5.8	
5	गुजराज	1764	5.6	
6	आन्ध्रप्रदेश	1629	5.2	
7	महाराष्ट्र	1352	4.3	
8	कर्नाटक	1089	3.5	
9	बिहार	810	2.6	
10	केरल	640	2.0	
11	उड़ीसा	486	1.5	

दलित उत्पीड़न की कुछ घटनाओं का विवरण

उत्तरप्रदेश जहाँ बहुजन समाज पार्टी ने 1993 के बाद सत्ता में अपनी भागीदारी शुरू कर मई 2012 तक पूर्ण सत्ता में रही, वहां पर दलित उत्पीड़न के मामले सबसे अधिक प्रकाश में आये हैं इसलिए सत्ता की चाबी सभी समस्याओं के समाधान की कुंजी है यह गलत साबित हो जाता है, कुमार मयंक के लेख में उत्तर प्रदेश बाबत् उल्लेखित तथ्यों के अनुसार सन् 2009 में ही घटित मेरठ व कुछ जिलों की निम्न घटनाएं देश के दलित चिंतकों व बुद्धिजीवियों की आंखे खोलने के लिए पर्याप्त है।

- 21, जून 2009 नरौरा, दबंगों ने एक दलित गरीब परिवार को गांव छोड़ने पर मजबूर किया।
- 22 जून, 2009 बागपत, सिसाना बस्ती में दलितों को सरकारी नल से पानी भरने पर रोक लगाई।
- 24 जून, 2009 गोटका मंदिर में घुसने व नाई से बाल कटवाने की दलितों को इजाजत नहीं।
- 27 जून, 2009, ग्रेटर नोएडा में दलित औरत के साथ गैंग रेप कर एमएमएस बनाया

- 28 जून, 2009 मेरठ दलित महिला पार्षद को दौड़ादौड़ा कर पीटा

उत्तरप्रदेश में घटी इन सब वारदातों में पीड़ितों का कुसूर महज इतना था कि वे दलित थे, उनकी माली हालत ठीक नहीं थी व हैसियत अगड़ों के मुकाबले कमजोर थी।

दलितों पर जोरजुल्म करने की ऐसी खबरें तो आए दिन अखबारों में छपती रहती है, लेकिन जल्दी से उनकी कहीं सुनवाई नहीं होती, क्योंकि हमारे समाज की रगों में जाति प्रथा का सदियों पुराना जहर आज भी बरकरार है।

आंख की किरकिरी–

1. मेरठ जिले में एक गांव है गोटका, वहां आज भी अगड़ों का दबदबा है, वे दलितों को गांव के मंदिरों में नहीं घुसने देते। शादी ब्याह के मौकों पर असपास फटकते ही वे दुत्कार कर भगा देते हैं। इतना ही नहीं, गांव का नाई उनके बाल नहीं काट सकता।

बरसों से हो रही इस ज्यादती और भेदभाव के खिलाफ गांव के ही एक दलित नौजवान जितेंद्र जाटव ने आवाज उठाई, नेताओं व अफसरों को लिखा, तो वह अगड़ों की आंख की किरकिरी बन गया। उसे धमकियां मिलने लगी, उसे झूठे केस में फंसाकर जेल भिजवाने की तैयारी होने लगी। दरअसल, जितेन्द्र ने साल 1995 में फैसला किया था कि वह अपनी शादी में घुड़चढ़ी के वक्त मंदिर में जरूर जाएगा। इसके लिए उसने अपने गांव के हालात बताते हुए बहुत से ओहदेदारों को चिट्ठी लिखी। इस पर वह पुलिस की मौजूदगी में मंदिर के अंदर तो चला गया, लेकिन अकेला पड़ गया। अगड़ों के जोरजुल्म व डर से उसकी बस्ती व परिवार वाले भी पीछे रह गए थे।

जितेन्द्र ने हिम्मत नहीं हारी, तब से बराबरी का हक पाने के लिए वह आज तक लड़ रहा है, क्योंकि बात सिर्फ मंदिर में घुसने तक लगी रोक हटाने की नहीं, जाति के आधार पर ऊंचनीच का फर्क मिटाने की है।

करना पड़ा पलायन :–

जितेन्द्र कहता है, ''हमारे गांव में दलितों के हालात आज भी अच्छे नहीं हैं, जांच को आए अफसर भी लीपापोती कर के उलाटा हमें ही धमकाते हैं, कहते हैं कि हमें बस इतना लिख कर दो कि किसी से कोई शिकायत नहीं है, वह हर तरह से हम पर समझौता करने के लिए दबाव बनाते हैं,'' गोटका में ज्यादातर दलितों के बीपीएल कार्ड नहीं बने हैं, इसलिए उनको घर व जमीनों के पट्टे भी नहीं मिले। सिर्फ 3 पट्टे दिए गए है, उनपर भी दबंगों का कब्जा है, दलितों के 16 परिवार अगड़ों के डर से गांव छोड़ कर जा चुके हैं।

एक दलित कुशलपाल ने जब भेदभाव के खिलाफ मोरचा खोला, तो उसे कई बार मारापीटा गया। बाद में उसे हत्या के एक फर्जी मामले में फंसा दिया गया। जब उसे कहीं से इंसाफ नहीं मिला, तो उसने तंग आकर अपना ठिकाना व धर्म दोनों बदल लिए, गोटका गांव तो हांड़ी का एक चावल है, अफसोस तो राजकाज चलाने वालों पर होता है, आखिर उनको इतना तो सोचना व देखना चाहिए कि यह कौन सा हिंदुस्तान और कैसी आजादी है, जिसमें दलितों के साथ आज भी बुरा बरताव हो रहा है।

दरअसल, यह सब जानबूझ कर एक साजिश के तहत किया जाता है। मंदिरों में घुसना तो दूर, दलितों को नल या कुंए से पानी तक नहीं भरने दिया जाता, ताकि वे नहा न सकें, कपड़े न धो सकें। ये घटनाएं तब की हैं जब दलित की बेटी का दम भरने वाली मायावती सन् 2007 से 2009 तक उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री थीं।

बिरेन्द्र बेरियार ज्योति के अनुसार बिहार में डायन के नाम पर महादलित औरतों पर कहर जारी है। डायन होने का आरोप लगाकर ऐसी औरतों और उनके परिवार को मारने पीटने और गांव से बाहर निकाल देने की घटनाओं में काफी इजाफा हुआ है।

2. मुंगेर जिले के धरहरा ब्लाक की गरीब औरत सुनीता पर डायन होने का आरोप मढ़कर उसके हाथ पैर तोड़ डाले। इसके बाद भी हैवानों की करतूत थमी नहीं और उसके बदन पर खौलता पानी डाल दिया। सुनीता दर्द से बिलबिलाती रही, पर कोई उसे बचाने के लिए नहीं आया। थाने में वह एफआईआर दर्ज कराने पहुंची, तो उसे डरा धमकाकर भगा दिया गया। सुनीता का गुनाह यही था कि उसने काम की एवज में पैसे की मांग की थी।

3. आरा के मठिया गांव में 65 साल की ऐतवारी देवी और उसके पति चंद्रिका राम की पिटाई इसलिए कर दी गई, क्योंकि लोगों का शक था कि एतवारी डायन है और गांव के बच्चों पर बुरी नजर रखती है, जिससे कई बच्चे बीमार पड़ गए।

4. शेखपुरा जिले के कारे गांव में कलावती देवी को नंगा कर उसकी पिटाई की गई, क्योंकि गांव वालों को लगा कि उसने डायन के जादू से बच्चों को मारा है उसके बेटे और बहू आगे बढ़े, तो उनको भी पीट–पीट कर अधमरा कर दिया। गांव के किसी बच्चे या जवान की मौत होने पर गांव वाले मानते हैं कि किसी डायन ने अपने काले जादू से उस मार डाला है और जिस किसी औरत पर शक होता है, उसे मारा पीटा जाता है, इतना ही नहीं, शव को जिंदा करने को कहा जाता है। बेचारी औरत चिल्लाती, रोती, गिड़गिड़ाती रहती है, पर कोई उसे बचाने नहीं आता है।

5. फारबिसगंज के मंडलटोला में रामचंद्र के 2 बच्चों मिथलेश और नन्नहीं की मौत हो गई, तो उनकी लाशों को 3 दिनों तक रखा गया और जादूमंतर से जिंदा करने की कोशिश की गई। डायन होने के आरोप झेलती औरत को जबरन गंदगी खिलाना, उसके साथ बलात्कार करना,

नंगा कर गांव में घुमाना जैसी शर्मनाक घटनाएं खुलेआम हो रही हैं, इसके बाद भी पुलिस प्रशासन ऐसे लोगों पर कोई कड़ी कार्यवाही नहीं कर पाता है, क्योंकि ऐसी करतूत करने वाले दबंग लोग ही होते हैं।

दलित समाज सबसे कमजोर है, इसलिए उन पर तरह –तरह के लांछन आसानी से लगा दिए जाते हैं। वे बेचारे इंसाफ के लिए चीखते चिल्लाते रहते हैं, पर कोई सुनने वाला नहीं है। उनकी जमीन या जायदाद पर कब्जा करने की मंसा से डायन का आरोप लगा कर तंग किया जाता है, ताकि वे गांव छोड़कर भाग जाएं और उनकी जायदाद पर आसनी से कब्जा जमा लिया जाए।

6. मध्यप्रदेश के शिवपुरी जिला में सन् 2004 में जमीन के झगड़े को लेकर 5 अगस्त को एक दलित नौजवान की बेरहमी से सवर्णों ने हत्या कर दी थी।

7. इस हादसे के कुछ दिन पहले ही छतरपुर जिले में एक दलित घंसू अहिरवार की आंखे निकाल ली गई थी। पिछले साल अक्टूबर में खंडवा जिले के राजगढ़ गांव में एक दलित के गले में जूतों की माला पहना कर उसे गांवभर में घुमाया गया था–मध्यप्रदेश में। दलितों पर जोर जुल्म की घटनाएं आम हो चली है, वजह, सदियों से पसरी छुआछूत की बीमारी, वर्ण व्यवस्था को पालने पोसने की साजिश, जमीन के झगड़े को लेकर जितने अत्याचार मध्यप्रदेश में हुए हैं, शायद ही देश के किसी और प्रदेश में हुए हों। ये झगड़े कांग्रेसी सरकार ने पैदा किए थे, दलितों को दलित एजेंडे के तहत चरनोई की जमीनें देने का ऐलान कर उन्हें पट्टे तो सरकार ने थमा दिए, मगर जब बारी कब्जों की आई, तो दलित अत्याचारों की बाढ़ सी आ गई कास्त का हक किसी को नहीं मिला। मुदद्तों से जो दलित मैला उठाता आया हो, गंदगी और जूते साफ करता आया हो, जीहुजूरी करते रसूखदार सवर्णें के पांव छूता रहा हो, जानवर सरीखा बन कर खेतों में मेहनत मजदूरी करता रहा हो, वह अगर खेती कर अपने पैरों पर खड़ा हो गया, तो ऊंची जाति वालों की गुलामी कौन करेगा, यह सामंती सोच मध्यप्रदेश में अत्याचार की बड़ी वजह बनी।

बड़े पैमाने पर दलित अत्याचार के शिकार होकर सरकार की तरफ से हताश हो मिली जमीनों की आस छोड़ बैठे तो इसे सवर्णों की जीत ही कहा जाएगा। जिन दलितों ने जमीनों पर कब्जा करने की कोशिश की, उनका अंजाम अच्छा नहीं रहा। उन्हें नंगा करके घुमाना या गले में जूते पहना कर जुलूस निकालना या फिर दलित दूल्हे को घोड़ी पर न बैठने देना आतंक फैलाने की कामयाब साजिश ऊँचे तबके की थी, जिसे प्रशासन कुर्सियों पर बैठा चुपचाप से देखता रहा।

निशाने पर औरतें–

औरतों को बेइज्जत करने में ऊंची तो ऊंची, पिछड़ी जाति वाले भी अव्वल रहते हैं, एक दौर तो ऐसा भी आया, जिसमें लगा मानो दलित औरतों को बेइज्जत करने की कोई होड़ सी लगी हो कि कौन किस तादाद में यह काम कर सकता है।

8. जुलाई, 2004 की मिसाल लें, तो हालात काफी गंभीर और चिंताजनक प्रतीत होते हैं। 10 जुलाई को मध्य प्रदेश के सिवनी जिले में 3 दलित औरतों के साथ सामूहिक दुष्कर्म का मामला काफी सुर्खियों में रहा था।

9. ये तीनों औरतें एक ही परिवार की थीं, जिन्हें घसीट कर गांव के बाहर ले जाकर बलात्कार किया गया था। इसी दिन भोपाल के नजदीक सीहोर के खड़ीगांव में एक दलित औरत को नंगा करके घुमाया गया था। 10 जुलाई के मामले की चर्चा खत्म हो जाती, उस से पहले ही 12 जुलाई को बुंदेलखंड इलाके के दमोह जिले के तेंदूखेड़ा गांव में 2 दलित औरतों के साथ गलत काम किया गया। ठीक 3 दिन बाद छिंदवाड़ा जिले के परासिया कस्बे में एक औरत को नंगा कर के घुमाया गया। इसी दिन उज्जैन के रामपुर गांव में एक 14 साला दलित लड़की के साथ बलात्कार किया गया। 17 जुलाई को फिर दबंग जाति वालों का कहर बरपा। राजगढ़ जिले में एक नाबालिग लड़की के साथ बलात्कार किया गया। चंबल इलाके की श्योपुर तहसील में एक और दलित औरत सवर्णों की हवस का शिकार बनी। छत्तीसगढ़ से सटा शहडोल जिला भी पीछे नहीं रहा। 25 और 31 जुलाई को 2 अलग–अलग घटनाओं में 3 दलित औरतों की इज्जत लूटी गई। 25 जुलाई का हादसा अनूपपुर में सामूहिक दुष्कर्म का था।

10. सन् 2006 में नवंबर के तीसरे हफ्ते में सद्दूपुरा गांव में जों हुआ, वह दिल दहला देने वाला तो है ही, साथ ही इसके पीछे ऊंची जाति वालों की रची साजिश की बू भी आती है। 8 सौ लोगों की आबादी वाले इस गांव में दलितों के महज 5 घर हैं। इन दलितों का एकलौता काम ऊंची जाति वालों की सेवाखुशामद और जीहुजूरी करना भर रहा है। 55 साला भागीरथ अहिरवार, 73 साला प्यारेलाल अहिरवार और 41 साला गज्जू अहिरवार का कुसूर केवल इतना था कि वे निचली जाति में पैदा हुए थे। इन्हें गधों पर बैठा कर घुमाने की वजह 5 साल पहले दिग्विजय सिंह के राज में मिली जमीन का पट्टा था, जो इन पर कहर बन कर टूटा। इन दलितों को पट्टे पर मिली जमीन हड़पने की नीयत से ऊंची जाति वालों ने इन्हें गांव से भगा देने की साजिश रची। इन पर जादू टोने करने का इलजाम लगाया और बाद में बेइज्जत किया। ऊंची जाति वालों की एक औरत और उसके बच्चे की अकाल मौत का जिम्मेदार इन तीनों को ठहराते हुए सबक सिखाने की गरज से तमाम ऊंची जाति वाले एकजुट हो कर हैवानियत पर उतर जाए। पहले इन्हें एक झूंठे मामले में फंसा कर हवालात पहुंचाया और जमानत पर छूट कर आने के बाद धौंस दी गई कि गांव छोड़ दो, नहीं तो अंजाम ठीक नहीं होगा।

वाकई अंजाम ठीक नहीं हुआ। हादसे के दिन तीनों दलितों का गांव के लोगों की मौजूदगी में मुंडन कराया गया, चेहरों पर कालिख पोती गई, गले में जूते चप्पलों की माला

पहनाई गई और फिर गधों पर बैठा कर इन की परेड गांव भर में कराई गई। इस गधा परेड में औरतें गीत गाती पीछे पीछे चल रही थीं और बाकायदा बैंडबाजा भी बज रहा था। सैकड़ों लोगों की मौजूदगी में इन तीनों की जम कर पिटाई की गई और गधे पर बैठा कर जुलूस निकालने के दौरान लगातार जूते भी मारे गए। दबंगों ने इस परेड की वीडियो रिकॉर्डिंग भी कराई। इसके पहले ऊंची जाति की औरत की मौत का जिम्मा इन दलितों के सिर डालते हुए इन से 10–10 हजार रूपए भी वसूले गए थे। यह रकम गया जा कर पूजा और पिंडदान के नाम पर जबरन वसूली गई थी। एक तरह से यह शर्त थी कि गांव में रहना है, तो यह दान तो करना ही पड़ेगा साथ ही, जो लोग साथ में गया जाएंगे, उन का भी पूरा खर्च उठाना पड़ेगा। गया से लौटते ही हुआ उलटा। इन तीनों को रात भर पेड़ से बांध कर रखा गया और रूक रूक कर पिटाई की गई। सुबह पंचायत के फैसले के मुताबिक गधा परेड करवाई गई। हादसे के बाद डरे हुए दलित गांव छोड़ कर भाग गए, तमाशाई भी जा चुके थे, सद्दूपुरा की इस घटना का ब्योरा भी पुलिस को मिल चुका था। लेकिन पुलिस ने कोई कार्यवाही नहीं की।

बाद में थोड़ा बहुत होहल्ला मचा, तो पुलिस विभाग हरकत में आया और 7 लोगों के खिलाफ मामला दर्ज कर लिया गया। घटना ज्यादा तूल न पकड़े, इसलिए बड़े पुलिस अफसरों ने गांव का दौरा भी कर लिया, दलित पहले ही गांव से पलायन कर गये थे इसलिए उनकी तरफ से घटना का विवरण देने वाला कोई नहीं मिला।

दलितों को जो जमीन पट्टे पर मिली थी, वह रसूखदार दीक्षित ब्राह्मण ने अपने कब्जे में कर रखी थी। जब पटवारी नपती करने दलितों के साथ मौके पर पहुंचा, तभी इस हादसे के बीज बोए जा चुके थे, दलितों को दीक्षित ब्राह्मणों ने मारपीट कर भगा दिया था।

दीक्षितों का साथ उन पटेल जाति के लोगों ने भी दिया, जिन के यहां ये दलित मजदूरी करते थे क्योंकि पटेलों को डर था कि अगर इन दलितों को जमीन मिल गई, तो सस्ते मजदूर हाथ से निकल जाएंगे। इसलिए, अपने मतलब के चलते ब्राह्मणों और पटेलों ने हाथ मिला लिया।

बाकी लोगों को भ्रमित करने के लिए अफवाह फैलाई गई कि ये दलित जादू टोना करते हैं, इसलिए गांव पर मुसीबतें आ रही हैं और अकाल मौतें हो रही है। इसलिए, इन्हें खदेड़ दिया जाए। सीधे सीधे दलितों ने जाने से मना किया, तो उन्हें दूसरे तरीके से भगा दिया गया। भागीरथ ने इन ऊंची जाति वालों की ज्यादती के खिलाफ थाना जाने की हिमाकत की तो उसे बीबी समेत मारापीटा गया, पुलिस ने यह कहते हुए उसे भगा दिया कि पंचायत में मिल बैठ कर मामला निबटा लो, पंचायत में यह मामला किस तरह निबटा, यह सामने है।

छतरपुर के एक पत्रकार राजेश चौरसिया के अनुसार अगर 50–60 दलित इकट्ठा हो कर हादसे की रिपोर्ट लिखाने नहीं जाते, तो शायद मामला भी दर्ज नहीं होता। मामले पर

लीपापोती की कवायद शुरू कर दी इसलिए लगता नहीं है कि दलितों को न्याय मिल पाएगा। बकौल राजेश चौरासिया, ''मीडिया, पुलिस, नेता सब के सब ऊँची जाति वालों के हिमायती हैं।''

दरअसल, दलित तबका मध्यप्रदेश में न तो जागरूक है और न ही एकजुट इन घटनाओं से साबित होता है कि ऊंची जाति वालों को धर्मकर्म के नाम पर पैसा लूटने, छोटी जाति वालों को बेइज्जत करने के अलावा अब गधा परेड कराने की भी छूट मिल गई है।

सांप्रदायिकता और जातीय नफरत के हैवानियत भरे कारनामों की ओर इशारा करने वाली इन पंक्तियों की खौफनाक सच्चाई इस बार हरियाणा के गोहाना कस्बे से उजागर हुई।

11. यह घटना 2 जातियों जाट और दलितों के आपसी टकराहट का अंजाम थी। 27 अगस्त, 2005 को गोहाना के पुराना बस अड्डे के पास बने एक फोटो स्टूडियों पर वाल्मीकि बस्ती का शिव कुमार उर्फ काका, जो चंडीगढ़ में एक्साइज विभाग में ड्राइवर है, राशनकार्ड के लिए फोटो खिंचवाने गया तो यहां घड़वाल गांव के बलजीत जाट ने उसकी पत्नि को लेकर भद्दी बात कह दी। इस पर उनमें कहासुनी हो गई और बलजीत जाट ने शिव कुमार की पिटाई कर दी। इस पर शोर सुन कर वाल्मीकि बस्ती के लोग इकट्ठे हुए और उन आक्रोशित लोगों ने बलजीत की पहले पिटाई की, फिर किसी ने उस की चाकू और लाठियों से मार कर हत्या कर दी। बलजीत की हत्या के बाद जाटों में भड़के गुस्से को देखते हुए वाल्मिकी बस्ती के लोग घटना से पहले ही घर छोड़कर दूसरी जगहों पर जा चुके थे। वाल्मिकी बस्ती के एक पीड़ित बाबूलाल बताते हैं कि घड़वाल गांव के लोग 2 हजार के करीब थे उन्होंने लूटपाट मचाई। लोग बोतलों में भरकर पैट्रोल लाए थे। घरों में गैस सिलेण्डर खोले, पेट्रोल छिड़क–छिड़क कर आग लगा दी। जेवरात भी ले गए।

आगजनी के दौरान कई घरों में धमाके गूंजने लगे, जो गैस सिलेंडरों के थे। आग इतनी भयानक थी कि गोहाना की फायर बिग्रेड व्यवस्था बौनी हो गई व रोहतक, सोनीपत, करनाल से भी दमकलें मंगवानी पड़ी। जब चारों और धुंआ ही धुंआ नजर आने लगा, तो जिला अफसरों ने पुलिस को केवल हवा में गोलियां दागने का आदेश दिया।

12. मिर्चपुर (हरियाणा) में 19 अप्रैल, 2010 को कुत्ते के काटने पर जाट युवक और दलित युवक के बीच हुए विवाद का खामियाजा 21 अप्रैल को देखने को मिला। मिर्चपुर के जाटों ने संगठित होकर दलितों के घरों में आग लगा दी, जिसमें 22 घर और दुकानें जलकर राख हो गई। ताराचन्द और उसकी विकलांग बेटी 'सुमन' की मौत जलने से हो गई। लाखों की सम्पत्ति भी जलकर राख हो गई। वैसे हरियाणा प्रदेश जातीय उन्माद के लिए कुख्यात रहा है। सन् 2002 में दुलीना–झज्जर कांड में पांच दलितों की हत्या कर दी गई थी। 2003 में हरसौला–कैथल कांड में 100 से ज्यादा दलितों को गांव छोड़कर जाना पड़ा। सालवन–करनाल कांड में दलित बस्ती के कई घर राख कर दिये गये। 23 अप्रैल को मिर्चपुर कांड की गूंज संसद में भी सुनाई

पड़ी। 2006 में भी इसी गांव में दलित प्रताड़ना के उदाहरण सामने आए। आज अनुसूचित जाति और जनजाति सुरक्षा उत्पीड़न अधिनियम को बने 20 साल हो चुके हैं, लेकिन हरियाणा में इसका पालन कतई नहीं हो रहा है।

13. मिर्चपुर में दलितों की आंखों के आंसू बहना बन्द भी नहीं हुए थे, उनके घरों में लगी आग अभी ठंडी भी नहीं हुई थी कि 'अंबाला के गांव सोहाता में दलितों को राजपूतों के गुस्से का शिकार होना पड़ा। राजपूतों ने दलित वर्ग के दूल्हे को नगर खेड़ा पर माथा टेकने से रोका, जब वह नहीं माना तो पथराव कर दिया। घटना के बारे में बताया जाता है कि बराड़ा उपखंड स्थित गांव सोहाता के बृजपाल की बुधवार को गांव हल्दरी में शादी होनी तय थी। मंगलवार की शाम घुड़चढ़ी की रस्म निभाई जा रही थी। गांव में शादी से पहले नगर खेड़ा में माथा टेकने की परम्परा है। इसके लिए बृजपाल रात करीब नौ बजे घोड़ी पर चढ़कर नगर खेड़ा की ओर जा रहा था। गांव के कुछ दबंगों ने उसे घोड़े पर चढ़कर खेड़े पर जाने से रोका। लेकिन उसने अनसूनी कर दी। इस पर दबंग क्रोधित हो गये। उन्होंने पथराव शुरू कर दिया, जिससे भगदड़ मच गई। पथराव में 12 लोग घायल हुए, 30 लोगों पर मुकदमा हुआ। किसी तरह सरपंच के हस्तक्षेप से माथा टेका और बारात विदा हुई।''

राजस्थान दलित उत्पीड़न के मामलों में देश में दूसरे स्थान पर है। राजस्थान में सामन्तशाही है। राजस्थान में ग्रामीण जीवन छूआछूत से अधिक ग्रसित है, सबल वर्ग का आतंक बरकरार है।

14. राजस्थान की राजधानी जयपुर जिला के चकवाड़ा गांव में एक बैरवा जाति का नवयुवक सन् 2002 में तालाब पर सवर्णों के लिए नियत घाट पर नहा लिया क्योंकि तालाब में दलितों के लिए नियत घाट का पानी सूख गया था। इस पर गांव वालों ने पूरे बैरवा जाति के लोगों पर 51000/– रू. का जुर्माना कर दिया। साथ ही दुकानदारों ने सामान देने से मना कर दिया। मामला सरकार तक पहुँचा। मुकदमा दर्ज हुआ, बैरवा जागरूक थे उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। जुर्माना नहीं भरा। गांव में आतंकित रहे। सरकार को पुलिस चौकी लगानी पड़ी। गांव वालों ने तालाब में नहाना ही बंद कर दिया। अब भी गांव वाले उस तालाब पर स्नान नहीं कर रहे हैं। वहाँ एक पूजारी ब्राह्मण का घर है। वह मन्दिर में पूजा करता है उसकी आजीविका बिना परिश्रम के सुरक्षित है सारे दिन लोगों को धर्म के नाम पर बाँटने में व्यस्त रहता है।

15. पाली जिले के एक गांव में एक मेघवाल नवयुवक ने स्कूल से अपनी लड़की को घर लाते समय बाई सा कह दिया। एक ठाकुर (क्षत्रिय) ने सुन लिया। मेघवाल को कहा कि तू तेरी छोकरी को बाई सा कहेगा तो फिर ठाकुर अपनी लड़कियों को क्या कहेंगे ? और उस मेघवाल नवयुवक की हत्या कर दी। केवल अपनी लड़की को बाई सा कहने मात्र पर ही उसे अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। गांव में दलित मन्दिरों में नहीं जा सकते। सार्वजनिक पनघट उनकी

पहुँच से बाहर है। शादी ब्याह में बैण्ड बाजे के साथ गांव में प्रवेश नहीं कर सकते। ऐसी घटनाएँ आये दिन घटित होती रहती हैं।

16. 15 फरवरी, 2010 को रात्रि करीब 9.00 बजे ग्राम–धीनवा, पुलिस थाना–निम्बाहेड़ा, चित्तौड़गढ़ में एक दलित–परिवार दूल्हे, जगदीश मेघवाल की कार में बैठाकर बैण्ड–बाजे के साथ सम्मानजनक तरीके से बिन्दौली निकाली जा रही थी, तभी आरोपी रघुनाथ सिंह, उप–सरपंच गुलाम सिंह एवं दो अन्य लोग मोटर साईकिलों पर बैठकर आये, बिन्दौली को रोक लिया और कहा कि ''नीच जात चम्मटों, तुम्हारी हिम्मत कैसे हो गई, जो तुम जीप में बैठकर बिन्दौली निकाल रहे हो। यह राजपूतों का गांव है। इसमें तुम्हें बिन्दौली नहीं निकालने देंगे। अगर तुमने हमारी बात नहीं मानी तो अंजाम बुरा होगा।'' इस धमकी के बाद आरोपी गुलाम सिंह, रघुनाथ सिं, गजेन्द्र सिंह, लाल सिंह, देवेन्द्र सिंह, बबलू सिंह, दिलीप सिंह, भगवत सिंह आदि ने दूल्हे को पकड़कर जीप से नीचे उतार दिया और उसके साथ लात–घूसों से मारपीट करने लगे। आरोपियों ने दूल्हें पर तलवार से भी वार किया, जिसके कारण उसकी एक आंख पर चोट आई।

17. ऐसी ही घटना ग्राम–सुमाड़िया, तहसील–आमेट, पुलिस थाना–केलवा, जिला–राजसमन्द की है, जहां 20 अप्रैल 2010 को दलित दूल्हे पप्पू लाल पुत्र सोहन सालवी की बिन्दौली को राजपूत समाज के रूप सिंह, गोपाल सिंह, सज्जन सिंह, भैरू सिंह आदि ने रोक लिया और दूल्हे सहित बिन्दौली में शामिल महिलाओं और पुरूषों के साथ मारपीट की। दूसरे दिन 21 अप्रैल को पुलिस के सहयोग से बरात की बिन्दौली निकाली गई, लेकिन घटना के बाद दलितों एवं गैर–दलितों में दुश्मनी की भावना बढ़ गई। दलितों को पर्याप्त सुरक्षा नहीं दी गई है।

18. भरतपुरा जिला के गांव नंगला देशवाल में दिनांक 20 मई, 2010 को सुबह 6.00 बजे पीड़िता श्रीमती महादेवी पत्नी श्री विशम्भर जाटव सरकारी हैण्डपम्प जो कि दलितों की जमीन पर जाटों के घर के सामने लगा हुआ था उस पर पानी लेने गई थी। वहां पहले से मौजूद रनवीर सिंह पुत्र फूलसिंह जाट अपनी भैंसों को नहला रहा था। काफी देर खड़ी होने पर भी महादेवी का पानी भरने का नम्बर नहीं आया तो महादेवी ने पानी भरने के लिए तथा उसकी परात हटाने के लिए कहा तो आरोपी नवाब सिंह ने दलित महिला का मटका फोड दिया, उसके साथ गाली–गलौच की व जाति सूचक शब्दों से अपमानित किया। उसी समय पास में से गुजर रहे लालचन्द पुत्र श्री रघुपत जाटव ने जब आरोपी को मारपीट व गाली गलौच करने से रोका तो उसके साथ भी आरोपी ने मारपीट की। आरोपियों ने पीड़ित लालचन्द जाटव के घर पर भी आकर मारपीट की, जिससे उसके दांत टूट गये, जिसकी रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए थाना डीग गये तो, पुलिस वालों ने रिपोर्ट दर्ज करने से मना कर दिया मजबूरन पीड़ितों को इस्तगासा करना पड़ा।

पुनः दिनांक 21.05.2010 को करीब सांय 6.00 बजे जाट समुदाय के लोग एकराय होकर आये और जाटव बस्ती में गाली–गलौच की तथा बदन सिंह पुत्र बुद्धि जाटव को बुरी तरह से

मारा पीटा, उसके बाद करीब दो घण्टे तक जमकर पथराव किया, और नबाव जाट ने बन्दूक से हवाई फायर कर दलितों को घेर लिया। उनके साथ मारपीट की पुलिस ने कोई कारगर कार्यवाही नहीं की।

19. जनवरी 2010 में हुए पंचायत राज चुनावों में ग्राम पंचायत भाउन्द जिला पाली की ग्राम पंचायत अनुसूचित जाति महिला के लिए आरक्षित हुई इस पर श्रीमती दरगी देवी ने अपनी उम्मीदवारी रखी और निर्वाचित हुई। पीड़िता दरगी देवी पत्नी श्री चुन्नीलाल मेघवाल सरपंच ग्राम पंचायत भांटूद ग्राम पंचायत के सरपंच पद पर निर्वाचन के बाद से निर्वाचित उपसरपंच सुरेश कुमावत देव व उसके परिवार के लोग उससे दुश्मनी पाले हुए थे। दिनांक 23 फरवरी, 2010 को ग्राम पंचायत की पहली कोरम बैठक में भी पीड़िता के साथ दुर्व्यवहार किया गया। परन्तु आपसी समझाइस से पीड़िता सरपंच ने मुकदमा दर्ज नहीं करवाया इसी कारण उपसरपंच सुरेश कुमार अपने आप को अधिक दबंग समझने लगा। आरोपी के हौंसले बुलन्द हो गये और आरोपी उपसरपंच सुरेश कुमार पुत्र हंसाराम ब्राह्मण, भरत कुमार पुत्र हंसाराम, निखिल पुत्र उम्मेदमल, गोविन्द पुत्र गोरीशंकर, अमृतलाल पुत्र शंकरलाल, अतुल पुत्र ओमशंकर व जीगर पुत्र रतनलाल जाति ब्राह्मण ने एकराय होकर दिनांक 08 मार्च, 2010 को ग्राम पंचायत की बैठक में दलित महिला सरपंच दरगी देवी मेघवाल व उसके पति चुन्नीलाल मेघवाल के साथ मारपीट कर जाति सूचक शब्दों से अपमानित किया साथ ही दलित महिला सरपंच की आरोपियों ने भरी सभा में कपड़े फाड़ कर लज्जा तार–तार कर दी। इस अपमान को दलित महिला सरपंच सहन नहीं कर सकी और पुलिस थाना नाना मे इसकी एफ.आई.आर. संख्या 36/10 दिनांक 8.3.2010 अन्तर्गत धारा 143, 341, 323, 354 आई.पी.सी. एवं धारा 3 1 (X) व (XI) अनुजाति/जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम में दर्ज करवाई गई, पुलिस मामले को कमजोर कर रही है।

20. **<u>दलित बालक की बलि देकर किया तांत्रिक ने धर्मशाला का उद्घाटन</u>** : घटना ग्राम मूंडियासर जिला दौसा राजस्थान की है। दिनांक 03 जून, 2010 को शाम के समय दुर्गा लाल बैरवा ठेकेदार मृतक के घर पर आया और मृतक राजेन्द्र बैरवा को श्री मरघट वाले बाबा धाम, मेहन्दीपुर बालाजी, जिला दौसा में धर्मशाला का उद्घाटन समारोह में काम करने के लिए कहकर राजेन्द्र को बरगला कर ले गया। दिनांक 3 व 4 जून 2010 को मृतक की माँ ने राजेन्द्र को कई बार फोन किया। लेकिन उसने उठाया नहीं, इसके बाद में उर्मिला ने ठेकेदार को फोन किया उसने भी नहीं उठाया। दिनांक 4 जून, 2010 को प्रातः 11.00 बजे धर्मशाला का उद्घाटन करना था इस उद्घाटन समारोह में मुख्य अतिथि के लिए श्री विजय गोयल, पूर्व केन्द्रीय मंत्री व भाजपा के राष्ट्रीय महासचिव व अन्य विशिष्ट लोग दिल्ली से आये थे। इसलिए इस समारोह में काफी भीड़ थी। उद्घाटन की खुशी के अवसर पर भाजपा नेता के साथ आये अंगरक्षक मुकेश माहेश्वरी ने खुशी का इजहार करने के लिए हवाई फायर किये। एक गोली हवाई फायर

हुई लेकिन दुसरे हवाई फायर में बन्दुक सामने पास में ही खड़े राजेन्द्र बैरवा के सीने में लगी जिसकी वजह से उसने मौके पर ही दम तोड़ दिया। गांव वालों का कहना है कि इस धर्मशाला के निर्माण में एक व्यक्ति की बली देनी थी ताकि आगे धर्मशाला के संचालन में किसी प्रकार का विघ्न पैदा न हो इसके लिए राजेन्द्र की पहले बली चढ़ाई गई है तथा बाद में यह अफवाह फैलाई गई है कि हवाई फायर मे गोली लगने से लड़के की मौत हो गई जब कि यह मौत बली का दूसरा रूप है। दलित युवक को इसलिए चुना गया कि युवक गरीब परिवार से था और इनकी आवाज को दबाया जा सकता है।

21. ग्राम–अरनिया, पंचायत समिति पीथलपुरा, पुलिस थाना–कनोड़, जिला–उदयपुर के दबंगों ने तो दलित मांगीलाल पुत्र शंकर मेघवाल को पुत्री की शादी में दूल्हे को घोड़ी पर बैठकर तौरण नहीं मारने की धमकी दे डाली। इस घटना की जानकारी जब दलित अधिकार केन्द्र को मिली, तो तुरन्त संबंधित अधिकारियों को पत्र भेजकर आरोपियों के खिलाफ नियमानुसार कार्वाही करने की मांग की गई।

22. श्री नन्दकिशोर बैरवा ग्रामगढ़ खेड़ा जिला करोली ने पांच रूपये देकर कचौरी खरीदकर खायी और वही पर रखी बाल्टी में से पानी पी लिया इस घटना को देखकर दुकानदार पिंकी शर्मा ने दलित पीडित को गाली गलौच की व जाति सूचक शब्दों से अपमानित करते हुए कहा कि **''साले चमार तूने बाल्टी से पानी कैसे पिया, इसके हाथ लगाकर सब को भ्रष्ट कर दिया''** पिंकी ने पीड़ित दलित युवक को पकड़ लिया और उसको भरे बाजार में ही थप्पड मारे। पिंकी के चाचा बाल किशन शर्मा और पप्पू जिसकी दुकान पिंकी की दुकान के सामने है और चाय की दुकान करता है, ने भी पीड़ित को पीछे से आकर पकड़ लिया और उसको खींचकर नीचे पटक दिया इतने में राजेश उर्फ रवि पुत्र रामजी लाल बैरवा वहाँ आया व अन्य लोग भी इकट्ठे हो गये जिन्होंने पीडित को बीच–बचाव कर छुड़ाया। आरोपियों से बचकर पीडित घर पर वापिस आ रहा था तो औषधालय के सामने पुनः उसे आरोपी सुरेश शर्मा, महेश, हनुमान, उत्तम पाण्डे, आदि ने रोक कर मारपीट की जिससे उसकी बाई आंख के ऊपर गंभीर चोट आई, हाथ व पैरों में भी चोट आई।

23. दिनांक 05 जून, 2010 को पीड़ित के पिताजी श्री किशोर लाल बैरवा अध्यापक सुबह 8. 30 बजे दाढी बनवाने बाजार में गये तो उनको वक्त आरोपियों ने घेर लिया और उन्हें अपमानित करने लगे। तो वो वहां से वापिस आ गये। प्रातः 9 बजे के लगभग सुरेश शर्मा, हनुमान, पिंकी शर्मा, महेश, उत्तम, बालकिशन देशराज मीणा, प्रहलाद महन्त, रमेश जैन व अन्य 15–20 लोग, एक राय होकर हथियारों से लैस होकर आये और पीड़ित परिवार पर पुनः हमला बोल दिया जिससे पीड़ित परिवार के कई लोग गम्भीर रूप से घायल हुये। गम्भीर चोट के कारण कैलाश व विजय को दिनांक 5 जून, 2010 को स्थानीय चिकित्सालय में भर्ती करवाया गया जहां से प्रातः 11.30 बजे एस.एम.एस. जयपुर रैफर कर दिया गया।

24. लालखान अखैपुरा, बाल्मिकी बस्ती, जिला–मुख्यालय, अलवर शहर में कचहरी के पास स्थित है। यहां बाल्मिकी समुदाय का मुख्य रोजगार सूअर पालन या मजदूरी है। पीड़ित मुकेश कुमार बाल्मिकी पुत्र श्री शिवराज बाल्मिकी निवासी लालखान अखैपुरा बाल्मिकी बस्ती अलवर ने अपने तीन बच्चों कु. चन्दन बाल्मिकी, राहुल कुमार व विनय राजा का एडमीशन बालिका सिटी पब्लिक शिक्षा समिति, 5 कचहरी रोड़, नई सड़क अलवर की क्रमशः कक्षा 10,9,8 में जुलाई 2010 में करवाया था तथा एडमिशन के बाद तीनों बच्चे नियमित रूप से स्कूल जाने लगे। लेकिन सप्ताह भर बाद जब विद्यालय प्रशासन को मालूम चला कि उक्त तीनों बच्चे बाल्मिकी समुदाय से हैं तो विद्यालय प्रबन्धक श्री मिश्रा ब्राह्मण ने पीड़ित मुकेश कुमार व उसकी पत्नी को बुलाकर कहा कि ***"आप अपने बच्चों को किसी अन्य स्कूल में ले जायें, हमारे यहां बाल्मिकी जाति के बच्चे नहीं पढ़ सकते।"*** और बच्चों को स्कूल से निकाल दिया।

पीड़ित ने बार–बार विद्यालय प्रशासन से गुहार की कि मैंने पूरी फीस जमा करवा दी है, स्कूल की ड्रेस बनवा दी, पुस्तकें व कॉपियां खरीद ली हैं इसलिए इन्हें पढ़ने दें। परन्तु दलित को स्कूल प्रबन्धन ने यह कहकर स्कूल में पढ़ाने से मना कर दिया कि तुम्हारे तीन बच्चों से मेरा बडा नुकसान हो जायेगा मेरी स्कूल के ऊँची जाति के बच्चे स्कूल छोड़कर चले जायेगें तो मुझे फीस नहीं मिल पायेगी मेरा स्कूल बन्द हो जायेगा इसलिए मैं नहीं चाहता कि तुम्हारे बच्चों की वजह से मुझे स्कूल के ताला लगाना पड़े, जिला प्रशासन ने न तो बच्चों को वापिस प्रवेश दिलाया और नहीं विद्यालय की मान्यता ही समाप्त की शिक्षा का मौलिक अधिकार वर्ण व्यवस्था की आग में जलकर राख बन गया। राज्य सरकार मूक दर्शक बनी हुई है।

25. 19 जुलाई, 2010 को ग्राम–बेड़वा, पुलिस थाना–खुनखुना, जिला–नागौर में दलित दूल्हें चिरंजी एवं नटवर वाल्मिकी को घोड़ी पर बैठाकर बिन्दौली निकालना एक समाज के कतिपय लोगों को इतना नागवार गुजरा कि उन्होंने बिन्दौरी पर पत्थरबाजी करते हुए तलवारों, कुल्हाड़ियों एंव लाठियों से ताबड़तोड़ हमला कर दिया। हमले में बारात में शरीक पूरणराम, दीपक, पप्पू, लक्ष्मण, रामनिवास, चौथूराम, मुन्नालाल, सोहनलाल, बीनूकुमार, मुकेश, राजू आदि गंभीर रूप से घायल हो गये। पीड़ितों ने घटना की सूचना तुरन्त पुलिस को दे दी, लेकिन पुलिस मौके पर दो घण्टे बाद पहुंची। पुलिस जाप्ते में बारात को दातारामगढ़ के लिए रवाना किया गया, परन्तु कोई ठोस कार्यवाही नहीं की गई।

26. ग्राम–सिनोदिया, पुलिस थाना–रूपनगढ़, जिला–अजमेर में 28 जून, 2010 को दलित दूल्हें के साथ घटित घटना के कारण भयभीत दलित परिवार को 19 जुलाई, 2010 को ग्राम–मारोठ, पुलिस थाना–नांवा, जिला–नागौर से आई बारात की चढ़ाई भी पुलिस सुरक्षा में करवानी पड़ी।

27. जयपुर जिला थाना बगरू क्षेत्र में स्थित गांव मुंडिया रामसर बड़ा गांव होने के कारण यहां दो निजी व एक उच्च माध्यमिक स्तर का सरकारी विद्यालय है। कमजोर आर्थिक स्थिति

के कारण अनुसूचित जाति के ज्यादातर बच्चे सरकारी विद्यालय में ही पढ़ते हैं। गांव में तथाकथित उच्च वर्ग का वर्चस्व होने के कारण यहां आये दिन धार्मिक अनुष्ठान आयोजित होते रहते हैं, जिनमें दलितों को शामिल नहीं किया जाता है। धार्मिक अनुष्ठानों से दलितों का बहिष्कार रखने की परम्परा है। गांव में महाराज पूरणदास के सानिध्य में दिनांक 1 सितम्बर 2010 से एक सार्वजनिक धार्मिक अनुष्ठान का आयोजन किया जा रहा था, जिसमें तथाकथित उच्च जाति के लोगों से ही आर्थिक व शारीरिक सहयोग लिया गया। इस अनुष्ठान (भागवत कथा) को सफल बनाने हेतु दिनांक 18.09.2010 को कलश यात्रा का आयोजन रखा गया, जिसमें गांव के सरकारी व नीजि विद्यालयों की छात्राओं को भी शामिल किया गया, लेकिन अनुसूचित जाति की छात्राओं को ***'नीची जाति'*** की बताकर इस कलाश यात्रा में शामिल होने से रोका गया। कलश यात्रा में लड़कियों को शामिल होने की सार्वजनिक घोषणा सरकारी विद्यालय के अध्यापकों द्वारा प्रत्येक कक्षा में जाकर की गई। चित्रलेखा पब्लिक सी.सैकेण्डरी स्कूल व राज ग्रामीण सी.सैकेण्डरी स्कूल के अध्यापकों ने छात्राओं से कहा कि जो भी कलश यात्रा में शामिल होना चाहे, वह जा सकती हैं, लेकिन राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय मुंडिया में अध्यापक श्री सुरेश गौतम शर्मा ने कक्षा में जाकर कहा कि ***"अनुसूचित जाति की छात्राएं बैठी रहें और शेष उच्च जाति की छात्राएं कलश यात्रा में शामिल होने के लिए चली जाए।"*** कुछ दलित छात्राए जानबूझकर कलश यात्रा में शामिल होने चली गई, तो आयोजन कमेटी के सदस्यों ने उन्हें पहचान लिया और बलाई व रैगर (अछूत) जाति की बताकर कलश यात्रा से बाहर निकाल दिया। कु. मेघा पुत्री श्री रामस्वरूप वर्मा जो कि चित्रलेखा विद्यालय के कक्षा 9 की छात्रा है वह भी कक्षा में अध्यापकों द्वारा की गई घोषणा के अनुसार कलश यात्रा में शामिल होने चली गई, जहां आयोजकों ने भूलवश उसके हाथ पर मौली बांध दी, तिलक लगा दिया तथा कलश दे दिया, परन्तु जैसे ही आयोजन कमेटी को यह मालूम चला कि यह लड़की अनुसूचित जाति (अछूत जाति) की हे, तो उन्होंने बालिका को अपमानित करते हुए उससे कलश छीन लिया, और कलश यात्रा से बाहर निकाल दिया।

छात्राओं के साथ इस कथित अपमानजनक व्यवहार का पता जब दलित समुदाय के लोगों व अभिभावकों को चला तो वे सभी एकत्रित होकर विरोध करने लगे, लेकिन उनकी बात को नहीं सुना गया बल्कि उन पर अनुष्ठान में व्यवधान डालने का आरोप लगाकर प्रशासन के जरिये मामले को दबाने का प्रयास किया गया। मामले की जानकारी स्थानीय अधिकारियों तक पहुंचाई गई लेकिन वहां भी कोई सुनवाई नहीं हुई।

एक दलित ने दबी जबान में यह सत्य उद्घाटित किया कि दलित छात्र–छात्राओं और स्वाभिमानी युवाओं ने जब कलश यात्रा में दलित बालिकाओं को शामिल ना करने की घटना को लेकर विरोध प्रदर्शन किया और पुलिस प्रशासन तथा मीड़िया तब बात पहुंचाई तो सभी गैर दलित एकजुट हो गये और पंचायत कर यह मौखिक फरमान जारी किया गया कि यदि दलितों की दुकान से कोई सामान खरीदेगा तो उस पर 501/–रू. जुर्माना होगा। इसका जीता–जागता

उदाहरण यह है कि अशोक वर्मा की सब्जी की दुकान के सामने लगी पट्टी को तोड़ दिया गया जिस पर कि वह सब्जी रखकर बेचता था।

कैसे करें तरक्की :–

दलितों को यही बताया जाता है कि तुम्हारी निचली जाति, गरीबी व दुख तकलीफ सब तुम्हारे पिछले जन्म के बुरे कर्मों का नतीजा है, इसलिए तुम इस बदहाली की दलदल से नहीं उबर सकते। वे अपनी बदहाली को मजबूरी समझने लगते हैं। बिना किएधरे मुफ्त की खाने वालों को बड़ा व निचली जाति वालों को सेवा करने वाला और छोटा माना जाता है, इसलिए हमारे समाज में सब के साथ एक जैसा बरताव नहीं किया जाता। खासकर, दलितों व सफाई मुलाजिमों के साथ जानवरों से भी बदतर बर्ताव किया जाता है। निचले तबके में से अगर कोई भी कहीं आगे बढ़ता है, तो अगड़े, अमीरों को चिंता हो जाती है कि उन की सेवा कौन करेगा, इसलिए वे दलितों को हर तरह से धकेल कर पीछे रखना चाहते हैं। यही वजह है कि ज्यादातर दलितों की माली हालत बेहद खराब है। इसे सुधारने के लिए बहुत सी सरकारी कोशिशें हुई, पर वे ईच्छाशक्ति के अभाव में सब आधी अधूरी ही साबित हुई।

जाति प्रथा के इस जहर को बढ़ाने में पंडे पुजारियों का बड़ा हाथ रहा है, क्योंकि इससे उनका फायदा होता है। इसलिए किसी कीमत पर इसे खत्म नहीं होने देना चाहते। मीडिया के बढ़ते असर की वजह से बड़े शहरों का माहौल थोड़ा अलग दिखाई देता है, लेकिन गांव कस्बों में सामंती सोच आज भी जिंदा है।

नेता, अफसर, दबंग और बिचौलिए दलितों की कमजोरी का जमकर नाजायज फायदा उठाते हैं। कदम–कदम पर उन्हें धमकाते व सताते हैं। खेत खलिहानों, गोदामों, सड़कों व ईंट भट्ठों वगैरह पर उनसे काम तो खूब जम कर लिया जाता है, लेकिन मजदूरी देते समय उन का हक मारा जाता है। इतना ही नहीं, सरकारी योजनाओं तक में उन्हें दिए जाने वाले पैसे में भी धांधली की जाती है। दलितों के अंदर बैठे आक्रोश, उनकी उपेक्षा, उन पर समय–समय पर होने वाले जुल्म के विरोध के कारण सामाजिक समीकरण भी पिछले पचास वर्षों में बहुत बदल गए है। पहले जहां ब्राह्मणों व ठाकुरों के कुओं से वे पानी नहीं भर सकते थे, न ही उनके सामने खाट पर बैठ सकते थे, न ही मंदिरों में प्रवेश करते थे, वहीं अब ब्राह्मणों व ठाकुरों के साथ–साथ अन्य जातियों ने भी ब्राह्मणों का साथ देना शुरू कर दिया है, इनमें खासकर 'ओबीसी' कही जाने वाली वे दबंग जातियां हैं, जो दलितों को अपने सामने बैठने या खड़ा होने देना नहीं चाहतीं।

सामाजिक भेदभाव व आर्थिक असमानता नक्सलवाद की जनक

हिराकत व नफरत व भेदभाव से भरी वर्ण व्यवस्था के बनाने वालों को इतना भी अंदाजा नहीं रहा होगा कि उन की कुचालों से आने वाले सालों में देश व समाज पर किस तरह की

मुसीबत आ सकती है। आजादी के साथ देश के टुकड़े होना और आजादी के 20 साल बाद नक्सलवाद हिंदू वर्ण व्यवस्था की ही देन है।

चूंकि नक्सलियों की अगुआई माओवादी कर रहे हैं, इसलिए हिंदू ठेकेदारों का आरोप है कि नक्सली समस्या एक राजनीतिक समस्या है और इस में विदेशियों का हाथ है। इस समस्या को सैनिक बल से ही खत्म किया जाए। यह ठीक है कि नक्सलियों की अगुआई माओवादी कर रहे हैं, पर ध्यान देने की बात यह भी है कि सब के सब नक्सली तो आदिवासी, दलित, मजदूर, सीमांत किसान व दबे कुचले लोग हैं, जो कि भारत के ही नागरिक हैं। वास्तव में नक्सलवाद के बीज वर्ण व्यवस्था में छिपे हैं, सदियों से चले आ रहे सामाजिक व माली जुल्मों के खिलाफ विद्रोह की भावना ही इसका परिणाम है।

गुलाम बनाने की चाल

गरीब और अनपढ़ शख्स ही हर तरह से मजबूर होता है। मजबूर ही गुलाम बन सकता है, इसलिए सबसे पहले निचलों को गरीब और अनपढ़ रखने के लिए शासक हिंदुओं ने बाकायदा कानून बनाए। हिंदू शासकों ने इन कानूनों का सख्ती से पालन किया। घोर गरीबी, छुआछूत, जलालत, गुलामी और जुल्मों की छाया में दबा कुचला तबका सदियों तक वर्ण व्यवस्था की चक्की में पिसता रहा। मौका पाने पर हर शख्स जुल्म से छुटकारा पाने की कोशिश करता है। स्वतंत्रता के बाद इसी अन्याय व उत्पीड़न से छुटकारा पाने की मुहिम को नक्सलवाद की संज्ञा दी गई है।

नक्सलबाड़ी के बाद यह आंदोलन पश्चिम बंगाल के दूसरे इलाकों में भी फैल गया और लुटे पिटे लोग, खासकर आदिवासी व दलित इससे जुड़ते रहे। पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले में बिहारी मजदूरों की तादाद बहुत ज्यादा है। बिहार के दलित भी ऊंची जाति के भूपतियों से दुखी हैं। धीरे–धीरे बिहार में भी इस आंदोलन ने अपनी जड़ें जमा लीं। बिहार का उत्तरी क्षेत्र आदिवासी बाहुल है। जल, जंगल और जमीन ही इन के पेट के साधन हैं। यहां की जमीन में कोयला, लोहा, अभ्रक व दूसरे खनिजों के भंडार हैं। इसीलिए यहां की जमीन नेताओं और उनके दलालों ने हड़प ली। नतीजा यह हुआ कि नेता और सेठ मालामाल हो गए व आदिवासी बेदखल कर दिए गये।

बिहार में जोत की जमीन का बंटवारा भी पश्चिम बंगाल से उलटा है। पश्चिम बंगाल में जहां 84 फीसदी जमीन छोटे किसानों के पास है, वहीं बिहार में इतनी जमीन 'भूराबाल' यानी ऊंची जाति वालों के पास है। इस वजह से बिहार में गरीबी अमीरी की खाई बहुत चौड़ी हैं।

1973 के आसपास राजेन्द्र यादव व कल्याण मुखर्जी ने 'बिहार में नक्सलवादी आंदोलन' के नाम से एक सर्वे किया था, जिसमें दलितों व गरीबों की दशा की हकीकत दी गई। दबंग ऊंची जाति के अत्याचारों से दलितों एवं आदिवासियों के अलावा पिछड़े तबके के लोग भी पीड़ित थे। अगर इनके बच्चे ऊंची जमातों में पढ़ते, तो ऊंची जाति के लड़के उनको परेशान व बेइज्जत करते थे, इसलिए पिछड़े तबके के लोगों ने 'त्रिवेणी संघ' (अहीर, कुरमी, कोइरी) बना

लिया था। इस 'त्रिवेणी संघ' ने दलितों के प्रति हमदर्दी दिखाई। इधर नक्सलियों का बल पाकर दलित ठीक–ठीक मजदूरी मांगने लगे और शोषण व अत्याचारों की खिलाफत करने लगे।

गरीबों द्वारा उचित मजदूरी मांगने और उत्पीड़न का विरोध करने पर ऊंची जाति के मालिक इन्हें 'वर्ग शत्रु' और 'नक्सलवादी' कहने लगे। पुलिस व प्रशासन हमेशा ऊँची जाति वालों के मददगार रहे। किसी गांव में कोई वारदात होने पर पुलिस गरीबों को 'नक्सली' कह कर गोलियों से भून डालती और इन हत्याओं को 'मुठभेड़' का नाम दे दिया जाता।

गरीबों को 'सबक' सिखाने के लिए राजपूतों ने 'रणवीर सेना' व 'कुंअरसेना' और ब्राह्मणों ने 'ऋषि सेना' बना ली। इन सेनाओं के नौजवानों को हथियारों से लैस करने के लिए प्रशासन ने खुले हाथों लाइसेंस दिए, हथियारों की ट्रेनिंग देने के लिए शहरों और कस्बों में ट्रेनिंग सेन्टर खोले गए।

आरा जिले के सौनाटोला गांव में दलितों ने मजदूरी बढ़ाने के लिए आंदोलन किया। ऊँची जाति के मालिकों ने इसे नक्सली आंदोलन करार दे कर कई दलितों को फंसा दिया। उसी समय आरा की कलेक्टर कृष्णा सिंह, जो राजपूत थीं, का गांव में आना हुआ। कलेक्टर ने गांव के राजपूतों से कहा, ''आप लोगों के लिए शर्म की बात है कि राजपूत होकर भी आप मुट्ठीभर दलितों को शांत नहीं रख सकते।''

कलेक्टर का इशारा व मंतव्य दलितों को सबक सिखाने व उन्हें अपनी औकात में रखने का स्पष्ट संदेश देना था।

अगर बिहार में गरीब व दलितों के साथ मानवीय व्यवहार किया जाता, तो नक्सलवाद बिहार में नहीं पनपता। फिर बरास्ता बिहार, छत्तीसगढ़, आंध्रप्रदेश ओड़िसा, कर्नाटक व महाराष्ट्र में भी इस आंदोलन की आग न लगती। इन राज्यों में भी नक्सलियों का जोर उन इलाकों में ज्यादा है, जो आदिवासी व दलित बहुल हैं जौर जहां बहुत ज्यादा गरीबी है और इससे निजात पाने के न्यायिक व जनतांत्रिक रास्ते बन्द हो चुके हैं।

बिहार से यह आंदोलन छत्तीसगढ़ के बस्तर में पहुंचा। बस्तर के आदिवासी बहुत ज्यादा गरीब होने के साथ–साथ कारोबारियों के शोषण के भी शिकार हैं। आजादी से पहले तेंदुपत्ता, लाख, गोंद, अचार (चिरोंजी), महुआ आदि पर आदिवासियों का कब्जा था, लेकिन अब जंगल की सारी उपज पर दलालों और सेठों का कब्जा है। इन चीजों को यद्यपि आदिवासी इकट्ठा करते हैं, पर इन को नाममात्र की मजदूरी दी जाती है, जबकि आदिवासियों की जिंदगी जंगल और उस से मिलने वाली चीजों पर ही निर्भर हैं। रोजी छिन जाने के चलते आदिवासियों में गुस्सा लाजिमी है। नतीजतन, वे नक्सली बन कर हिंसक हो गए।

छत्तीसगढ़ में आदिवासियों की बर्बादी का इस से दर्दनाक उदाहरण और क्या हो सकता है कि सरकार 5 हजार एकड़ जमीन टाटा स्टील प्लांट के लिए दे रही है। इसके लिए तकरीबन 10 गांव खाली करने पड़ेंगे। क्या यह जमीन मुफ्त में दी जा रही होगी ?

माओवादियों से निबटने, आदिवासियों को माओवादियों के चंगुल से बचाने और उन को मुख्यधारा में लाने के लिए गांवों में 'सलवा जूडुम' (शांति समिति) बनाई गई है। लेकिन इस समिति के लोग नक्सली के नाम पर आदिवासियों को झूठे मुकदमों में फंसा रहे हैं और उनकी हत्याएं करा रहे हैं।

जो हालत बिहार, झारखंड और छत्तीसगढ़ की है, वही हालत आदिवासी बहुत आंध्रप्रदेश, ओड़िसा, कर्नाटक व महाराष्ट्र की है। पूरी आदिवासी पट्टी में सार्वजनिक संस्थानों को लूटा जा रहा है। खनिन माफिया बेखौफ आदिवासियों के हितों पर डाका डाल रहे हैं और अपना घर भर रहे हैं। ओड़िसा में जंगलात की जमीनों के पट्टे दलितों (आदिवासी दलित) को न दे कर खनिज माफिया, भूमाफिया व उद्योगपतियों को दिए जा रहे हैं। दरअसल, दलित आदिवासियों के दिलों में जलालत, उत्पीड़न, सामाजिक व आर्थिक असमानता की आग धधक रही है, नक्सलवाद इसी आग का लावा है। जिस दिन दलितों व आदिवासियों से अलगाव दूर हो जाएगा, सामाजिक व माली असमानता मिट जाएगी, आदिवासी, दलित व दूसरे बेरोजगार नौजवानों को टिकाऊ रोजगार मिल जाएगा, उन की बुनियादी जरूरतें पूरी जो जाएंगी और आदिवासी पट्टी की तरक्की होगी, उस दिन उन के दिलों में जल रही गुस्से की आग बुझ जाएगी। उस दिन नक्सलवादी आंदोलन अपने आप ठंडा पड़ जाएगा। ऐसा नहीं करने के कारण छत्तीसगढ़ के दंतेवाड़ा इलाके में माओवादियों ने आपरेशन ग्रीन हंट को सुर्ख कर दिया है। 6 अप्रैल, 2010 को नक्सलियों ने दंतेवाड़ा में मुकराना के जंगलों में हमला कर सुरक्षा बल के 76 जवानों को मौत के घाट उतार दिया। इस हमले में सीआरपीएफ यानी सेन्ट्रल रिजर्व पुलिस फोर्स की एक कंपनी ही साफ हो गई।

माओवादियों ने दंडकारण्य इलाके को जानबूझ कर चुना है। यह 50 हजार किलोमीटर में फैला घना जंगल है। छत्तीसगढ़, ओड़िसा, महाराष्ट्र और आंध्रप्रदेश राज्यों में यह जंगल फैला हुआ है। इन में से सभी राज्यों की राजधानी दंडकारण्य से सैकड़ों किलोमीटर दूर है। यहां माओवादियों के ट्रेनिंग सेन्टर हैं। छत्तीसगढ़ में दंतेवाड़ा, महाराष्ट्र में गढ़चिरौली व आंध्रप्रदेश में करीम नगर में इस तरह के माओवादी ठिकाने हैं। यह इतना घना जंगल है कि इस इलाके का अभी तक सही ढँग से सर्वे भी नहीं हो पाया है। जानकार बताते हैं कि यहां पिछले 16 सालों से छिपे तौर पर माओवादी की ही सरकार चल रही है, जिसे जनता की सरकार भी कहा जाता है। माओवादियों की अपनी अदालतें है, जो 'प्रजा कोर्ट' कहलाती हैं। कोई भी आदिवासी इन अदालतों के फैसले के खिलाफ नहीं जा सकता। सिक्योरिटी फोर्स वालों की सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि उन्हें आदिवासियों की तरफ से किसी तरह की कोई मदद नहीं मिलती है। इस की वजह है लोकल पुलिस का पक्षपात। पश्चिम में अबूझमाड़ से लेकर पूर्व में पूर्वी घाट तक फैले दंडकारण्य में पीपुल्स वार ग्रुप यानी पीडब्ल्यूजी ने सब से पहले काम शुरू किया था। यहां आदिवासियों पर जमकर अत्याचार होते थे। उनकी आवाज न तो पुलिस प्रशासन सुनता

था और न ही जनता के नुमाइंदे। तेंदु पत्ता के ठेकेदार से ले कर जंगल में लकड़ी काटने का ठेका लेने वाले आदिवासियों की मजदूरी से लेकर उन की औरतों तक से ज्यादती करते थे।

ऐसे में पीडब्ल्यूजी ने आदिवासियों का भरोसा जीता। तेंदु पत्ते के बंडल बनाने की मजदूरी बढ़ाई व उन पर जुल्म ढाने वाले ठेकेदारों को सजा दी।

अब देश के 220 जिलों पर माओवादी ग्रुपों का दबदबा है। साल 2004 में माओवादी कम्यूनिस्ट सेंटर यानी एमसीसी, पीपुल्स वार ग्रुप यानी पीडब्ल्यूजी, सीपीआई (एमएल) जैसे नक्सली संगठनों नें मिलकर एक नया संगठन बनाया था। इसका नाम रखा गया सीपीआई (माओवादी)

इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि आजादी से पूर्व जो गरीबों की स्थिति थी, अधिकतर लोगों की स्थिति आज भी वैसी ही हैं। ये कल भी भूखे–नंगे थे, आज भी भूखे–नंगे हैं, कल भी झुग्गी–झोपड़ी में रहते थे, आज भी झुग्गी–झोपड़ी में रहते हैं। आदिवासी कल भी जंगल में रहते थे, आज भी जंगल में रहते हैं। दलित कल भी अछूत थे, आज भी अछूत हैं, वंचित समाज के लोग कल भी अशिक्षित थे, आज भी अशिक्षित हैं, ये कल भी प्रभुत्व सम्पन्न जातियों/वर्गों के अधीन थे, ये आज भी उनके ही अधीन हैं। आज भी दूसरों के घरों में झाड़ू–पोछा लगाकर, उनके गंदे कपड़े धोकर, उनकी टट्टी अपने सिर पर ढोकर अपने एवं अपने परिवार का गुजर–बसर करते हैं। इन्हें आज भी नहीं मालूम कि देश स्वतंत्रत हुआ है, इन्हें नहीं मालूम कि देश का संविधान लागू हुआ है, जिसमें इनको न्याय, समता, स्वतंत्रता एवं बन्धुत्व और एक वोट का अधिकार दिया गया है। यह सब पूना पेक्ट के फलस्वरूप विकसित हुए दलित व आदिवासी नेतृत्व का ही परिणाम है।

बाबा साहेब अम्बेडकर ने पूना पेक्ट पर हस्ताक्षर करने के दूसरे दिन ही भांप लिया था कि दलितों व आदिवासियों के हक अधिकारों की रक्षा के लिए निर्भिक व जुझारू नेतृत्व इन वर्गों में से नहीं उभर पायेगा ऐसे जन प्रतिनिधियों के लिए बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने 'हिन्दुओं का औजार' शब्द का इस्तेमाल किया है। अनुसूचित जातियों के अधिकारों के सिलसिले में बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर इस 'औजार' शब्द का प्रयोग अक्सर करते रहे। 'औजार' शब्द के अलावा अन्य मिलते–जुलते शब्द जैसे 'हिन्दुओं के दलाल' या 'हिन्दुओं के पिछलग्गू' आदि का भी वे प्रयोग करते रहे। स्वतंत्रता–परवर्ती राजनैतिक अपरिहार्यताओं ने इन 'औजारों', दलालों' तथा 'पिछलग्गुओं' को बहुत अधिक बढ़ावा दिया।

(1) बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर ने इस दिशा में 25 अप्रैल 1948 को लखनऊ में शेड्यूल कास्ट्स फेडरेशन के सम्मेलन में पहला प्रयास किया। लखनऊ में दिए गए भाषण का निम्न उद्धरण इसकी पुष्टि करता है।

''तब मैं अनुसूचित जातियों और तथाकथित पिछड़े वर्गों के बीच एकता के प्रश्न की ओर मुड़ा। मैंने ऐसा पिछड़े वर्ग के नेताओं के अनुरोध पर किया जो उस समय सम्मेलन में मौजूद

थे। मैंने कहा कि यह विडम्बना ही है कि ये दोनों वर्ग, जिनकी जरूरतें एक जैसी थीं, आपस में नहीं जुड़े। कारण यह था कि पिछड़े वर्ग के लोग अनुसूचित जाति के लोगों से जुड़ना पसन्द नहीं करते थे क्योंकि वे डरते थे कि ऐसा जुड़ाव–साहचर्य उन्हें भी अनुसूचित जाति के स्तर पर नीचे ला गिराएगा।

''मैंने कहा कि मैं अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के बीच अन्तर्भोज और अन्तर्विवाह स्थापित करने के लिए उत्सुक नहीं हूं। वे भले ही पृथक सामाजिक अस्तित्व बनाये रख सकते हैं। ऐसा कोई कारण नहीं कि उन्हें अपना पिछड़ापन दूर करने के लिए राजनैतिक दल बनाने के उद्देश्य से आपस में एक–दूसरे से हाथ नहीं मिलाना चाहिए। मैंने ध्यान दिलाया कि कैसे अनुसूचित जातियों ने देश की राजनीति में अपनी भूमिका निभाते हुए अपनी हालत में सुधार किया है तो ऐसा कोई कारण नहीं कि पिछड़े वर्गों को वैसा क्यों नहीं करना चाहिए।''

''मैंने कहा कि अनुसूचित जातियों और पिछड़ा वर्ग देश की कुल जनसंख्या का बहुसंख्यक भाग बनाते हैं तो फिर कोई कारण नहीं कि उन्हें इस देश पर शासन क्यों नहीं करना चाहिए। राजनैतिक सत्ता, जो वयस्क मताधिकार के कारण आपकी अपनी ही है, पर कब्जा करने के लिए जो कुछ करना है वह यह है कि इसके लिए लोगों को संगठित किया जाए। लोग हिम्मत नहीं कर पाते हैं। क्योंकि वे इस विश्वास से अभिभूत हैं कि हमेशा कांग्रेसी सरकार ही चलती रहेगी। मैंने कहा कि यह सोचना निरर्थक है। लोकप्रिय लोकतंत्र में कोई भी सरकार स्थायी और शाश्वत नहीं होती है यहां तक कि दो दिग्गज कांग्रेसियों– पं. नेहरू और सरदार वल्लभ भाई पटेल द्वारा स्थापित सरकार भी नहीं। यदि आप संगठित हो जायें तो आप भी उस शासन पर कब्जा कर सकते हैं।''

(2) दूसरा गंभीर प्रयास 1951 ई. में किया गया था जब बाबा साहब अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों की एक संयुक्त पार्टी बनाने के लिए पिछड़े वर्ग के नेताओं के निमंत्रण पर पटना गए थे। किन्तु इस प्रयास को पं. नेहरू ने पिछड़े वर्ग के एक नेता को कुर्सी देकर और उनमें लालची लोगों पर 'कागज की गोलियों' (पेपर बुलेट्स) का प्रयोग करके निष्फल कर दिया था।

(3) तीसरा और अन्तिम सर्वाधिक गंभीर प्रयास न केवल अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों को एक झण्डे के नीचे लाने के लिए किया गया बल्कि उन सबको एक राजनैतिक पार्टी के नीचे एकत्रित करने की कोशिश की गई जिन्हें आज हम दलित–शोषित समाज कहते हैं। किन्तु दुर्भाग्य से इस सपने को साकार करने के लिए पहले ही वे 6 दिसम्बर 1956 ई. को हम सबको छोड़कर चल बसे।

कांसीरामजी के अनुसार

दलित–शोषित समाज नीचे गिरा पड़ा है और नीचे पड़ी स्थिति से समझौता किए हुए हैं। यह हमारे समाज का एक विशेष विशाल भाग है, इसलिए इतने विशाल भाग की पिछड़ी हालत देश को भी पिछड़ा बनाये हुए है। इस विशाल वर्ग को जागरूक बनाने के लिए इनके सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व शैक्षिक विकास के लिए जन चेतना लाया जाना आवश्यक है। देश के इस 85 प्रतिशत जनसमूह को यह समझाया जाये कि 15 प्रतिशत उच्च वर्ग देश की पूंजी, आर्थिक संसाधनों व शासन के सभी अंगों पर कब्जा बनाए हुए है यही आर्थिक व सामाजिक पिछड़ेपन का कारण है।

अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए बने नियमों, विनियमों, योजनाओं, परियोजनाओं, कार्यक्रमों और कानून को लागू न किये जाने को बिना जनसमर्थन के नहीं सुलझाया जा सकता है और जनसमर्थन संबंधित लोगों को सचेत, प्रबुद्ध और जागरूक बनाने के विशिष्ट उपाय किये बिना हासिल नहीं किया जा सकता है। मंडल आयोग की रिपोर्ट को लागू कराने में कम जनसमर्थन मिलने का एक कारण जनता को विश्वास में न लेना है।

मात्र यदा–कदा अथवा अवसर विशेष पर उन्हें सक्रिय बनाने से उन सभी समस्याओं का समाधान नहीं हो सकेगा। इसलिए उन्हें सदैव सक्रिय बनाये रखना होगा। कुल मिलाकर सामाजिक कार्रवाई नरम और शांतिपूर्ण किन्तु बिना रूके चलने वाली होनी चाहिए। यह एक रूप में अथवा दूसरे रूप में और किसी एक उद्देश्य के लिए हो सकती है। इसे सार्थक और प्रभावी बनाने के लिए कभी–कभी इसे उग्र भी बनाना पड़ेगा, किन्तु हिंसक नहीं। यह सब संघर्षों के प्रभार पर निर्भर होगा। चमचा युग पूना–पैक्ट की पैदाइश है। चमचा युग पर ध्यान केन्द्रित करने के लिए पूना–पैक्ट की 50वीं वर्षगांठ के अवसर पर उसकी भर्त्सना की गयी। पूना–पैक्ट के धिक्कार का एक कार्यक्रम 24 सितम्बर, 1982 ई. से 24 अक्टूबर 1982 ई. तक पूना से लेकर जालंधर तक नियोजित और संचालित किया गया। इस नियोजित सामाजिक कार्रवाई के परिणामस्वरूप आज लगभग पूरे भारत में सम्पूर्ण दलित–शोषित समाज चमचा युग के खिलाफ जागरूक हो गया। यह सोचा गया कि दलित–शोषित समाज का संसद में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है और जो कुछ प्रतिनिधित्व है वह भी चमचों के रूप में है जिनसे हमारा पूरी तरह और निष्ठापूर्वक प्रतिनधित्व करने की उम्मीद नहीं की जा सकती है। इस कमी को दूर करने के लिए दिल्ली में 25 दिसम्बर 1982 को जनसंसद (पीपुल्स पार्लियामेन्ट) का अभियान शुरू किया गया।

संसाधनों के मामले में दलित–शोषित समाज शासक जातियों से प्रतिस्पर्धा नहीं कर सकता है किन्तु उसे अपना जायज हक हासिल करने के लिए न केवल प्रतिस्पर्धा करनी पड़ेगी बल्कि शासक जातियों को सफलतापूर्वक परास्त भी करना पड़ेगा। इसके लिए संसाधनों की जरूरत पड़ेगी। इसलिए दलित शोषित समाज को छोटे–छोटे और सीमित साधनों को बड़े रूप में उपयोग करने का तरीका सीखना चाहिए। इस प्रकार वे अपने विरोधियों से बराबरी कर सकते हैं ।

यह भली भांति विदित है कि जब बाबा साहब उज्ज्वलल युग की दिशा में हमारा मार्गदर्शन कर रहे थे तो उन्होंने हमारे लिए उच्च शिक्षा के अवसरों की व्यवस्था करायी थी। उनका दृढ़ विश्वास था कि केवल उच्च शिक्षित नेता ही चमचा युग की चुनौती का सामना कर सकते हैं। 1973 ई. के आसपास कुछ उच्च शिक्षा प्राप्त कर्मचारियों ने स्वयं बीमारी के कारण को खोजा और बाद में उसका नाम रखा 'अभिजात्यों का विमुखीकरण।' रोग–निवारण के लिए बामसेफ का आधारभूत उद्देश्य है 'दलित शोषित समाज' को प्रतिदान।

कई टुकड़ों में विभाजित बामसेफ ने अभिजात्यों के विमुखीकरण या कटाव पर आंशिक काबू पाकर बीमारी को भी दूर कर लिया है। भविष्य में सक्षम नेतृत्व का स्थायी स्रोत्र बनाकर यह बीमारी को स्थायी रूप से दूर करने में सक्षम होगा। यह इसलिए संदेहपूर्ण है क्योंकि बामसेफ के नाम से जितने भी संगठन चल रहे हैं उनमें आन्तरिक लोकतन्त्र नहीं है। इनके मुखिया अहंकारी हैं। वे बाबा साहब के विचारों को तो आगे रखते हैं लेकिन सबने अपने–अपने अनुयायी बनाकर दलितों व पिछड़ों की आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक लड़ाई को एक मोर्चे पर लाने में रोड़े अटकाने का ही काम किया है।

अर्थहीन लोकतंत्र

मण्डल आयोग की रिपोर्ट के अनुसार पिछड़े वर्गों की संख्या देश की कुल जनसंख्या का 52 प्रतिशत है। जबकि ब्राह्मणों और क्षत्रियों की संख्या कुल जनसंख्या का लगभग 8 से 9 प्रतिशत है। किन्तु मौजूदा संसद में इन 8 से 9 प्रतिशत लोगों का प्रतिनिधित्व 52 प्रतिशत सांसदों द्वारा किया जाता है जबकि 52 प्रतिशत लोगों का प्रतिनिधित्व 8 से 9 प्रतिशत सांसद करते है। किसी संसदीय लोकतंत्र में ऐसा प्रतिनधित्व सब कुछ बदल डालता है। इस असंतुलन के कारण शक्ति–सत्ता का पूरा ढांचा पूरी तरह पिछड़े वर्गों के विरूद्ध झुका हुआ है।

दुनिया में हर जगह लोकतंत्र का अर्थ होता है बहुमत का शासन। किन्तु भारत में 85 प्रतिशत लोग 10 से 15 प्रतिशत उच्च जातियों द्वारा शासित है। इन 85 प्रतिशत लोगों में से 52 प्रतिशत पहचान (मान्यता) और अधिकार विहीन है। हमारे लोकतंत्र में वे कोई काम अपने बूते करने में जागरूकता के अभाव में असमर्थ हैं। ऐसा लगता है कि अल्पमत वालों ने बहुमत वालों के बीच चमचे बनाकर अपने अल्पमतीय शासन को मजबूत कर लिया है। इस प्रकार चमचा युग ने भारत में लोकतंत्र को अर्थहीन बना डाला।

बामसेफ प्रतिवर्ष 24 सितम्बर को जिस दिन 1932 में पूना पेक्ट हम पर थोपा गया था, उक्त दिवस को धिक्कार दिवस के रूप में मनाती है पूना पेक्ट के कारण देश में प्रतिनिधि के रूप में दलाल और भड़वे पैदा हो गए। इन दलाल एवं भड़वों के कारण आदिवासियों, दलितों एवं पिछड़ों के हक अधिकारों की जंग सक्षम नेतृत्व के अभाव में नहीं जीती जा सकी। देश के

85 प्रतिशत मूल निवासियों की सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक गुलामी से निजात पाने के लिए बहुजन समाज में से लोकतांत्रिक तरीके से उत्पन्न राजनैतिक नेतृत्त्व ही ब्राह्मणवाद का सफाया कर समता मूलक समाज की स्थापना का मार्ग प्रशस्त करने में सफल हो सकेगा ऐसा मेरा मानना है।

आज आजादी के 63 वर्ष गुजर जाने के बाद भी जातिवादी प्रदूषण और भी तीखा हुआ है। ब्राह्मणवादियों ने शोषण/उत्पीड़न के नए–नए औजार गढ़ लिये हैं, जिनका वो हर पल उपयोग करने में नहीं चूकते। आज पिछड़ों व दलितों के सामने महज कुछ अधिकार पाने का सवाल नहीं है, बल्कि आज की लड़ाई अस्तित्व रक्षा की लड़ाई है। आखिर कब तक हम गांधी के पूना पैक्ट में ही अपने लिए किसी एक कोने के लिए लड़ते रहेगें ? क्यों नहीं सम्पूर्ण घर की लड़ाई लड़ी जाए ? क्यों नहीं हम सम्पूर्ण व्यवस्था परिवर्तन की बात करते ? आखिर क्यों हमारी आत्मा हमें नहीं झकझोर रहीं ?

इतने लम्बे समय में भारतीय समाज व राजनीति ने कई करवटें ली हैं, लेकिन दलित पिछड़ा भारत का दुर्भाग्य है कि कानून बनाने के बावजूद समाज, संस्कृति, शिक्षा, साहित्य और मीडिया में अस्पृश्यता अतीत की वस्तु नहीं बनी। सामाजिक न्याय और समरस समाज का निर्माण बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर की अवधारणा थी, कम्युनल अवार्ड जिसका प्रतिनिधित्व कर रहा था, परन्तु पूना पैक्ट के माध्यम से गांधी जी इस अवधारणा को खंडित करने के अपने कुत्सित तुच्छ प्रयास में सफल हो गये।

बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर लोकतंत्र के कट्टर समर्थक थे, लोकतंत्र में ही बहुमत की आवाज को तरजीह मिलती है लेकिन राजनैतिक दलों पर उच्च वर्ग का कब्जा होने के कारण लोकतंत्रीय प्रक्रिया का गला घोंट दिया गया लोकतंत्र में जनप्रतिनिधि जनता के प्रति जवाबदेह होना चाहिए लेकिन राजनैतिक दलों में उनके संगठनों के अन्दर आन्तरिक लोकतंत्र नहीं होने से प्रतिनिधियों के चयन में मनोनयन की परम्परा ने स्थाई रूप से पांव जमा लिए मनोनयन जनप्रतिनिधि के चयन का सबसे निकृष्ट तरीका है। मनोनयन में योग्यता के स्थान पर दलीय निष्ठा व नेतृत्व के प्रति स्वामिभक्ति को तरजीह मिलती है। अधिनायकवाद व राजतंत्र में ही मनोनयन की परम्परा होती हैं क्योंकि अधिनायकवाद व राजतंत्र जनता के प्रति जवाबदेह नहीं होता है। मनोनयन की प्रक्रिया ब्राह्मणवाद का ब्रह्माशस्त्र है जिसके माध्यम से ब्राह्माणों ने लोकतंत्र को अपाहिज बना दिया। मनोनयन के इस महारोग ने स्वतंत्र रूप से उभरे दलित व पिछड़ा वर्ग नेतृत्व को भी ग्रसित कर लिया। 85 प्रतिशत बहुजन की सत्ता की बात करने वाले कांसीराम जी ने मनोनयन की ब्राह्मणवादी मानसिकता को न केवल विकसित किया वरन् अपने स्वयं के तैयार किये गये राजनैतिक दल ''बहुजन समाज पार्टी'' में आन्तरिक लोकतंत्र अंकुरित ही नहीं होने दिया उन्होंने भी मनोनयन के जरिये अपने आसपास स्वामीभक्त चमचे पैदा कर लिए जिसका खामियाजा उनको अपने अन्तिम दिनों में भुगतान पड़ा। लोकतंत्रीय वातावरण में

पैदा किए गये बहुजन आन्दोलन के बाद चयन के लोकतांत्रिक तरीके को क्यों भूले यह समझ से परे है। पिछड़ो में उभरे राजनैतिक नेतृत्ववाली समाजवादी पार्टी, जनता दल यूनाईटेड, डी. एम.के., श्री एच.डी. देव गोडा व लालू प्रसाद यादव की पार्टियां भी मनोनयन के रोग से बुरी तरह ग्रसित हैं परिवारवाद भी इन दलों पर हावी है, जिस लोकतंत्रीय शासन व्यवस्था की बुनियाद पर यह नेतृत्व उभरा वह लोकतंत्र की बुनियाद को मजबूत नहीं कर सका। रामविलास पासवान की जनशक्ति पार्टी भी मनोनयन की प्रथम शिकार है, नक्सलवाद व माओवाद का कारण भी लोकतंत्रीय व्यवस्था के असफल होने का परिणाम कहा जा सकता है।

दलितों आदिवासियों एवं पिछड़ों की गुलामी धर्म आधारित समाज व्यवस्था है। राजनीति अल्पकालीन धर्म है तथा धर्म दीर्घकालीन राजनीति है। इस देश के मूल निवासी बहुजन धर्म की दीर्घकालीन राजनीति के शिकार हैं जिसे नकारे बिना आर्थिक बदहाली, सांस्कृतिक गुलामी व शैक्षणिक एवं सामाजिक पिछड़ेपन से निजात संभव नहीं है।

विश्व के प्रमुख धर्म ईसाई, इस्लाम व बौद्ध के अनुयायियों की पहचान का आधार उनका अपना धर्म है तो फिर हिन्दू धर्म हमारी पहचान का आधार क्यों नहीं बन पाया? क्यों एक ओर तो एक हिन्दू ब्राह्मण वर्ण/जाति में जन्म लेने मात्र से श्रेष्ठता का तमगा लेकर और दूसरी ओर एक दलित/पिछड़ी जाति /वर्ण में जन्म लेने मात्र से नीच व हीनता की पहचान के साथ हिकारत का जीवन जिए? धर्म के नाम पर स्थापित जाति/वर्ण आधारित आरक्षण व्यवस्था के कारक तत्त्वों को निर्ममता से समूल नष्ट किए बिना जातिविहीन व समतामूलक समाज की बुनियाद सम्भव नहीं है। इसके लिए उपेक्षित व पीड़ित वर्ग को ही पहल करनी है।

****

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ऋगवेद, अथर्ववेद
2. हरिवंश पुराण
3. गौतम ऋषि का न्याय दर्शन
4. मनुस्मृति, महाभारत का शातिपर्व, भागवत गीता, अत्रि स्मृति, विदुर नीति व विष्णु पुराण।
5. बाबा साहब अम्बेडकर सम्पूर्ण वांगमय खण्ड– 11,12,13,14, 15, 16 व 17.
6. संविधान सभा खण्ड 3,4,7,9
7. भारत का संविधान
8. दलित उत्पीड़न की घटनाओं बाबत विभिन्न समाचार पत्रों, पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखन समाचार एंव स्वयं सेवी संगठनों द्वारा तैयार सर्वे रिपोर्टस

****

आर. के. आंकोदिया (1940) ने एम.ए., एल.एल.बी. की शिक्षा प्राप्त कर वकालत के व्यवसाय से सन् 1972 में बतौर राजस्थान मुंसिफ एवं न्यायिक मजिस्ट्रेट के पद से अपना कैरियर शुरू किया।

आप जिला एवं सेशन न्यायाधीश 2000 तक रहे व उसके बाद सदस्य, राजस्थान राज्य मानवाधिकार आयोग के पद पर 2000 से 2005 तक रहे। इसी बीच आप महासचिव, राजस्थान उच्चतर सेवा संघ वर्ष 1989-90, सदस्य सचिव, राजस्थान विधिक सेवा प्राधिकरण, (1996-99) भी रहे।

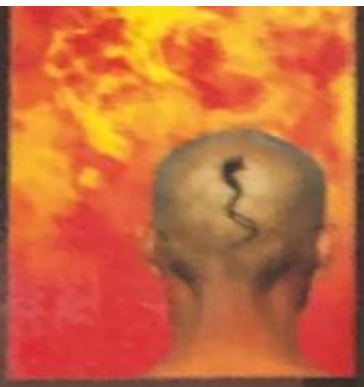

लेखक की अन्य रचनाएँ:

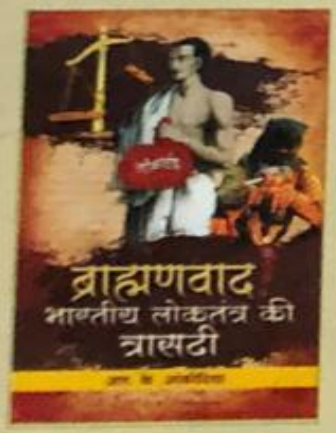

मूल्य: ₹ 40

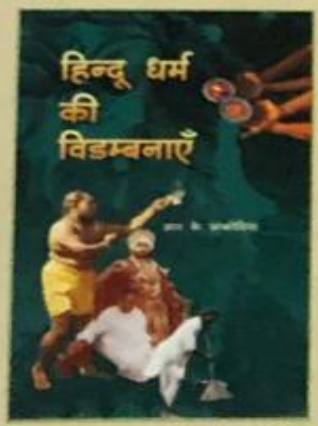

मूल्य: ₹ 125

आंकोदिया पब्लिकेशन्स

7, हनुमान नगर विस्तार, विष्णु मार्ग, सिरसी रोड,
जयपुर (राज.)
फोन : 0141-2356869

मूल्य: ₹ 150